सर्वश्रेष्ठ
रूसी और सोवियत
पुस्तकमाला

लेव तोलस्तोय

कहानियां

सर्वश्रेष्ठ रूसी और सोवियत पुस्तकमाला

लेव तोलस्तोय

कहानियां

प्रगति प्रकाशन
मास्को

सम्पादक—मदनलाल 'मधु'

अनुक्रम

तोलस्तोय के बारे में कुछ शब्द

"...हमारे सामाजिक चिन्तन में तोलस्तोय ने जो भूमिका अदा की है, उस पर रूसी लेखकों ने अनेक बार ज़ोर दिया है। तोलस्तोय की मौत के दस साल पहले चेख़ोव ने याल्ता से लिखा था: '...तोलस्तोय की मौत की कल्पना कर कांप उठता हूं। अगर वे न रहे, तो मेरे जीवन में बहुत बड़ी खाई पैदा हो जायेगी... उनके बिना हमारा साहित्य चरवाहे के बिना रेवड़ जैसा हो जायेगा...' इससे बीस साल पहले इवान तुर्गेनेव और तोलस्तोय की मौत के दो साल पहले ऐसे ही विचार अलेक्सान्द्र ब्लोक ने व्यक्त किये थे। तोलस्तोय की मृत्यु से केवल अग्रणी बुद्धिजीवियों ने ही यह अनुभव नहीं किया था कि वे यतीम या नेताहीन हो गये हैं, बल्कि रूस के जनसाधारण को भी इस भारी क्षति की ऐसी ही अनुभूति हुई थी... यह सही है कि उस ज़माने की परिस्थितियों में बहुत विख्यात साहित्यिक कृतियां भी बहुत लम्बे और टेढ़े-मेढ़े रास्तों से जनसाधारण तक पहुंचती थीं। जीवित लेखक के बारे में जनसाधारण अक्सर अपनी धारणा उसके सार्वजनिक आचरण-सम्बन्धी अफ़वाहों के आधार पर ही बनाते थे। मगर तोलस्तोय ने अपना सारा जीवन किसी तरह के दुराव-छिपाव के बिना खुले तौर पर लोगों के सामने बिताया, कभी अपने नाम से तो कभी ओलेनिन, लेविन या निख़्लूदोव उपनामों से अपनी आत्मा की गहराइयों तक को उनके सामने खोलकर रख दिया। वे हमेशा हवा के रुख़ और प्रचलित धारा के प्रतिकूल चले, उन्होंने अनुचित दौलत, काहिली और अत्याचार तथा जराग्रस्त सभ्यता के संचित भयंकर रूपों के विरुद्ध हमेशा डटकर संघर्ष किया। चूंकि तोलस्तोय ने काफ़ी लम्बी उम्र पायी, इसलिए जनसाधारण में से अग्रणी लोग इस

विचार से सान्त्वना पाने के अभ्यस्त हो गये थे कि कहीं निकट ही एक ऐसा दिल धड़कता है, जिसे किसी भी क़ीमत पर ख़रीदा नहीं जा सकता, सजग आंखें उनके भयंकर श्रम और अभावों को देख रही हैं, सतर्क कान उनकी आहों-कराहों और गीतों को सुन रहे हैं और समय पाकर यह सब कुछ भविष्य की नयी दुनिया के सर्वसामान्य कोष में खरा सोना बनकर संचित हो जायेगा।

"युग के विचार और प्रेरणाएं, आशाएं तथा विजित सन्देह ही साहित्य का स्वर्ण-कोष होते हैं और उनकी जीवनशक्ति सर्वथा इस बात पर निर्भर करती है कि उनमें समकालीनों के ऐतिहासिक अनुभव को कहां तक स्थान दिया गया है... संक्षेप में, ऐसा साहित्यिक स्वर्ण समय की कसौटी पर खरा उतरता है। तोलस्तोय की कृतियां उन इनी-गिनी रचनाओं में से हैं, जिन्हें समय का दीमक नष्ट नहीं कर पाता...

"पुश्किन की भांति, जिन्होंने हमें रूसी भाषा के जादुई संगीत का रसास्वादन कराया, तोलस्तोय ने उसी भाषा के माध्यम से रूसियों के मनोगत कार्यों, उनके सुख-दुःखों, इतना ही नहीं, नेपोलियन के प्रभुत्व में आये हुए बहुभाषी यूरोप के साथ उनकी अत्यधिक वीरतापूर्ण लड़ाई को भी अनुपम अभिव्यक्ति दी और ऐतिहासिक उदाहरणों के आधार पर न्यायपूर्ण ध्येय के संघर्ष के लिए उनके उस वीरतापूर्ण कायाकल्प को स्पष्ट किया, जो राष्ट्रों और अलग अलग शान्तिपूर्ण आत्माओं में हुआ है और जिसे अब तक अनेक बार परखा जा चुका है। 'युद्ध और शान्ति', 'कज़्ज़ाक', 'आन्ना कारेनिना' और 'पुनर्जन्म' के स्रष्टा को सभी कुछ स्पष्ट रूप में दिखाई देता है—दहाड़ता हुआ तूफ़ान भी और स्पर्शहीन मंद वायु भी, ऐसी विराट चीज़ें भी, जो साधारण मानवीय दृष्टि के घेरे में समा नहीं पातीं और ऐसी सूक्ष्म चीज़ें भी, जो आम तौर पर नज़र से चूक जाती हैं, मानवीय व्यक्तित्व के शिखर पर पहुंचे हुए सूर्य की गरिमा और उसकी सन्ध्या भी। इतना ही नहीं, तोलस्तोय के असंगतिपूर्ण और जटिल जीवन ने उन्हें मानवीय जीवन के सर्वथा अप्रत्याशित उतार-चढ़ावों को सामने लाने में मदद दी और निश्चय ही रूसो के बाद कोई भी लेखक तोलस्तोय की तरह उसे इतनी हद तक अपने पाठकों के सामने खोलकर नहीं रख सका। तोलस्तोय की मृत्यु के आधी सदी से अधिक समय के बाद आज किसी तरह के प्रकाश की सहायता के बिना ही न केवल उनकी

उपलब्धियों का विराट रूप, बल्कि उनका ऊहापोह, उनकी अतिशयता और उनकी भूलें भी, जो कि सत्य की खोज करने वाले व्यक्ति के लिये अनिवार्य होती हैं, क्योंकि सत्य अभी तक तो अपने शुद्ध रूप में किसी को नहीं मिला, हमारे सामने बिल्कुल स्पष्ट है।

"तोलस्तोय का व्यक्तित्व प्रमुखतम साहित्यिक हस्तियों के चौखटे में भी समा नहीं पाता। बेलीन्स्की ने पुश्किन के बारे में कहा था कि साधारण गद्य में उनकी चर्चा करते हुए शर्म आती है। इसी तरह हमारे समय में तोलस्तोय का नाम समारोही शब्दों के सुन्दर चौखटे की मांग करता है। संस्कृति के प्राचीन काल से अब तक के महानतम लेखकों में, जिनकी संख्या मुश्किल से एक दर्जन होगी, यह नाम भी शामिल है। तोलस्तोय की साधना वास्तव में ही हरकुलीस की साधना थी। प्रगति के राजमार्ग पर वे उस पर्वत के समान हैं, जिसके शिखर से मानवीय चिन्तन की सदियों पुरानी राहों और पगडंडियों की झलक मिल सकती है।"

लेव निकोलायेविच तोलस्तोय के सम्बन्ध मे उक्त अंश लेओनीद लेओनोव के उस भाषण से उद्धृत किया गया है, जो महान लेखक की पचासवी पुण्यतिथि के अवसर पर १६ नवम्बर १९६० को उन्होंने बोल्शोई थियेटर मे आयोजित एक सभा में दिया। तोलस्तोय के जीवन और कृतित्व में अधिक गहरी रुचि रखनेवाले प्रबुद्ध पाठक मास्को के प्रगति प्रकाशन द्वारा अंग्रेजी में प्रकाशित "Reminiscences of Lev Tolstoi by His Contemporaries" पुस्तक देखने की कृपा करें।

सम्पादक

काउंटेस मा० नि० तोलस्तोय् को समर्पित

उन्नीसवीं शताब्दी के शुरू के दिनों की बात है। उन दिनों न तो थीं रेलें और न ही बड़ी बड़ी सड़कें। न तो रोशनी के गैस ही जला करते थे और न स्टेयरिन बत्तियां। गुदगुदे, कमानीदार कोच भी नहीं थे और न ही बिना वार्निश का फ़र्नीचर। जिस तरह के निराश युवक आंखों पर चश्मे लगाये आजकल घूमते नजर आते हैं, वैसे उन दिनों नहीं हुआ करते थे। उदारवादी महिलाएं और इतनी सुन्दर रखेलियां भी नहीं थीं, जो आजकल जाने कहां से इतनी संख्या में फूट पड़ी हैं। बड़ा सीधा-सादा ज़माना था। किसी को मास्को से सेंट-पीटर्सबर्ग जाना होता तो ढेरों पकी हुई चीजें घोड़ा-गाड़ी या छकड़े में अपने साथ ले चलता। पूरे आठ दिन गर्द भरी, कीच भरी सड़कों पर हिचकोले खाने पड़ते थे। किसी चीज पर मन यदि जमता था तो कटलेट या गर्मागर्म रस्क पर, या फिर वल्दाई गाड़ियों की घण्टियों की टुनटुन पर। उन दिनों शरद की लम्बी लम्बी संध्याओं में घरों में चर्बी की बत्तियां जला करती थीं और उन्हीं की रोशनी में बीस बीस, तीस तीस आदमियों के कुटुम्ब मिल-बैठा करते थे। नाचघरों के शमादानों में मोम और स्पर्मसिटी की बत्तियां जला करती थीं। फ़र्नीचर बड़े क़रीने से रखा जाता था। हमारे बाप-दादों का यौवन आंकते समय लोग केवल यही नहीं देखा करते थे कि उनके चेहरों पर झुर्रियां आयी हैं या नहीं, या बाल पके हैं या नहीं, बल्कि यह भी कि वे औरतों के लिए कितने द्वन्द्व युद्ध लड़ चुके हैं। अगर किसी लड़की का रूमाल—जाने या अनजाने में—

---

*हुस्सार—एक विशेष घुड़सैनिक।

हॉल में गिर जाता तो युवक फ़ौरन कमरे के दूसरे छोर से भागकर आते और रूमाल उठा देते। हमारी माताएं चौड़ी आस्तीनों और ऊंची कमर वाले गाउन पहना करती थीं, और गृहस्थी की सभी उलझनें पर्चियां डालकर सुलझा लिया करती थीं। रखेलियां दिन की रोशनी में बाहर निकलने से घबराती थीं। वह ज़माना था फ़्री मेसन संस्थाओं का, मार्तीनवादियों, तुगेन्दबुद, मिलोरादोविच, दवीदोव और पुश्किन का। उन्हीं दिनों की बात है कि क० नामक नगर में ज़मींदारों की एक सभा हुई। यह नगर प्रान्त का केन्द्र था और हाल ही में वहां कुलीन वर्ग के प्रतिनिधियों का चुनाव हुआ था।

(१)

"अगर कहीं भी जगह नहीं है, तो भी कोई चिंता नहीं, मैं अपना सामान हॉल में ही टिका लूंगा," एक जवान अफ़सर ने क० नगर के सबसे बढ़िया होटल में क़दम रखते हुए कहा। युवक ने बड़ा ओवरकोट पहन रखा था और सिर पर हुस्सारों की टोपी थी। वह अभी अभी स्लेज से उतरा था।

"बहुत बड़ी सभा हो रही है, महामहिम, इस जैसी पहले कभी नहीं देखी," नौकर ने कहा। इससे पहले ही अफ़सर के अर्दली से पता लगा लिया था कि अफ़सर काउंट तुर्बीन है। इसी कारण वह उसे महामहिम कहकर सम्बोधित कर रहा था। "अफ़्रेमोवो ज़मींदारी की मालकिन ने वादा किया है, हुज़ूर, कि आज शाम वह अपनी लड़कियों को लेकर चली जायेगी। अगर हुज़ूर चाहें तो उनके ११ नम्बर कमरे में ठहर सकते हैं," उसने कहा और बरामदे में काउन्ट के आगे आगे दबे पांव जाने लगा। वह रह-रहकर पीछे भी देखता जाता था।

हॉल में दीवार पर ज़ार एलेक्सान्द्र की एक पुरानी आदमक़द तस्वीर टंगी थी, जिसके रंग फीके पड़ चुके थे। उसके नीचे, एक छोटी सी मेज़ के आसपास कुछ लोग बैठे शैम्पेन पी रहे थे। प्रत्यक्षतः वे इसी शहर के कुलीनों में से थे। उन्हीं के नज़दीक दूसरी मेज़ पर सौदागरों की एक टोली जमी थी। सभी ने गहरे नीले रंग के चोग़े पहन रखे थे।

काउंट ने हॉल में क़दम रखते ही अपने कुत्ते को पुकारा। कुत्ता बड़े आकार और भूरे रंग का था, नाम ब्लूहर था। फिर काउंट ने झटके से ओवरकोट उतार फेंका। ओवरकोट के कालर पर अभी भी बर्फ़ जमी थी। नीचे वह साटिन का नीला वर्दीकोट पहने था। उसने वोद्का का आर्डर दिया और मेज पर बैठते ही वहां बैठे लोगों के साथ गप्प-शप्प करने लगा। वे लोग उसके ख़ूबसूरत डील-डौल और बेलाग चेहरे को देखते ही रीझ उठे और उन्होंने उसके सामने शैम्पेन का गिलास भरकर रख दिया। काउंट ने पहले वोद्का का एक गिलास चढ़ाया, फिर एक बोतल शैम्पेन अपने नये दोस्तों के लिए मंगवायी। ऐन उसी वक़्त बर्फ़-गाड़ी का कोचवान रंग-पानी के लिए बख़्शीश मांगने अन्दर आया।

"साशा!" काउंट ने पुकारकर कहा, "इसे कुछ पैसे दे दो!"

कोचवान साशा के साथ बाहर चला गया, मगर फ़ौरन ही लौट आया और अपना हाथ आगे बढ़ाकर हथेली पर रखे पैसे दिखाने लगा।

"यह देखिये, हुज़ूर! मैंने हुज़ूर की ख़ातिर कितनी जोखिम उठायी। हुज़ूर ने आधा रूबल देने का वादा किया था, मगर यहां केवल एक चौथाई मिल रहा है।"

"साशा! इसे एक रूबल दे दो!"

साशा चिढ़ गया। कोचवान के बूटों की तरफ़ देखते हुए उसने अपनी भारी आवाज में कहा:

"इसके लिए यही बहुत है। मेरे पास और पैसे भी तो नहीं हैं।"

काउंट ने अपने बटुए में से पांच पांच रूबल के दो नोट निकाले (बटुए में यही कुछ बच रहा था) और एक नोट कोचवान की ओर बढ़ा दिया। कोचवान ने काउंट का हाथ चूमा और नोट लेकर बाहर चला गया।

"यह ख़ूब रही!" काउंट ने कहा। "बस, अब यही पांच रूबल मेरे पास बच रहे हैं!"

"इसे कहते हैं असली हुस्सार!" एक आदमी ने मुस्कराकर कहा। उसकी मूंछें, उसकी आवाज और लचकदार मजबूत टांगें इस बात की गवाही दे रही थीं कि वह घुड़सेना का अवकाश-प्राप्त अफ़सर है। "क्या बहुत दिन तक यहां रुकने का इरादा है, काउंट?"

"मेरा बस चले तो एक दिन भी न रुकूं। मगर क्या करूं, मुझे

पैसों का इन्तज़ाम करना है। इधर इस मनहूस होटल में रहने के लिए कमरा तक नहीं मिल रहा।"

"मेरा कमरा हाज़िर है, काउंट, आप मेरे कमरे में चले आइये," घुड़सेना के अफ़सर ने कहा, "मैं ७ नम्बर के कमरे में ठहरा हुआ हूं। अगर आपको मेरे साथ रहने में कोई एतराज़ न हो तो मैं तो कहूंगा कि यहां कम से कम तीन दिन तक ज़रूर ठहरिये। आज रात कुलीनों के मार्शल के यहां नाच-गाने की महफ़िल है। वे आपको भी बुलाकर बहुत ख़ुश होंगे।"

"हां, हां, काउंट, ज़रूर रुक जाइये," एक ख़ूबसूरत युवक बोला। "आख़िर इतनी जल्दी भी क्या है? ये चुनाव तीन साल के बाद कहीं एक बार होते हैं। यहां की तितलियों पर तो नज़र डाल लीजिये।"

"साशा! मेरे कपड़े निकालो। मैं पहले हमाम जाऊंगा," काउंट ने उठते हुए कहा, "उसके बाद देखा जायेगा – मुमकिन है कि मैं सचमुच ही मार्शल की महफ़िल में जा पहुंचूं।"

"उसने एक बैरे को बुलाया और उसके कान में धीमे से कुछ कहा। बैरा हंसने लगा और बोला, "हर चीज़ मिल सकती है, सरकार!" और कहकर बाहर चला गया।

"तो मैं उनसे कह दूंगा कि मेरा सामान तुम्हारे कमरे में रख दें," काउंट ने दरवाज़े से बाहर जाते हुए कहा।

"बड़े शौक से," घुड़सेना का अफ़सर बोला। फिर लपककर दरवाज़े के पास जा पहुंचा: "कमरा नम्बर सात! भूलियेगा नहीं!"

काउंट के क़दमों की आवाज़ दूर चली गयी। घुड़सेना का अफ़सर मेज़ के पास लौट आया। उसने अपनी कुर्सी सरकारी अफ़सर के पास खिसका ली और उसकी आंखों में आंखें डालकर मुस्कराते हुए बोला:

"यही वह आदमी है!"

"सच?"

"हां वही, मैं कह जो रहा हूं। यही हुस्सार अपने द्वन्द्व-युद्धों के लिए मशहूर है। हर कोई इसे जानता है। इसका नाम तुर्बीन है। मैं शर्त लगाकर कह सकता हूं कि उसने मुझे पहचान लिया था – कोई वजह नहीं कि न पहचाना हो। हम दोनों एक बार, लेबेद्यान में, तीन हफ़्ते रंग-रलियां मनाते रहे थे। उन दिनों मैं वहां अपनी पलटन के लिए नये घोड़े ख़रीदने गया

हुआ था। वहां हम दोनों के कारण ही एक घटना घटी थी, इसीलिए वह जान-बूझकर आज मुझे नहीं पहचान रहा था। आदमी बढ़िया है, क्यों, मानते हो न?"

"बेशक, ख़ूब आदमी है। चाल-ढाल ही निराली है! इसे देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि यह उस तरह का आदमी होगा," सुन्दर युवक बोला। "कितनी जल्दी हिल-मिल गया है। मेरे ख़्याल में उम्र भी २५ से ज्यादा नहीं होगी?"

"नहीं, इससे ज्यादा होगी, सिर्फ़ देखने में कमउम्र लगता है। मगर इसे अच्छी तरह जानने पर ही इसके गुण नज़र आते हैं। जानते हो मैडम मिगुनोवा को कौन भगा ले गया था? यही आदमी। सात्लिन की हत्या किसने की थी? मतनेव को दोनों टांगों से पकड़कर खिड़की के बाहर किसने उठा फेंका था? और राजकुमार नेस्तेरोव से ३ लाख रूबल किसने जीते थे? तुम तो अन्दाज़ा भी नहीं लगा सकते कि यह कैसी शाहाना तबीयत का आदमी है। जुआ खेलता है, द्वन्द्व-युद्ध लड़ता है, औरतों को फुसलाता है। इसने असली हुस्सार का दिल पाया है, असली हुस्सार का। लोग हम लोगों की निन्दा तो करते हैं, लेकिन वे एक सच्चे हुस्सार के गुण नहीं देख सकते! वाह, वे भी क्या दिन थे!"

और घुड़सेना का अफ़सर तरह तरह की रंग-रलियों के क़िस्से सुनाने लगा। उन सभी में वह उन दिनों लेबेद्यान में काउंट के साथ शामिल हुआ था। पर सच तो यह है कि ये रंग-रलियां न कभी हुई थीं और न हो सकती थीं। एक तो इसलिए, कि इससे पहले उसने काउंट को देखा तक नहीं था। काउंट के फ़ौज में जाने के दो बरस पहले ही यह फ़ौज से रिटायर होकर चला आया था। दूसरे, यह शख़्स कभी घुड़सेना का अफ़सर भी नहीं रहा था। यह केवल बेलेव्स्की पलटन में चार साल तक सब से छोटा युंकर भर रहा था। जब इसे एन्साइन के पद पर नियुक्त किया गया तो यह फ़ौज में से इस्तीफ़ा देकर चला आया। हां, दस बरस पहले, विरासत मिलने पर यह एक बार लेबेद्यान ज़रूर गया था, वहां घुड़सेना के कुछेक अफ़सरों के साथ इसने सात सौ रूबल भी लुटाये थे। घुड़सेना में भरती होना चाहता था। इसलिए इसने अपने लिए एक उल्हन* वर्दी भी बनवायी थी, जिसकी

*उल्हन – एक विशेष घुड़सैनिक।

आस्तीनों पर नारंगी कफ़ थे। घुड़सेना में जाने की इसके मन में बड़ी ललक थी। तीन हफ़्ते इसने घुड़सेना के अफ़सरों के साथ लेवेद्यान में बिताये। उन्हीं दिनों को यह अपने जीवन का सबसे सुखमय काल मानता रहा है। कल्पना ही कल्पना में यह ललक पूरी भी हो गयी और इसके दिमाग़ में एक स्मृति भी छोड़ गयी, यहां तक कि स्वयं उसे पक्का विश्वास होने लगा कि वह घुड़सेना में काम कर चुका है। इस विश्वास के बावजूद उसकी शिष्टता तथा ईमानदारी में कोई फ़र्क़ नहीं आया और वह सचमुच एक भला आदमी बना रहा।

"हां, हम जैसे लोगों को वही आदमी समझ सकते हैं, जो घुड़सेना में रह चुके हों।" वह कुर्सी के अग़ल-बग़ल टांगें फैलाकर बैठ गया और ठुड्डी को आगे की ओर बढ़ाकर भारी आवाज़ में बोला, "ज़माना था, जब मैं घोड़े पर सवार अपने दल की अगुआई किया करता था। वह घोड़ा नहीं, कम्बख़्त शैतान था। घोड़े पर सवार होते ही मेरे अन्दर भी बला की फुर्ती आ जाती। सेना का कमाण्डर निरीक्षण पर आता है, कहता है: 'लेफ़्टिनेंट, यह काम तुम्हारे बिना कोई नहीं कर सकता। मेहरबानी करो, परेड में अपने दल की कमान सम्भालो।' 'जी साहिब,' मैं कहता हूं, और बस, कहने की देर है कि काम हुआ समझो। मैं घोड़े का मुंह घुमाता हूं और मुच्छल सैनिकों को हुक्म देता हूं। बस, यह गये, वह गये! वाह, क्या सुनाऊं तुम्हें, वे भी क्या दिन थे!"

काउंट हमाम से लौट आया। उसका चेहरा लाल हो उठा था और बाल पानी से तर थे। वह सीधे सात नम्बर के कमरे में चला गया। वहां घुड़सेना का अफ़सर ड्रेसिंग-गाउन पहने, मुंह में पाइप दबाये चुपचाप बैठा था और अपने इस आकस्मिक सौभाग्य पर मन ही मन ख़ुश हो रहा था कि विख्यात तुर्बीन उसके साथ उसी के कमरे में रहेगा। पर उसकी ख़ुशी में डर का भी हल्का सा पुट था। "अगर इसे सहसा कोई सनक सवार हो जाये और यह मेरे सारे कपड़े उतरवा दे और नंगा करके मुझे शहर के बाहर ले जाये और वहां बर्फ़ में ज़िन्दा गाड़ दे, या मेरे सारे शरीर पर कोलतार पोत दे तो क्या होगा? या केवल... मगर नहीं, यह ऐसी हरकत कभी नहीं करेगा, अपने फ़ौजी भाई के साथ ऐसा बर्ताव कभी नहीं करेगा," और इस विचार से उसके मन को ढाढ़स मिला।

"साशा! कुत्ते को खाना खिलाओ!" काउंट ने पुकारकर कहा।

साशा दरवाज़े पर नमूदार हुआ। उसने वोद्का का एक गिलास पहले ही चढ़ा रखा था और काफ़ी सरूर में था।

"अच्छा! तू अभी से धुत्त हो गया है, शैतान! थोड़ी देर भी इन्तज़ार नहीं कर सकता था! जाओ और ब्लूहर को खाना खिलाओ!"

"खाये बिना यह मरेगा नहीं, देखिये तो कितना चिकना हो रहा है," साशा ने कुत्ते को थपथपाते हुए कहा।

"बकबक नहीं करो! जाओ, इसे खाना खिलाओ।"

"आपको भी बस अपने कुत्ते की ही फ़िक्र रहती है। अगर नौकर एक गिलास पी लेता है तो आप उस पर बरसने लगते हैं।"

"ख़बरदार, मैं मुंह तोड़ दूंगा!" काऊंट ने ऐसी आवाज़ में चिल्लाकर कहा कि खिड़कियों के शीशे हिल उठे और घुड़सेना का अफ़सर भी सहम गया।

"मुझसे भी पूछा होता कि साशा, क्या तुमने कुछ खाया है। लीजिये, अगर आपको इन्सान से कुत्ता ही ज़्यादा अज़ीज़ है तो तोड़ दीजिये मेरा मुंह, लगाइये मेरे मुंह पर..." साशा ने कहा। मुंह से ये शब्द निकलने की देर थी कि उसकी नाक पर ऐसा घूंसा पड़ा कि उसका सिर दीवार से जा टकराया और वह नीचे गिर पड़ा। दूसरे क्षण वह उठा और नाक पर हाथ रखे, भागता हुआ कमरे में से निकल गया और बरामदे में जाकर एक सन्दूक पर लेट गया।

"मालिक ने मेरे दांत तोड़ डाले हैं," एक हाथ से अपनी नाक से बहता ख़ून पोंछते और दूसरे हाथ से ब्लूहर की पीठ खुजलाते हुए साशा बड़बड़ाया। ब्लूहर अपना बदन चाट रहा था। "देखते हो, ब्लूहर, मालिक ने मेरे दांत तोड़ डाले हैं, पर कोई बात नहीं, फिर भी वह मेरा काउंट है, मैं उसकी ख़ातिर आग-पानी में कूदने के लिए तैयार हूं। मैं सच कहता हूं, ब्लूहर, क्योंकि वह मेरा काउंट है। तुम्हें भूख लगी है, क्या?"

कुछ देर तक वह वहां लेटा रहा, फिर उठा, कुत्ते को खिलाया और काउंट की ख़िदमत करने, उसके लिए चाय पहुंचाने चल दिया। उस वक़्त तक उसका नशा लगभग उतर चुका था।

"इसे मैं अपना अपमान समझूंगा," बड़े दयनीय स्वर में घुड़सेना का अफ़सर काउंट से कह रहा था। काउंट अफ़सर के बिस्तर पर लेटा अपने पांव पलंग के चौखटे पर फैलाये हुए था। "आख़िर मैं भी एक पुराना

सिपाही हूं, आपका साथी हूं। बजाय इसके कि आप किसी और से पैसे लें, मैं ख़ुद बड़े शौक़ से २०० रूबल आपकी नज़र कर दूंगा। इस वक़्त मेरे पास ज्यादा रक़म नहीं है – केवल एक सौ रूबल हैं – पर मैं आज ही बाकी रकम का इन्तज़ाम करूंगा। अगर आपने किसी और से लिये तो मैं ज़रूर इसे अपना अपमान समझूंगा, काउंट।"

"शुक्रिया, दोस्त," उसकी पीठ थपथपाते हुए काउंट ने कहा। काउंट ने उसी क्षण समझ लिया कि आगे चलकर दोनों के बीच किस तरह के सम्बन्ध पनपेंगे। "शुक्रिया। अगर यह बात है तो हम नाच में चलेंगे। हां, पर इस वक़्त क्या करें? कुछ इस शहर की सुनाओ तो? कोई सुन्दरियां? कोई छैले? कोई ताशबाज़?"

घुड़सेना के अफसर ने बताया कि सुन्दरियों का एक झुंड का झुंड नाच पर पहुंचेगा। शहर का सब से बड़ा छैला पुलिस-कप्तान कोल्कोव है – हाल ही में उसका चुनाव हुआ है, पर फिर भी उसमें वह दिलेरी, वह मस्ती नहीं, जो एक हुस्सार में होती है, पर यों भला आदमी है। जब से चुनाव शुरू हुए हैं, यहां ख़ूब महफ़िल जमती है, इल्यूश्का की जिप्सी संगीत-मण्डली के सहगान होते हैं। स्तेशा अकेले गाती है। आज सब लोग सोच रहे हैं कि नाच के बाद जिप्सियों का गाना सुनें।

"और जुआ भी काफी चलता है," वह कहता गया। "लुख़नोव यहां आया हुआ है। बड़ा धनी आदमी है, सारा वक़्त जुआ खेलता है। यहां एक लड़का इल्यीन है, आठ नम्बर के कमरे में रहता है, उल्हन कोरनेट है, धड़ाधड़ हार रहा है। वे इस वक्त भी खेल रहे होंगे। हर शाम खेलते हैं। और काउंट, आप मानेंगे नहीं कि यह इल्यीन कितना भलामानस है, इसका दिल छोटा नहीं, वह अपनी क़मीज़ तक उतारकर दे देगा।"

"तो चलो, उससे मिलें। देखें तो यहां कौन लोग आये हैं," काउंट ने कहा।

"चलिये, चलिये। आपसे मिलकर वे सब बेहद ख़ुश होंगे।"

(२)

उल्हन कोरनेट इल्यीन अभी अभी जागा था। पिछली शाम उसने आठ बजे जुआ खेलना शुरू किया और सुबह ११ बजे तक बराबर १५ घण्टे

थी, यह ख़ुद उसे भी मालूम न था। उसके पास निजी तीन हज़ार रूबल के अलावा पलटन के ख़ज़ाने के पन्द्रह हज़ार रूबल और भी थे, और ये दोनों रक़में कब की एक दूसरी में मिल चुकी थीं। अब वह बकाया रक़म गिनने से घबरा रहा था कि कहीं उसका यह डर ठीक ही साबित न हो जाये कि अपनी पूंजी हारने के अलावा पलटन की रक़म में से भी कुछ हार चुका है। दोपहर हो रही थी जब वह सोया और सोते ही गहरी, निःस्वप्न नींद में खो गया। ऐसी नींद केवल जवानी के दिनों में, और वह भी जुए में बहुत कुछ हारने के बाद ही आती है। वह शाम के छः बजे उठा, ऐन उस वक़्त जब काउंट तुर्बीन ने होटल में क़दम रखा था। फ़र्श पर जगह जगह ताश के पत्ते और चाक बिखरे पड़े थे, कमरे के बीचोंबीच रखी मेज़ों पर धब्बे ही धब्बे थे। उन्हें देखकर उसे पिछली रात के जुए की याद आयी और वह सिहर उठा, विशेषकर अपने आख़िरी पत्ते, उस ग़ुलाम को याद करके, जिस पर वह पांच सौ रूबल हारा था। मगर उसका मन अब भी उसकी वास्तविक स्थिति को मानने से इन्कार कर रहा था। उसने तकिये के नीचे से अपनी पूंजी निकाली और उसे गिनने लगा। कई नोट उसने पहचान लिये – जुआ खेलते समय वे कई हाथ बदल चुके थे। उसे अपनी सभी चालें याद हो आयीं। वह अपनी सारी रकम, तीन के तीन हज़ार रूबल खो बैठा था। इसके अलावा पलटन के पैसों में से भी ढाई हज़ार रूबल हार चुका था।

उल्हन लगातार चार दिन से खेल रहा था।

जब वह मास्को से चला तो उसे पलटन का पैसा सौंपा गया था। जब वह क० नगर में पहुंचा तो घोड़ा-चौकी के अफ़सर ने यह कहकर उसे रोक लिया कि ताज़ादम घोड़े इस वक़्त नहीं मिल सकते। मगर यह एक बहाना था, दर असल अफ़सर और होटल के मालिक के बीच सांठ-गांठ थी कि रात के वक़्त मुसाफ़िरों को आगे न जाने दिया जाये। उल्हन मौजी तबीयत का जवान था। मां-बाप ने पलटन में अफ़सर बनने पर उसे तीन हज़ार रूबल उपहार में दिये थे। यह देखकर कि चुनाव के दिनों में क० नगर में बड़ा मौज-मेला रहेगा, उसे कुछ दिन रुक जाने में कोई आपत्ति न हुई, बल्कि वह ख़ुश हुआ कि दिल खोलकर मौज लूटेगा। पास ही कहीं उसका एक परिचित ज़मींदार रहता था। वह घर-गृहस्थी वाला कुलीन सज्जन था।

उल्हन ने सोचा चलो उससे भी मिल आयेंगे। उसका लड़कियों से भी थोड़ा वहुत मनवहलाव हो जायेगा। वह गाड़ी लेकर उनसे मिलने जा ही रहा था कि घुड़सेना का अफ़सर यहां आ पहुंचा और अपना परिचय दिया। उसी शाम, बिना किसी बुरे इरादे के, उसने होटल के हॉल में उसका अपने मित्र लुखनोव तथा अन्य जुआरियों से परिचय कराया। उस वक़्त से लेकर अब तक उल्हन जुए की मेज पर ही बैठा रहा था। उसे अपने कुलीन जमींदार मित्र का ध्यान न रहा, सफ़र जारी रखने के लिये घोड़ों की मांग तक करना भूल गया। सच तो यह है कि लगातार चार दिन से उसने अपने कमरे के बाहर क़दम तक नहीं रखा था।

इल्यीन ने कपड़े पहने, नाश्ता किया और टहलता हुआ खिड़की के पास जाकर खड़ा हो गया। थोड़ा घूम लूं तो मन पर से यह ताश का बोझ कुछ हल्का हो जायेगा। उसने अपना बरानकोट पहना और बाहर निकल आया। सामने लाल छतों वाले सफ़ेद मकान थे। उनके पीछे सूर्य छिप चुका था और चारों ओर संध्या-प्रकाश की लालिमा छायी हुई थी। हवा में हल्की हल्की गर्मी थी। सड़कों पर कीच था और आसमान से नर्म बर्फ़ के गाले धीरे धीरे पड़ रहे थे। यह सोचकर उसका दिल उदास हो उठा कि आज का दिन मैंने सोकर गंवा दिया और अब वह ख़त्म होनेवाला है।

"यह खोया हुआ दिन फिर कभी लौटकर नहीं आयेगा," उसने सोचा। फिर मन ही मन कहने लगा: "मैंने अपना सारा यौवन ही बरबाद कर डाला है।" पर यह वाक्य उसने इसलिए नहीं कहा कि वह सचमुच अपने यौवन को बरबाद हुआ समझता था। वास्तव में उसने इस विषय पर कभी सोचा ही न था। उसने केवल इसलिए ये शब्द कहे थे कि यह वाक्यांश उसे सहसा याद हो आया था।

"अब मैं क्या करूं?" वह सोचने लगा, "किसी से पैसे उधार लूं और यहां से चला जाऊं?" उसी वक़्त सड़क की पटरी पर से एक लड़की गुज़री। "कैसी बेवकूफ़ सी जान पड़ती है!" अचानक यह अजीब सा ख़्याल उसके मन में आया। "यहां कोई आदमी ऐसा नहीं, जिससे मैं उधार मांग सकूं। मैंने अपना यौवन बरबाद कर डाला।" वह उस तरफ़ बढ़ गया जहां दूकानों की क़तार थी। एक दूकान के बाहर एक व्यापारी लोमड़ी की खाल का ओवरकोट पहने खड़ा था और ग्राहकों की राह देख रहा था। "अगर मैंने वह अट्ठा न फेंक दिया होता तो अपनी हारी हुई रकम पूरी

कर लेता।" एक बूढ़ी भिखारिन उसके पीछे पीछे चलने और मुस्कराती हुई उससे भीख मांगने लगी। "कोई आदमी नहीं है, जिससे मैं उधार मांग सकूं।" रीछ की खाल का कोट पहने एक आदमी पास से गाड़ी में गुज़रा। एक चौकीदार ड्यूटी पर खड़ा था। "क्या मैं कोई ऐसी बात कर सकता हूं, जिससे सनसनी फैल जाये? इन लोगों पर गोली चला दूं? नहीं इससे भी मज़ा नहीं आयेगा! मैंने अपना यौवन बरबाद कर डाला। यह घोड़ों का साज़ कितना बढ़िया है! इसे यहां बेचने के लिए लटका रखा है। स्लेज में तीन घोड़े जुते हों और आदमी उन्हें सरपट दौड़ाता जाये। कितना लुत्फ़ रहे! होटल में लौट चलूं। अब कुछ ही देर में लुख़नोव आ जायेगा और फिर बाज़ी जमेगी।" वह लौट आया और आते ही फिर पैसे गिने। नहीं, पहली बार गिनने में कोई ग़लती नहीं हुई थी – पलटन के पैसों में से अब भी अढ़ाई हज़ार रूबल ग़ायब थे। "मैं पहले पत्ते पर पचीस का दांव लगाऊंगा, दूसरे पर 'कार्नर' का दांव, फिर दांव को सात गुना बढ़ा दूंगा, फिर पन्द्रह, तीस, साठ गुना, तीन हज़ार रूबल तक। फिर मैं वह घोड़े का साज़ ख़रीदकर यहां से चलता बनूंगा। पर वह शैतान मुझे जीतने नहीं देगा। मैंने अपना यौवन बरबाद कर डाला।" जब लुख़नोव ने कमरे में प्रवेश किया, तो इसी तरह के ख़्याल उल्हन के मन में चक्कर काट रहे थे।

"क्या तुम्हें जागे देर हो गयी, मिख़ाईल वसील्येविच?" लुख़नोव ने पूछा, अपनी पतली तीखी नाक पर से सोने का चश्मा उतारा और जेब से लाल, रेशमी रूमाल निकालकर उसे पोंछने लगा।

"नहीं, अभी उठा हूं। ख़ूब गहरी नींद सोया।"

"अभी अभी यहां एक हुस्सार आया है। ज़यत्शेव्स्की के कमरे में ठहरा है। सुना तुमने?"

"नहीं, मैंने नहीं सुना। और लोग कहां हैं?"

"वे रास्ते में प्रियाख़िन से मिलने के लिए रुक गये। अभी पहुंचा चाहते हैं।"

उसके मुंह से ये शब्द निकले ही थे कि और लोग भी आ पहुंचे: स्थानीय सुरक्षा-सेना का एक अफ़सर, जो हमेशा लुख़नोव के साथ रहता था; बड़ी सी तोते जैसी नाक और गहरी काली काली आंखों वाला एक यूनानी व्यापारी; एक मोटा, थलथल-पिलपिल ज़मींदार, जो दिन के वक़्त

शराब का कारखाना चलाता था और रात को आधे आधे रूबल के दांव पर जुआ खेलता था। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति जल्दी से जल्दी खेल में जुट जाने के लिए बेचैन हो रहा था। लेकिन मुख्य खिलाड़ियों में से कोई भी यह बात जाहिर नहीं करना चाहता था। लुख़नोव तो ख़ास तौर पर बड़े आराम से बैठा, मास्को में गुण्डागर्दी की चर्चा कर रहा था :

"ज़रा सोचो तो!" वह कह रहा था, "मास्को, हमारा एक सबसे बड़ा शहर है, हमारी दूसरी राजधानी है, लेकिन गुण्डागर्दी का अड्डा बना हुआ है। वहां रात के वक़्त गुण्डे हाथों में कांटे उठाये, भूत-पिशाच बने सड़कों पर घूमते-फिरते हैं, बेवक़ूफ़ों को डराते और मुसाफिरों को लूटते हैं और उन्हें कोई कुछ नहीं कहता। मैं जानना चाहता हूं कि आख़िर पुलिस सोच क्या रही है?"

उल्हन बड़े ध्यान से गुण्डागर्दी के क़िस्से सुन रहा था। पर आख़िर उससे न रहा गया। वह उठा और चुपचाप बाहर जाकर उसने नौकर को ताश लाने का हुक्म दिया। सबसे पहले मोटे ज़मींदार ने सबके दिल की बात कही :

"तो दोस्तो, इस सुनहरे वक़्त को क्यों बरबाद किया जाये? आइये दो दो हाथ हो जायें।"

"तुम तो उतावले होगे ही, कल रात अठन्नियों के कुछ दांव जो जीत ले गये थे," यूनानी बोला।

"बिल्कुल ठीक, लेकिन अब तो खेलने का वक़्त हो ही गया है," सुरक्षा-सेना का अफ़सर बोला।

इल्यीन ने लुख़नोव की ओर देखा। दोनों की आंखें मिलीं, पर लुख़नोव पहले की तरह मज़े से गुण्डों का ज़िक्र करता रहा। कभी उनके भूत-पिशाचों जैसे लिबास का वर्णन करता, कभी उनके बड़े बड़े पंजों का।

"तो पत्ते बांटें?" उल्हन ने पूछा।

"इतनी जल्दी क्या है?"

"बेलोव!" उल्हन ने पुकारा और उसका चेहरा किसी कारण लाल हो उठा। "मेरे लिए खाना लाओ। मैंने एक कौर तक मुंह में नहीं डाला। शैम्पेन लाओ और ताश लाकर यहां रखो।"

ऐन उसी वक़्त काउंट और ज़वलशेव्स्की कमरे में दाख़िल हुए। बातों बातों में पता चला कि तुर्बीन और इल्यीन एक ही फ़ौजी डिविजन में हैं।

दोनों में फौरन दोस्ती हो गयी। शैम्पेन से उन्होंने एक दूसरे की सेहत का जाम पिया और कुछ ही मिनटों में यों घुल-मिलकर बातें करने लगे, जैसे बचपन के मित्र हों। काउंट पर इल्यीन का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। काउंट उसकी तरफ़ देख देखकर मुस्कराने और बार बार यह कहकर छेड़ने लगा कि तुम तो अभी बच्चे हो।

"ऐसे होते हैं उल्हन!" वह कहने लगा, "क्या मूंछें हैं! कैसी ज़ालिम मूंछें हैं।"

इल्यीन के ऊपरवाले होंठ के रोएं बिल्कुल सुनहरे थे।

"तो क्या ताश खेलने की तैयारी हो रही है?" काउंट ने पूछा। "मैं तो सोचता हूं कि तुम जीतोगे, इल्यीन, तुम बहुत बढ़िया खिलाड़ी हो, है न?" मुस्कराते हुए वह बोला।

"हां, तैयार हो रहे हैं," लुख़नोव ने ताश की गड्डी खोलते हुए कहा, "क्या तुम शामिल नहीं होओगे, काउंट?"

"नहीं, आज नहीं। अगर मैं खेला तो तुम्हारे कपड़े तक उतरवा लूंगा। जब मैं खेलता हूं तो बैंकों का दिवाला निकल जाता है। पर इस वक़्त मेरे पास पैसे नहीं हैं। मेरे पास जो कुछ था मैं वोलोचोक के नज़दीक घोड़ा-चौकी पर हार आया हूं। कम्बख़्त एक फ़ौजी ने मेरा सफ़ाया कर दिया। हाथों में अंगूठियां पहने हुए था। ज़रूर कोई पत्तेबाज़ रहा होगा।"

"क्या तुम्हें ज्यादा देर घोड़ा-चौकी पर रुकना पड़ा?" इल्यीन ने पूछा।

"पूरे बाईस घण्टे। वह मनहूस चौकी मुझे हमेशा याद रहेगी। पर मैं यह भी जानता हूं कि वहां का घोड़ों का कारिन्दा मुझे भी कभी नहीं भूलेगा।"

"क्यों, क्या हुआ?"

"हुआ यह कि जब मेरी गाड़ी वहां पहुंची तो वह कम्बख़्त मेरे सामने आ खड़ा हुआ। कैसा मनहूस चेहरा था उसका! कहने लगा, 'घोड़े नहीं हैं,' अब मैंने एक उसूल बना रखा है कि जब भी कोई मुझसे कहे कि घोड़े नहीं हैं तो मैं सीधे कारिन्दे के कमरे में चला जाता हूं, अपना ओवरकोट तक नहीं उतारता। उसके दफ़्तर में नहीं जाता, बल्कि उसके निजी कमरे में जा पहुंचता हूं और जाते ही सब दरवाज़े और खिड़कियां खोल देने का हुक्म दे देता हूं, समझो जैसे कमरा धुएं से भरा हो। यहां पर भी मैंने

यही किया। तुम्हें तो मालूम है न, पिछले महीने कैसा पाला पड़ा था। चार डिग्री नीचे तक। कारिन्दा मेरे साथ बहस करने लगा। मैंने सीधे एक घूंसा नाक पर जमाया। एक बुढ़िया और कुछ लड़कियां और औरतें चीख़ने-चिल्लाने लगीं। उन्होंने अपने बरतन-बरतन उठाये और गांव को जाने लगीं। मैंने रास्ता रोक लिया और चिल्लाकर कहा: 'मुझे घोड़े दे दो, तो मैं चला जाऊंगा, मगर नहीं दोगे तो मैं किसी को बाहर नहीं जाने दूंगा, बेशक यहां सर्दी में ठिठुरकर मर जाओ।'"

"इन लोगों को सीधा करने का यही तरीका है!" मोटे ज़मींदार ने ठहाका मारकर कहा। "सर्दी में तिलचट्टों की तरह जमकर मर जाने दो।"

"पर मैंने उन पर नज़र नहीं रखी, मैं कहीं चला गया और इसी बीच कारिन्दा और ये औरतें वहां से खिसक गयीं। केवल एक बुढ़िया वहां पर रह गयी। वह इसी तन्दूर के चबूतरे पर पड़ी छींक रही थी और बार बार भगवान का नाम ले रही थी। उसे मैंने बन्धक बना लिया। उसके बाद हमारे बीच समझौते की बातचीत शुरू हुई। कारिन्दा लौट आया और दूर ही से खड़े खड़े गिड़गिड़ाने लगा कि भगवान के लिए बुढ़िया को छोड़ दो। पर मैंने अपने कुत्ते ब्लूहर को उस पर छोड़ दिया—ब्लूहर कारिन्दों को गन्ध पहचानता है। पर उस शैतान कारिन्दे ने फिर भी अगले दिन की सुबह को ही मुझे घोड़े दिये। इस तरह उस कम्बख़्त फौजी अफ़सर से मेरी भेंट हुई। मैं साथ वाले कमरे में चला गया और उसके साथ खेलने लगा। क्या तुमने मेरे ब्लूहर को देखा है? ब्लूहर, इधर आओ!"

ब्लूहर आया। सब जुआरियों ने बड़ी कृपालुता से उसकी ओर देखा, पर ज़ाहिर था कि उनका ध्यान किसी दूसरे काम की ओर अधिक था।

"पर दोस्तो, तुम खेलते क्यों नहीं? मेरी ख़ातिर अपना खेल न ख़राब करो। मैं तो ठहरा बड़ा बातूनी आदमी," तुर्बीन ने कहा। "यह भी ताश का एक दिलचस्प खेल है। इसे कहते हैं 'प्यार-बिसार।'"

(३)

लुख़नोव ने दो मोमबत्तियां अपनी तरफ़ खिसकायीं, जेब में से भूरे रंग का मोटा सा बटुआ निकाला—वह नोटों से भरा था—धीरे धीरे उसे

खोला, मानो कोई रहस्यमय कृत्य सम्पन्न कर रहा हो। फिर उसमें से सौ सौ रूबल के दो नोट निकाले और उन्हें ताश के नीचे रख दिया।

"कल की तरह आज भी दो सौ रूबल का बैंक होगा," वह बोला और अपनी ऐनक ठीक करके ताश की नयी गड्डी खोलने लगा।

इल्यीन तुर्बीन से बातें करने में मशगूल था। बिना आंख उठाये बोला: "ठीक है।"

खेल शुरू हुआ। लुख़नोव मशीन की सी सफ़ाई से पत्ते बांटता, केवल किसी किसी वक़्त रुककर बड़े आराम से एक प्वाइंट लिख लेता या अपनी ऐनक के ऊपर से पैनी आंखों से देखता हुआ शिथिल सी आवाज़ मे कहता, "तुम्हारी चाल है।" मोटा ज़मींदार सबसे ज्यादा शोर मचा रहा था। ऊंची ऊंची आवाज़ में अपना हिसाब जोड़ता, नाटी, स्थूल उंगलियों से वह पत्तों के कोने मोड़ता, जिससे उन पर दाग़ पड़ जाते। सुरक्षा-सेना का अफ़सर बड़ी साफ़ लिखावट में अपने प्वाइंट लिखता और मेज़ के नीचे हाथ ले जाकर पत्तों के कोने तनिक मोड़ देता। बैंक चलाने वाले की बग़ल में यूनानी बैठा था और अपनी काली काली आंखों से इतने ध्यान से खेल को देखे जा रहा था मानो किसी घटना घटने के इन्तज़ार में हो। मेज़ के पास खड़े ज़वल्शेव्स्की में सहसा स्फूर्ति आ जाती, अपनी जेब में से नीले या लाल रंग का नोट निकालकर उस पर एक पत्ता फेंकता, थाप देकर उस पर हाथ रखता, ऊंची आवाज़ में क़िस्मत को पुकारता: "आ जा, सात आये, सात!" मूंछों को दांतों तले दबाता, कभी एक पांव पर अपने शरीर का बोझ डालता, कभी दूसरे पर। उसका चेहरा लाल हो उठता, सारे बदन में झुरझुरी होने लगती और उस वक़्त तक होती रहती, जब तक कि पत्ता उसके हाथ में न आ जाता। इल्यीन के पास, सोफ़े पर, एक प्लेट में बछड़े का गोश्त और खीरे के टुकड़े रखे थे। वह उन्हें उठा उठाकर खा रहा था और जल्दी से उंगलियों को जैकेट पर ही पोंछते हुए एक के बाद दूसरा पत्ता फेंक रहा था। तुर्बीन शुरू से ही सोफ़े पर बैठा था। वह फ़ौरन भांप गया कि ऊंट किस करवट बैठेगा। लुख़नोव न तो आंख उठाकर उल्हन की तरफ़ देखता न कुछ कहता, केवल अपने चश्मे में से किसी किसी वक़्त उसके हाथों की ओर देख लेता, उल्हन के हाथ के पत्तों में से अधिकांश पिट जाते।

"यह पत्ता तो मैं ख़ुद लेना चाहता था," लुख़नोव ने आधे आधे

रुबल के दांव पर खेलने वाले मोटे गुदगुदे शरीर वाले जमींदार के पत्ते की तरफ़ इशारा करते हुए कहा।

"तुम इल्यीन के पत्ते ले लो—तुम मेरे पत्तों की क्यों चिन्ता करते हो?" ज़मींदार ने जवाब दिया।

वास्तव में ही किसी को भी इल्यीन के समान बुरे पत्ते नहीं मिल रहे थे। हर बार वह हार जाता और घबराकर मेज़ के नीचे उस बदकिस्मत पत्ते को फाड़कर फेंक देता और फिर कांपते हाथों से दूसरा पत्ता उठाता। तुर्बीन सोफे पर से उठा और यूनानी से बोला कि तुम मुझे अपनी कुर्सी पर बैठने दो। उसके साथ वाली कुर्सी पर लुख़नोव बैठा था और बैंक चला रहा था। यूनानी ने जगह बदल ली और काउंट उसकी कुर्सी पर बैठकर बड़े ध्यान से लुख़नोव के हाथों की ओर देखने लगा।

"इल्यीन!" सहसा काउंट बोल उठा। वह अपने साधारण लहजे में बोला था, फिर भी उसकी आवाज़ सब से ऊंची थी। "एक ही पत्ते की बाज़ी क्यों लगाते हो? तुम्हें खेलना नहीं आता!"

"मैं कैसे भी क्यों न खेलूं, फिर भी हार जाता हूं।"

"अगर तुम्हारे दिल में यह ख़्याल बैठा हुआ है तो तुम ज़रूर हारोगे। लाओ, मुझे दो अपने पत्ते।"

"नहीं, नहीं, शक्रिया, मैं किसी को अपनी जगह नहीं खेलने देता। अगर खेलना चाहते हो तो तुम ख़ुद खेलो।"

"कह तो चुका हूं कि मैं नहीं खेलना चाहता। मैं तो तुम्हारी ख़ातिर कह रहा हूं। तुम्हें यों हारते देखकर मुझे दुःख होता है।"

"हारना तो मेरी क़िस्मत में लिखा है!"

काउंट ने फिर कुछ नहीं कहा, कोहनियां मेज़ पर टिकायीं और लुख़नोव के हाथों पर फिर आंखें गड़ा दीं।

"बहुत बुरी बात है!" उसने सहसा ऊंची आवाज़ में एक एक शब्द पर बल देते हुए कहा।

लुख़नोव ने उसकी ओर देखा।

"बहुत, बहुत बुरी बात है!" उसने दोबारा पहले से भी ऊंची आवाज़ में कहा और सीधा लुख़नोव की आंखों में आंखें डालकर देखने लगा।

खेल जारी रहा।

लुख़नाव न इल्यान का एक ग्रार पत्ता उठाया। इस पर तुबान बाला:

"बहुत बुरा काम है!"

"किस बात पर नाराज हो रहे हो, काउंट?" लुख़नोव ने नर्मी, पर साथ ही लापरवाही दिखाते हुए पूछा।

"जिस ढंग से तुम इल्यीन को ग्रांखों में धूल फेंकते हो, बड़ी बाजियां जीत लेते हो ग्रौर छोटी हार जाते हो। यह बहुत बुरा है।"

लुख़नोव ने कन्धे झटके ग्रौर भौंहें सिकोड़ीं मानो कह रहा हो कि हर किसी की ग्रपनी क़िस्मत है ग्रौर खेल में जुटा रहा।

"ब्लूहर! इधर ग्राग्रो!" काउंट चिल्लाया ग्रौर उठ खड़ा हुग्रा। "पकड़ लो इसे, ब्लूहर!"

ब्लूहर इस तेजी से सोफ़े के नीचे से उछलकर निकला कि सुरक्षा-सेना का ग्रफ़सर गिरते गिरते बचा। कुत्ता भागकर ग्रपने मालिक के पास जा पहुंचा ग्रौर गुर्राने लगा। वह पूंछ हिलाता हुग्रा कमरे में बैठे लोगों की तरफ़ यों देखने लगा मानो कह रहा हो: "बताग्रो, इनमें से कौन बदमाश है!"

लुख़नोव ने पत्ते रख दिये ग्रौर कुर्सी पीछे की ग्रोर खींच ली।

"इस हालत में खेलना नामुमकिन है," उसने कहा, "मुझे कुत्तों से नफ़रत है। जब कमरा कुत्तों से भरा हो, तो कोई खेल ही कैसे सकता है।"

"ग्रौर कुत्ते भी इस जैसे – मेरे ख़्याल में तो ये जोंक कहलाते हैं," सुरक्षा-सेना के ग्रफ़सर ने सुर में सुर मिलाते हुए कहा।

"कहो, मिख़ाईल वसील्येविच, खेल जारी रखें या बन्द कर दें?" लुख़नोव ने ग्रपने मेजबान से पूछा।

"कृपया हमारा खेल ख़राब न करो, काउंट," इल्योच ने तुर्बीन से कहा।

इस पर तुर्बीन ने इल्यीन की बांह पकड़ी ग्रौर उसे कमरे से बाहर ले जाने लगा।

"जरा इधर तो ग्राग्रो।"

काउंट की ग्रावाज साफ़ सुनाई दे रही थी। वह साधारण ढंग से ऊंची ग्रावाज में बोल रहा था। फिर भी उसकी ग्रावाज तीन कमरों तक सुनाई देती थी।

"क्या तुम पागल हो गये हो? देखते नहीं कि यह ऐनक वाला आदमी छंटा हुआ पत्तेबाज़ है?"

"नहीं, नहीं, यह कैसे हो सकता है?"

"और मत खेलो, मैं कहता हूं। मुझे तो इसमें कुछ लेना-देना नहीं है। कोई और वक़्त होता तो मैं ख़ुशी से यही पैसे तुमसे ख़ुद जीतकर ले जाता, पर आज रात, न मालूम क्यों, मुझसे यह बर्दाश्त नहीं हो रहा कि ये लोग तुम्हें लूट लें। क्या अपने पैसों से खेल रहे हो?"

"हां, तो! .. अ... क्यों? .. क्यों पूछते हो?"

"मैं भी यह सब कुछ भुगत चुका हूं, दोस्त, इन पत्तेबाज़ों की सब चालें जानता हूं। वह ऐनक वाला आदमी पत्तेबाज़ है, मैं फिर कहता हूं। खेल बन्द कर दो, इसी वक़्त बन्द कर दो। मैं तुम्हें एक दोस्ताना मशविरा दे रहा हूं।"

"मैं सिर्फ़ एक हाथ और खेलूंगा।"

"'एक हाथ और', का क्या मतलब होता है, यह मैं जानता हूं। चलो, यह भी देख लेते हैं।"

वे वापस आ गये। एक ही बाज़ी में इल्यीन ने इतने पत्ते फेंके और वह उनमें से इतने ज्यादा पत्ते हारा कि उसे बहुत भारी नुक़सान हुआ।

तुर्बीन ने मेज़ पर दोनों हाथ फैला दिये।

"बस, हो चुका!" उसने चिल्लाकर कहा, "अब और मत खेलो।"

"अब मैं कैसे छोड़ सकता हूं? तुम मेहरबानी करके मुझे अकेला छोड़ दो," इल्यीन ने खीझकर तुर्बीन की ओर देखे बिना और मुड़े पत्तों को गड्डी में मिलाते हुए कहा।

"तो जाओ भाड़ में! अगर हारने में इतना ही मजा आ रहा है तो हारो। मैं यहां और नहीं ठहर सकता। जवलोस्स्की, आओ, मार्शल के यहां चलें।"

वे बाहर निकल गये। किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा और जब तक उनके क़दमों की आवाज़ और कुत्ते के पंजों की चाप बरामदे में से आती रही, लुख़नोव ने पत्ते नहीं बांटे।

"यह भी दिमाग़वाला आदमी है!" ज़मींदार ने हंसते हुए कहा।

"ख़ैर, अब हम आराम से खेल तो सकते हैं," सुरक्षा-सेना के अफ़सर ने फुसफुसाकर कहा।

और खेल जारी रहा।

ग्रास्तीनें चढ़ाये हुए साज़िन्दे पहले से ही भण्डारे में तैयार खड़े थे। सब के सब मार्शल के घर के बन्धक-दास थे। इस अवसर पर भण्डारे को ग्रार्केस्ट्रा के लिए ख़ाली कर लिया गया था। इशारा पाते ही वे पोलैण्ड का राष्ट्रीय नाच—'ग्रलेक्सान्द्र-येलिज़वेता'—बजाने लगे। हॉल मोमबत्तियों की रोशनी से जगमगा रहा था। नाच करने वाले जोड़े बड़े बांकपन से चोबी फ़र्श पर एक एक करके उतरने लगे। सबसे आगे गवर्नर, मार्शल की पत्नी का बाज़ू थामे हुए आया। उसकी छाती पर सितारा चमक रहा था। उसके पीछे मार्शल, गवर्नर की पत्नी का बाज़ू थामे हुए आया। इसके बाद ग्रलग ग्रलग क्रम से जोड़े उतरने लगे। सभी लोग इलाक़े के शासक परिवारों में से थे। उसी वक़्त ज़वल्शेव्स्की ग्रन्दर दाखिल हुआ। नीले रंग का फ़्रॉक-कोट, कन्धों पर झब्बे, ऊंचा कॉलर, पांवों में ऊंचे मोज़े ग्रौर नाच के जूते ऐसा ठाठ था उसका। उसके ग्रन्दर पहुंचते ही हॉल इत्र की ख़ुशबू से महमह करने लगा। चमेली का इत्र वह मूंछों, कोट के कॉलर ग्रौर रूमाल पर मानो उंडेल लाया था। साथ में एक बांका हुस्सार था। हुस्सार घुड़सवारों की चुस्त नीली बिर्जस ग्रौर सुनहरी कढ़ाई का लाल कोट पहने था। कोट पर व्लादीमिर क्रास ग्रौर १८१२ का तमग़ा चमक रहा था। सामान्य होते हुए भी काउंट के शरीर की गठन ग्रत्यन्त सुन्दर थी। उसकी निर्मल, नीली ग्रांखें चमक रही थीं। गहरे भूरे बालों में बड़े बड़े कुण्डल बनते थे। इनसे उसका चेहरा ग्रौर भी निखर ग्राया था। मार्शल के यहां उसका ग्राना ग्रप्रत्याशित नहीं था। जिस सुन्दर युवक से वह होटल में मिला था, उसने मार्शल को सूचना दे दी थी कि शायद काउंट भी नाच-पार्टी में शरीक हो। इस समाचार के प्रति लोगों की ग्रलग ग्रलग प्रतिक्रिया हुई थी। पर सामान्यतया किसी को भी बहुत ख़ुशी नहीं हुई थी। "क्या मालूम वह हमारी खिल्ली उड़ाये," पुरुषों ग्रौर बड़ी उम्र की स्त्रियों को तो यह ख़्याल ग्राया था। "ग्रगर वह मुझे भगा ले गया तो" यह ख़याल ग्रधिकांश युवतियों के मन में उठा था।

पोलैण्ड के संगीत की धुन समाप्त हुई ग्रौर नाचने वाले जोड़े एक दूसरे के सामने झुककर ग्रलग हुए। स्त्रियां स्त्रियों में जा मिलीं ग्रौर पुरुष पुरुषों

में। ज़वलशेव्स्की गर्व और ख़ुशी से फूला न समा रहा था। काउंट को घर की मालकिन के पास ले गया। मार्शल की पत्नी मन ही मन डर रही थी कि कहीं सबके सामने काउंट उसकी हंसी न उड़ाने लगे, बड़े ग़रूर और सरपरस्ती के लहजे में दूसरी ओर को मुंह किये हुए बोली: "बहुत ख़ुशी हुई। उम्मीद है आप भी नाचेंगे।" और यह कहकर एक ऐसी अविश्वास भरी नज़र से उसकी ओर देखा मानो कह रही हो, "अगर तुमने किसी महिला का अपमान किया तो तुम निरे गुण्डे साबित होगे।" पर काउंट ने मिनटों में उसका दिल जीत लिया। उसकी विनम्रता, शिष्टता, हंसोड़ तबीयत और सौम्य रूप से मालकिन की बदगुमानी जाती रही। यहां तक कि उसके चेहरे का भाव बदल गया और वह मानो सबसे यह कहती प्रतीत हुई: "देखा, मैं इस तरह के लोगों को सीधे रास्ते पर लाना जानती हूं। उसे फ़ौरन पता चल गया कि वह किससे बात कर रहा है। देखते जाओ, सारी शाम मेरे आगे-पीछे न घूमता रहा, तो कहना।" पर ऐन इसी वक़्त गवर्नर काउंट के पास आया और बातें करने के लिए उसे एक ओर ले गया। वह काउंट के पिता से परिचित था। यह देखकर स्थानीय कुलीनों के शक दूर हो गये। उनकी नज़रों में काउंट और भी ऊंचा उठ गया। थोड़ी देर बाद ज़वलशेव्स्की ने उसका परिचय अपनी बहन से कराया। वह एक गोल-मटोल, युवा विधवा थी। जब से काउंट ने कमरे में क़दम रखा था, वह अपनी काली काली आंखों से उसे निहार रही थी। काउंट ने उससे वाल्ज़ नृत्य नाचने का प्रस्ताव किया। साज़िन्दे उस समय इस नाच की धुन बजा रहे थे। काउंट बहुत अच्छा नाचता था और उसे नाचते देखकर लोगों के मन से रहा-सहा खिंचाव भी दूर हो गया।

"क्या ख़ूब नाचता है!" एक मोटी सी औरत बोली। वह काउंट की थिरकती टांगों की ओर देखती हुई अपने आप ताल दिये जा रही थी: "एक, दो, तीन; एक, दो, तीन, वाह! बहुत अच्छा!" नीली बिर्जस में काउंट बड़ी फुर्ती से हॉल में इधर से उधर पैंतरे बदल बदल कर नाच रहा था।

"उफ़, कितना अच्छा नाचता है, वाह वाह!" एक दूसरी स्त्री ने कहा। वह इस शहर में कुछ दिन के लिए आयी हुई थी। इस सोसाइटी में उसे अशिष्ट समझा जाता था। "आश्चर्य की बात कि उसकी एड़ी किसी को छूती तक नहीं। वाह, कितनी सफ़ाई से क़दम रखता है!"

काउंट ऐसा नाचा कि इलाके के तीन सब से अच्छे नाचने वालों को मात कर दिया। इनमें से एक था गवर्नर का सहकारी अफ़सर। क़द का लम्बा और बाल सन जैसे। वह नाच में अपने फुर्तीलेपन के लिए मशहूर था। जिस किसी स्त्री के साथ नाचता, उसे अपने साथ खूब ज़ोर से चिपकाये रखने के लिए भी प्रसिद्ध था। दूसरा था घुड़सेना का अफ़सर, जिसका बदन वॉल्ज़ नाचते वक़्त बड़े ख़ूबसूरत अन्दाज़ से झूमता था। वह बड़ी नज़ाक़त से और जल्दी जल्दी एड़ियां टिकाता था। इसी तरह वहां एक और आदमी इतना अच्छा नाचता था कि लोग उसे हर नाच-पार्टी की जान समझते थे, हालांकि वह बहुत समझदार न था। वह असैनिक था। जब से पार्टी शुरू हुई वह नाचता रहा और सांस लेने तक के लिए नहीं रुका। हर नाच के बाद वह कुर्सियों पर बैठी स्त्रियों के पास जाता और क्रमानुसार एक एक से नाचने का अनुरोध करता। केवल किसी किसी वक़्त मुंह पर से पसीना पोंछने के लिए रुक जाता था। उसका मुंह लाल और पसीने से तर था और रूमाल भीग चुका था। काउंट ने सब को मात दी और सबसे मुख्य तीन स्त्रियों के साथ नाचा। उनमें से एक गदराये डील-डौल की थी, अमीर, ख़ूबसूरत और बेवक़ूफ़। दूसरी, मंझले क़द की थी, बहुत सुन्दर तो न थी पर नाज़ुक थी और बड़ी शानदार पोशाक पहने हुए थी। तीसरी एक छोटी सी स्त्री थी, देखने में साधारण, मगर बड़ी चतुर। अन्य स्त्रियों के साथ भी वह नाचा। या यों कहिये कि सभी सुन्दर स्त्रियों के साथ वह नाचा। और इस नाच-पार्टी में बहुत सी सुन्दर स्त्रियां आयी हुई थीं। पर जो स्त्री उसे सब से ज्यादा पसन्द आयी, वह थी ज़वलशेव्स्की की विधवा बहन। उसके साथ वह क्वाड्रिल, एकोसाएज़ तथा मज़ुर्का नाचा। पहले, क्वाड्रिल नाच के वक़्त ही उसने उसके रूप की बहुत सराहना की, वीनस, डायना, गुलाब के फूल और किसी अन्य फूल से उसकी तुलना करता रहा। जवाब में नन्ही विधवा केवल अपनी गोरी, सुघड़ गर्दन एक ओर टेढ़ी कर लेती और पलकें झुका लेती। उसकी आंखें उसके सफ़ेद मलमल के फ़्रॉक पर टिक जातीं और वह हाथ में पकड़ा हुआ पंखा दूसरे हाथ में ले लेती। "हाय, काउंट, आप मज़ाक कर रहे हैं," वह यह या इसी तरह का कोई दूसरा वाक्य कहती। उसकी आवाज़ गहरी थी और उसमें मासूमियत, सादगी और भोलापन था। काउंट सोचता कि वह सचमुच स्त्री नहीं, फूल है, गुलाब का फूल नहीं, कोई पूरा खिला हुआ, जंगली फूल है—गुलाबी

और सफेद रंग का। उस फूल में खुशबू तो नहीं, मगर लगता है दूर, किसी सुन्दर, पुराने हिम-तट पर अकेला खिल रहा है।

उसका भोलापन, सादगी, और साथ ही उसके रूप की ताज़गी देखकर काउंट के दिल की अजीब कैफ़ीयत होने लगी। बातचीत के दौरान वह कई बार चुपचाप उसकी आंखों में देखता रह जाता। उसकी सुडौल गर्दन और बांहों को देखते हुए उसे उत्कट इच्छा होती कि उसे बांहों में भरकर चूम ले। उसके लिए अपने को क़ाबू में रखना मुश्किल हो जाता। नन्ही विधवा अपने प्रभाव का भास पाकर बड़ी खुश थी। पर काउंट के रवैये में कोई चीज़ उसे बेचैन करने लगी और वह घबरा उठी। काउंट उसे खुश करने के लिए उसके आगे-पीछे घूम रहा था, बल्कि इतनी शिष्टता से पेश आ रहा था कि ज़माने का रंग देखते हुए वह ज़रूरत से कुछ ज्यादा ही जान पड़ती थी। वह भागकर उसके लिए पेय ले आया; उसका रूमाल गिरा तो झट से उठा दिया। एक बार विधवा ने बैठने की इच्छा प्रकट की। एक दूसरा युवक, जो कण्ठ-माला का रोगी जान पड़ता था, भागकर कुर्सी ले आया। काउंट ने झपटकर कुर्सी उसके हाथ से छीन ली और विधवा को उस पर बिठा दिया। उसने इस तरह की और भी कई छोटी-मोटी चीज़ें कीं।

पर छैला बनने की सब कोशिशों के बावजूद विधवा पर कोई असर नहीं हुआ। यह देखकर काउंट उसका मनोरंजन करने की कोशिश करने लगा, उसे तरह तरह के चुटकुले सुनाने लगा। उसे कहता, बस, आपके हुक्म की देर है, यकीन मानिये मैं सिर के बल खड़ा हो जाऊंगा, कहेंगी तो मुर्गे की तरह बांग देने लगूंगा, खिड़की में से कूद पड़ूंगा, नदी पर जमी बर्फ में, जहां कहीं भी सूराख़ नज़र आया, छलांग लगा दूंगा। काउंट का यह दांव चल गया। नन्ही विधवा खिल उठी और ठहाके मार मारकर हंसने लगी। उसके दांतों की ख़ूबसूरत, सफ़ेद लड़ियां बार बार झिलमिलाने लगीं। उसका दिल छैले के प्रति पसीजने लगा। इधर काउंट पागल हुआ जा रहा था। ववाड्रिल के ख़त्म होते न होते वह अपनी सुध-बुध खो बैठा।

ववाड्रिल-नाच समाप्त हुआ। इलाके के सब से अमीर ज़मींदार का बेटा नन्ही विधवा के पास आया। १८ बरस का निठल्ला युवक मुद्दत से विधवा की मुहब्बत में घुला जा रहा था। (यह वही कण्ठ-माला का रोगी था, जिसके हाथ से काउंट ने कुर्सी छीन ली थी)। परन्तु विधवा उसके

साथ बड़ी बेरुख़ी से पेश आयी। जो उत्तेजना काउंट ने उसके अन्दर पैदा कर दी थी, उसका दसवां हिस्सा भी यह लड़का पैदा नहीं कर सकता था।

"तुम भी क्या आदमी हो जी!" वह बोली। उसकी आखें काउंट की पीठ पर लगी थीं और वह मन ही मन हिसाब लगा रही थी कि उसके कोट पर कितने गज़ सुनहरी गोट लगी होगी। "मुझसे तो वादा किया था कि स्लेज पर सैर कराओगे और चाकलेट लाओगे।"

"मैं तो हाज़िर हुआ था, आन्ना प्योदोरोव्ना, मगर तुम घर पर नहीं थीं। मैं वहां तुम्हारे लिए सब से बढ़िया चाकलेटों का डिब्बा छोड़ आया हूं," युवक ने जवाब दिया। क़द का लम्बा होने के बावजूद उसकी आवाज़ पतली सी थी।

"तुम तो हमेशा ही कोई न कोई बहाना ढूंढ़ लेते हो। मुझे तुम्हारे चाकलेटों की ज़रूरत नहीं। यह मत समझो कि..."

"मैं देख रहा हूं, आन्ना प्योदोरोव्ना, तुम्हारा रुख़ बदल रहा है। मैं इसका कारण भी जानता हूं। यह तुम अच्छा नहीं कर रही हो," वह बोला। वह कुछ और भी कहना चाहता था, मगर उत्तेजना से उसके होंठ इस तरह कांपने लगे कि वह आगे कुछ कह न पाया।

आन्ना प्योदोरोव्ना ने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया और दुर्बीन की ओर देखती रही।

दावत का मेज़बान मार्शल, काउंट के पास आया। वह बड़े रोब-दाब वाला, हट्टा-कट्टा बुज़ुर्ग आदमी था और उसके मुंह में एक भी दांत नहीं था। काउंट का हाथ थाम कर, वह उसे अपने पढ़ने वाले कमरे में ले चला। वहां सिगरेट, शराब आदि का प्रबन्ध था। दुर्बीन के बाहर निकलने की देर थी कि आन्ना प्योदोरोव्ना के लिए नाच-घर वीरान हो उठा। अपनी एक सहेली को साथ लेकर वह सीधी शृंगार-कक्ष में चली गयी। उसकी सहेली दुबली-पतली, अधेड़ उम्र की अनब्याही स्त्री थी।

"कहो, पसन्द आया?" सहेली ने पूछा।

"पर ज़्यादा ही आगे-पीछे घूमता है," आन्ना प्योदोरोव्ना बोली और शीशे के सामने जाकर अपना रूप निहारने लगी।

वह कुछ कुछ शर्मा रही थी, चेहरा दमक रहा था और आंखें हंस रही थीं। सहसा वह पंजे के बल एक पैर पर खड़ी हो गयी और

खिलखिलाकर हंसते और बैले-नर्तकियों की नकल करते हुए, दोनों एड़ियां टकराकर हवा में उछली।

"जानती हो, उसने मुझसे यादगार के लिए कोई चीज़ मांगी है," वह सहेली से बोली। "पर उसे कुछ भी नहीं मिलेगा। कुछ भी नहीं-ई-ई दूऊंगी!" अन्तिम दो शब्द उसने गाकर उंगली नचाते हुए कहे। हाथों पर उसने मुलायम चमड़े के दस्ताने पहन रखे थे।

पढ़ने वाले जिस कमरे में मार्शल तुर्बीन को ले गया था, वहां तरह तरह की शराबें, शैम्पेन, वोद्का, प्लेटों में खाने की हल्की-फुल्की चीज़ें रखी थीं। कमरा तम्बाकू के धुएं से अटा था। शहर के कुलीन-समाज के सदस्य, खड़े या बैठे हुए, चुनावों की चर्चा कर रहे थे।

"हमारे इलाके के कुलीनों ने मुझे चुना है, मुझे इज्ज़त बख़्शी है," पुलिस-कप्तान कह रहा था। उसे हाल ही में चुना गया था। वह अभी से नशे की हिलोर में था। "तो मुझे कोई हक़ नहीं कि अपना फ़र्ज़ अदा करने में आनाकानी करूं, कोई हक नहीं..."

काउंट के अन्दर आ जाने पर बातचीत का सिलसिला टूट गया। हरेक के साथ काउंट का परिचय कराया गया। पुलिस-कप्तान ने बड़े तपाक से हाथ मिलाया और बार बार उसे शाम की पार्टी में शामिल होने का न्योता देने लगा। यह पार्टी नाच के बाद नये शराबख़ाने में होने वाली थी। "वहां सब लोग जिप्सियों का सहगान सुनेंगे," उसने कहा। काउंट ने निमन्त्रण स्वीकार किया और फिर उसके साथ शैम्पेन के कितने ही गिलास पिये।

"मगर साहिबान, आप लोग नाच क्यों नहीं रहे हैं?" काउंट ने पढ़ने वाले कमरे से बाहर निकलते हुए पूछा।

"हमें नाचना-वाचना तो कुछ ख़ास नहीं आता।" पुलिस-कप्तान ने हंसते हुए कहा, "हम तो बोतल के मैदान में ही मार्के मारते हैं, काउंट। और हां, काऊंट, ये सब लड़कियां मेरे देखते ही देखते बड़ी हुई हैं। कभी कभी तो मैं भी एकोसाएज़-नाच में शामिल हो जाता हूं। अब भी थोड़ी बहुत पैंतरेबाज़ी दिखा सकता हूं, काउंट।"

"तो फिर आओ, अभी नाचें," तुर्बीन ने कहा, "जिप्सियों का गाना सुनने से पहले यहां भी मज़ा ले लें।"

"क्यों नहीं। आओ दोस्तो, और नहीं तो अपने मेजबान को ख़ुश करने के लिए ही नाचें।"

लाल लाल चेहरों वाले तीन कुलीन उठ खड़े हुए। जब से नाच शुरू हुआ था वे पढ़ने वाले कमरे में बैठे शराब ही पीते रहे थे। उन्होंने हाथों पर दस्ताने चढ़ाये – एक ने मुलायम चमड़े के काले और बाक़ी दोनों ने सफ़ेद रेशमी। तीनों नाच-घर की ओर जाने लगे। परन्तु सहसा कण्ठ-माला का रोगी युवक यहां आ पहुंचा। उसे देखकर सब के सब रुक गये। युवक के होंठ नीले पड़ गये थे और वह मुश्किल से आंसू रोक पा रहा था। सीधा तुर्बीन के पास जाकर बोला:

"क्या समझते हो तुम अपने को? काउंट हो तो क्या हर किसी को धक्के देते फिरोगे? इस जगह को हाट-बाजार समझ रखा है?" उसकी सांस फूल रही थी। "यह सरासर बदतमीज़ी है..."

उसके होंठ कांपने लगे और गला रुंध गया।

"क्या है?" तुर्बीन की भवें चढ़ गयीं। "क्या कहा, पिल्ले?" तुर्बीन ने चिल्लाकर कहा और युवक के दोनों हाथ पकड़कर इस जोर से दबाये कि उसका चेहरा लाल हो गया – इतना अपमान के कारण नहीं, जितना डर के कारण। "क्या मेरे साथ द्वन्द्व-युद्ध लड़ना चाहते हो? अगर यह बात है तो मैं तैयार हूं।"

तुर्बीन ने उसके हाथ छोड़ दिये। उसी वक़्त दो आदमी उस लड़के के बाज़ू पकड़कर कमरे के पीछे दरवाज़े की ओर धकेल ले गये।

"पागल हो गये हो? बहुत पी ली है, क्या? हम तुम्हारे बाप से शिकायत करेंगे। तुम्हें हुआ क्या है?" उन्होंने उससे पूछा।

"मैं पिये हुए नहीं हूं। यह लोगों को धक्के देता है और माफ़ी तक नहीं मांगता। उल्लू का पट्ठा!" युवक ने बिलखकर कहा और सचमुच रोने लगा।

उसकी शिकायतों की तरफ़ किसी ने कान नहीं दिया और उसे घर भेज दिया गया।

"इसकी ओर कोई ध्यान न दो, काउंट," पुलिस-कप्तान और जवलोश्स्की दोनों ने एक साथ कहा। दोनों तुर्बीन को तसल्ली देने के लिए बेकरार थे। "वह तो अच्छा है, अभी तक उसको घर में पिटाई होती है। सोलह साल का ही तो है अभी। न मालूम उस पर कौन सा जनून सवार

हो गया। जरूर दिमाग़ चल निकला होगा। उसका पिता बड़ा नेक प्रा
है, बड़ी इज्ज़त है उसकी, चुनावों में हमारा उम्मीदवार है।"

"अगर द्वन्द्व-युद्ध नहीं लड़ना चाहता तो भाड़ में जाये..."

और काउंट फिर नाचने वाले हॉल में चला गया और बड़े मजे फिर उसी नन्ही विधवा के साथ एकोसाएज़-नाच नाचने लगा। जो लोग उ साथ अध्ययन-कक्ष में से नाचने के लिए आये थे, उनका नाच देख देख तुर्बीन को हंसी आने लगी। एक बार पुलिस-कप्तान का पांव फिसला और वह नाचते जोड़ों के बीच धड़ाम से गिर पड़ा। काउंट इतने ज़ोर से ठह मारकर हंसा कि सारा हॉल उसकी हंसी से गूंज उठा।

(५)

काउंट जिस समय पढ़ने वाले कमरे में था, उस वक़्त अ फ़्योदोरोव्ना ने सोचा कि उसे काउंट की तरफ़ बेरुख़ी बनाये रखनी चाहि वह अपने भाई के पास गयी और बड़े अनमने ढंग से बोली, "यह बताओ, भय्या, यह हुस्सार कौन है, जो मेरे साथ अभी नाच रहा था घुड़सेना का अफ़सर पूरा ब्योरा देकर बताने लगा कि तुर्बीन बड़ा म हुआ हुस्सार है, केवल इसलिए नाच में आया है कि रास्ते में पैसे चं हो जाने के कारण उसे अब शहर में रुक जाना पड़ा। मैंने ख़ुद का को एक सौ रूबल अपनी जेब से दिये हैं, मगर यह बहुत मामूली र है। उसने अपनी बहन से पूछा कि क्या वह दो सौ रूबल और उधार सकती है? पर इस बारे में किसी से भी ज़िक्र नहीं करे, काउंट से बिल्कुल ही नहीं। अन्ना फ़्योदोरोव्ना ने अपने भाई को वचन दिया कि उसी दिन शाम को रुपये भेज देगी और इसका ज़िक्र भी किसी से न करेगी। पर एकोसाएज़-नाच के समय उसके मन में तीव्र इच्छा उठी काउंट को वह ख़ुद उतनी ही रक़म दे दे, जितनी उसे ज़रूरत हो। काउंट को अपने मुंह से यह बात कहने के लिए वह काफ़ी देर के ब साहस बटोर पायी। पहले तो झिझकती-शरमाती रही, पर आख़िर, ब कोशिश के बाद उसने बात छेड़ी :

"मेरे भाई ने मुझे बताया है कि रास्ते में आपके साथ कोई दुर्घट

हो गयी थी और अब आपको पैसे की तंगी है। अगर ज़रूरत हो तो मझसे ले लीजिये। मुझे बड़ी ख़ुशी होगी।"

पर कहते ही आन्ना प्योदोरोव्ना सहम गयी और उसका चेहरा लाल हो गया। काउंट का चेहरा भी मुरझा गया।

"आपका भाई जाहिल है," उसने रुखाई के साथ कहा, "आप यह तो जानती ही हैं कि अगर कोई आदमी किसी दूसरे पुरुष का अपमान करे तो उसे द्वन्द्व-युद्ध की चुनौती दी जाती है। पर अगर कोई औरत किसी मर्द का अपमान करे तो जानती हैं कि क्या नतीजा होता है?"

शर्म के मारे बेचारी आन्ना प्योदोरोव्ना का गला और कान जलने लगे। उसने आंखें नीची कर लीं और मुंह से एक शब्द भी न निकाल पायी।

"ऐसी औरत को सब के सामने चूम लिया जाता है," काउंट ने झुककर उसके कान में फुसफुसाकर कहा। "इजाज़त हो तो मैं आपका हाथ चूम लूं," उसने बड़ी देर चुप रहने के बाद धीमी आवाज में कहा। उसे उस स्त्री की घबराहट देखकर दया आने लगी थी।

"ओह, मगर इस वक़्त तो नहीं," आन्ना प्योदोरोव्ना ने गहरी सांस खींचकर कहा।

"फिर कब? मैं तो कल सुबह जा रहा हूं। और आप इसकी ऋणी हैं।"

"मगर यहां पर मैं इसे कैसे अदा कर सकती हूं?" आन्ना प्योदोरोव्ना ने मुस्कराकर कहा।

"तो मुझे इजाज़त दीजिये कि मैं आपसे मिल सकूं और आपका हाथ चूमूं। मौका तो मैं ख़ुद ढूंढ़ लूंगा।"

"आप कैसे ढूंढ़ लेंगे?"

"यह मेरा काम है। आपसे मिलने के लिए मैं कुछ भी करने को तैयार हूं। आपको तो कोई एतराज़ नहीं?"

"नहीं।"

एकोसाएज़ समाप्त हुआ। इसके बाद उन्होंने फिर एक बार मज़ूर्का-नाच नाचा। काउंट ने ख़ूब कमाल दिखाया—कभी उड़ता रूमाल पकड़ता, कभी एक घुटने के बल बैठता और बिल्कुल वारसा के लोगों की तरह दोनों एड़ियां टकराता। जो वयोवृद्ध मेज़ों पर बैठे ताश खेल रहे थे वे भी यहां से उठकर नाच देखने आ गये। घुड़सेना के अफ़सर ने भी, जो नृत्य-कला

में सर्वोत्कृष्ट माना जाता था, अपनी हार मान ली। इसके बाद भोजन आरम्भ हुआ। लोगों ने अन्तिम बार "ग्रोस फ़ाटेर" नाच नाचा और मेहमान विदा होने लगे। सारा वक़्त काउंट की आंखें उस नन्ही विधवा पर जमी रहीं। जब उसने कहा था कि वह उसकी ख़ातिर बर्फ़ में बने सूराख़ में कूद सकता है तो यह अतिशयोक्ति नहीं थी। यह प्यार हो या सनक, या सिर्फ़ ज़िद्द—इस समय उसकी सभी इच्छाएं एक ही बात पर केन्द्रित थीं कि वह उस स्त्री से मिले और उससे प्यार करे। जब उसने देखा कि आन्ना प्योदोरोव्ना घर की मालकिन से विदा ले रही है, तो वह भागता हुआ नौकरों के कमरे में गया, वहां से बिना ओवरकोट लिए सीधा सड़क पर जा पहुंचा, जहां मेहमानों की गाड़ियां खड़ी थीं।

"आन्ना प्योदोरोव्ना ज़ाइत्सेवा की गाड़ी लाओ!" उसने पुकारा। एक बड़ी सी गाड़ी फाटक की तरफ़ बढ़ने लगी। उसमें चार आदमियों के बैठने की जगह थी और लैम्प लगे थे। "रुको!" उसने कोचवान को पुकारा और घुटनों तक बर्फ़ में भागता हुआ उसकी ओर गया।

"क्या बात है?" कोचवान ने पूछा।

"मुझे गाड़ी में बैठना है," काउंट ने जवाब दिया और दरवाज़ा खोलकर साथ साथ भागने लगा। फिर उछलकर गाड़ी में चढ़ने की कोशिश की। "रुको गधे, सूअर!"

"रुक जाओ, वास्का!" कोचवान ने पोस्टिलियन को पुकारा और घोड़ों की लगाम खींची। "आप किसी दूसरे की गाड़ी में क्यों बैठना चाहते हैं, हुज़ूर? यह गाड़ी तो आन्ना प्योदोरोव्ना की है।"

"चुप रहो, सूअर! यह लो एक रूबल और नीचे उतरकर दरवाज़ा बन्द करो," काउंट ने कहा। कोचवान अपनी जगह से नहीं हिला। काउंट ने स्वयं सीढ़ी को ऊपर उठाया, खिड़की खोली और किसी तरह दरवाज़ा बन्द कर लिया। गाड़ी में से बासी गन्ध आ रही थी, जैसी जले बालों से आती है। ऐसी गन्ध अक्सर पुरानी सुनहरी गोट के गद्दों वाली घोड़ा-गाड़ियों में से आया करती है। घुटनों तक गीली बर्फ़ में रहने के कारण काउंट की टांगें जमी जा रही थीं। वह हल्के से बूट और घुड़सवारी की बिर्जस पहने था। सिर से पांव तक ठिठुर रहा था। कोचवान सीट पर बैठा बड़बड़ा रहा था, लगता था जैसे अभी नीचे उतर आयेगा। पर काउंट ने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। न ही उसे किसी तरह की झेंप हुई।

उसका चेहरा तमतमा रहा था और दिल धक धक कर रहा था। ऐंठी हुई उंगलियों से उसने पीली डोरी को पकड़ लिया और साथ वाली खिड़की में से बाहर झांकने लगा। उसका रोम रोम प्रत्याशित घड़ी का इन्तज़ार कर रहा था। उसे ज्यादा देर इन्तज़ार नहीं करना पड़ा। फाटक पर किसी ने पुकारा, "मैडम ज़ाइत्सेवा की गाड़ी लाओ!" कोचवान ने लगाम झटकी और गाड़ी बड़ी बड़ी कमानियों पर झूलती हुई आगे बढ़ी। गाड़ी की खिड़कियों के सामने घर की जगमगाती खिड़कियां झलकने लगीं।

"ख़बरदार, चोबदार को मेरे बारे में कुछ भी मत कहना, सुन रहे हो, बदमाश?" सामने वाली छोटी सी खिड़की में से काउंट ने सिर निकालकर कहा। गाड़ियों में यह खिड़की कोचवान से बात करने के लिए रखी जाती है। "अगर कुछ भी कहा तो तुम्हारी कसकर ख़बर लूंगा। और अगर मुंह बन्द रखा तो दस रूबल इनाम दूंगा।"

काउंट ने ज़ोर से खिड़की बन्द कर दी। उसी वक़्त गाड़ी भी झटके के साथ रुक गयी। काउंट कोने में दुबक गया, सांस रोक ली और आंखें बन्द कर लीं। वह बहुत घबरा रहा था कि कहीं कोई बाधा न खड़ी हो जाये। दरवाजा खुला, एक एक करके सीढ़ी के पटरे उतरे, एक स्त्री के गाउन की सरसराहट सुनाई दी। पहले जहां गाड़ी में बासी गन्ध व्याप्त थी, अब वहां चमेली की ख़ुशबू का झोंका आया, नन्हे नन्हे पैरों के सीढ़ियां चढ़ने की आवाज़ आयी और आन्ना फ़्योदोरोव्ना अपने क्लोक के पल्ले से काउंट की टांगों को मानो सहलाते हुए गुज़री और बेदम सी बग़ल की सीट पर बैठ गयी।

क्या उसने काउंट को देख लिया था? यह तो कोई भी नहीं बता सकता, स्वयं आन्ना फ़्योदोरोव्ना भी नहीं। पर जब काउंट ने उसका बाज़ू पकड़कर धीमे से कहा, "अब तो मैं ज़रूर आपका हाथ चूमूंगा," तो वह चौंकी नहीं। उसने कोई जवाब भी नहीं दिया। केवल अपना हाथ उसके हाथ मे ढीला छोड़ दिया। काउंट ने बाज़ू के ऊपर, जहां दस्ताना नहीं था, बार बार चूमना शुरू कर दिया। गाड़ी चल दी।

"कहिये कुछ तो। आप नाराज़ तो नहीं हैं?"

आन्ना फ़्योदोरोव्ना सकुचाकर कोने में दुबक गयी। फिर सहसा, किसी प्रत्यक्ष कारण के बिना, उसकी आंखें छलछला आयीं और सिर काउंट की छाती पर टिक गया।

पुलिस-कप्तान, जिसने चुनाव जीता था, और पार्टी के अन्य लोग नये शराबघर में देर से पी-पिला रहे थे और जिप्सियों का गाना सुन रहे थे। घुड़सेना का अफ़सर भी उन्हीं में शामिल था। सहसा काउंट भी वहां पहुंच गया। उसने नीली बनात का क्लोक पहन रखा था, जिसके नीचे रीछ की खाल का अस्तर लगा था। यह क्लोक आन्ना प्योदोरोव्ना के स्वर्गीय पति का था।

"आइये, हुजूर, आइये! हम तो आपके आने की आस ही छोड़ बैठे थे," एक जिप्सी ने काउंट का क्लोक उतरवाते हुए कहा। वह भागकर दरवाज़े के पास जा खड़ा हुआ था। काले बाल, ऐंची आंखें, जब हंसता तो उसके सफ़ेद दांत चमक उठते। "लेबेद्यान के बाद आज आपके दर्शन हुए। स्तेशा तो आपके विछोह में मरी जा रही है।"

स्तेशा भी भागती हुई काउंट से मिलने आयी। जिप्सी लड़की, मानो सांचे में ढली हो—सांवला रंग, चेहरे पर लाली, चमकती, बड़ी बड़ी, काली आंखें, उन पर लम्बी लम्बी, घनी पलकें, जो मानो आंखों की शोख़ी में मिठास घोल रही हों।

"आह, काउंट आ गया! हमारी आंखों का तारा, हमारा नन्हा सा काउंट आ गया! हाय, मैं तो ख़ुशी से मरी जा रही हूं," वह बोली। उसका चेहरा खिल उठा था।

इल्यूश्का भी मिलने के लिए भागता आया। वह भी दिखाना चाहता था कि काउंट के आने पर बड़ा ख़ुश है। बूढ़ी औरतें, प्रौढ़ाएं, युवतियां सभी दौड़ दौड़कर आने लगीं और काउंट को घेरकर खड़ी हो गयीं। कुछेक तो उसे अपना सगा-सम्बन्धी मानती थीं, क्योंकि वह उनके बच्चों का धर्म-पिता बना हुआ था। कुछेक ने उसके साथ सलीब की अदला-बदली की थी।

काउंट ने सभी जिप्सी युवतियों के होंठ चूमे। बूढ़ी जिप्सी स्त्रियों और पुरुषों ने उसके कन्धे तथा हाथ पर चुम्बन किया। कुलीन पुरुष भी इससे मिलकर बेहद ख़ुश हुए, विशेषकर इसलिए कि महफ़िल का रंग अपने शिखर पर पहुंचने के बाद अब ठण्डा पड़ने लगा था। हरेक आदमी थका थका सा महसूस कर रहा था, सोचता था कि बस, काफ़ी हो गया, जी भर गया। शराब अब नसों को उत्तेजित नहीं कर पा रही थी, बल्कि मेदे

पर बोझ बनने लगी थी। मेहमान जितना हंसी-मज़ाक कर सकते थे, कर चुके थे और अब एक दूसरे से ऊब गये थे। सब गीत गाये जा चुके थे। अब उनकी धुनें इनके मस्तिष्क में खलबली और शोर मचा रही थीं। अब भी नये नये और दिलेराना करतब दिखाये जा रहे थे, पर किसी का भी मन उनमें नहीं लग रहा था। पुलिस-कप्तान बड़े अटपटे ढंग से एक बूढ़ी औरत के पांवों के पास फ़र्श पर बैठा था।

"शैम्पेन!" वह पांव पटककर चिल्लाया, "काउंट आ गये हैं! शैम्पेन लाओ! मैं एक पूरा हौज शैम्पेन से भर दूंगा और उसमें ग़ुस्ल करूंगा। मेरे रईस मेहरबानो! आज मैं ऐसे बड़े बड़े लोगों की महफ़िल में हूं। मैं कितना ख़ुशकिस्मत हूं! स्तेशा, गाओ, 'खुली सड़क' वाला गीत गाओ!"

घुड़सेना का अफ़सर भी मस्त था, पर उसकी मस्ती का रंग कुछ दूसरा ही था। वह एक कोच के कोने में, ऊंचे क़द की एक ख़ूबसूरत जिप्सी लड़की की बग़ल में बैठा था। वह बार बार आंखें मिचकाता और शराब के धुंधलके को दूर करने के लिए सिर झटकता हुआ एक ही वाक्य दोहराये जा रहा था–"ल्युबाशा, मेरे साथ भाग चलो।" ल्युबाशा सुन रही थी और मुस्करा रही थी, मानो उसकी बात उसे बड़ी मनोरंजक और साथ ही साथ कुछ कुछ करुणाजनक लग रही हो। किसी किसी वक़्त वह आंख उठाकर ऐंची आंखों वाले एक आदमी की ओर देखती, जो उसके सामने एक कुर्सी के पीछे खड़ा था। यह उसका पति, साश्का था। इस प्रेमालाप के जवाब में उसने झुककर घुड़सेना के अफ़सर से धीमी सी आवाज़ में कहा: "मुझे कुछ रिब्बन तो ले दो और एक इत्र की शीशी, पर किसी को बताना मत।"

"हुर्रा!" काउंट के अन्दर आने पर घुड़सेना का अफ़सर चिल्लाया।

सुन्दर युवक इधर से उधर चहलक़दमी कर रहा था। उसकी चाल में अस्वाभाविक सी दृढ़ता थी और चेहरे पर चिन्ता की झलक। वह "हरमख़ाने में बग़ावत" नामक संगीत-रचना में से कोई धुन गुनगुना रहा था।

एक वृद्ध कुटुम्बपति को ये कुलीन लोग बड़ी मिन्नत-समाजत करके जिप्सियों के पास ले आये थे। उससे कहा था कि आप न गये तो महफ़िल फीकी रहेगी, आप नहीं जायेंगे तो हम भी नहीं जायेंगे। यहां पहुंचकर वह

बुजुर्ग एक सोफे पर लेट गया था और अभी तक वहीं पड़ा था। किसी को रत्ती भर भी उसकी परवाह न थी। एक सरकारी कर्मचारी अपना फ्रॉक-कोट उतारकर एक मेज के ऊपर टांगें चढ़ाये बैठा था और यह दिखाने के लिए कि उससे बड़ा लफंगा कोई नहीं है, बार बार अपने बालों को बिखेर रहा था। काउंट के अन्दर आने पर इसने कमीज का कॉलर खोल दिया और मेज पर और भी फैलकर बैठ गया। किस्सा यह कि काउंट के आ जाने से पार्टी में फिर जान आ गयी।

जिप्सी लड़कियां, जो पहले कमरे में इधर-उधर घूम रही थीं, घेरा बनाकर बैठ गयीं। काउंट ने स्तेशा को अपनी गोद में बिठा लिया और शैम्पेन का आर्डर दे दिया। स्तेशा जिप्सी-मण्डली की सोलो गायिका थी।

इल्यूश्का ने गिटार उठायी और सामने बैठ गया और स्तेशा को 'प्ल्यास्का' गाने का इशारा किया। 'प्ल्यास्का' जिप्सियों की एक संगीत रचना है, जिसमें बहुत से गाने एक विशेष क्रम से गाये जाते हैं। गानों के बोल हैं: "जब कभी सड़क पर चलता हूं", "ऐ हुस्सारो!", "सुनो और समझो" आदि। स्तेशा ख़ूब गाती थी। उसकी भरपूर, गहरी आवाज में बड़ी लोच थी। लगता, न जाने किन गहराइयों से आवाज निकल रही है। होंठों पर लुभावनी मुस्कान, चंचल, कटीली नजरें। गाने के साथ साथ वह फ़र्श पर नन्हे नन्हे पैरों से ताल देती जाती। सहगान से पहले वह हर बार छोटे छोटे और ऊंचे ऊंचे अलाप करती। सुनने वालों के दिल के तार बज उठते। बेसुध होकर गाती थी वह। इल्यूश्का गिटार पर संगत कर रहा था। गीत के साथ उसका तन-मन एकरस हो रहा था। उसकी पीठ हिल रही थी, पांव फ़र्श पर थाप दे रहे थे, होंठों पर मुस्कान खेल रही थी। गीत की लय में साथ साथ उसका सिर झूम रहा था। आंखें स्तेशा के चेहरे पर गड़ी थीं। उसकी एकाग्रता और तन्मयता को देखकर ऐसा लगता था मानो पहली बार उसका गीत सुन रहा हो। गीत के अन्तिम स्वर शान्त हुए। इल्यूश्का सहसा तनकर खड़ा हो गया मानो दुनिया में वह अपने बराबर किसी को न समझता हो। जान-बूझकर बड़े गर्व से उसने गिटार को घुटने पर झटका। गिटार घूमती हुई हवा में उछली। फिर वह स्वयं एड़ियों से फ़र्श पर टंकार देने लगा, बाल झटककर पीछे को हटाये और भौंहें चढ़ाये सहगान-मंडली की ओर देखा। इसके बाद वह नाचने लगा। उसका अंग

अंग थिरक उठा। बीस आदमी, ज़ोरदार ऊंची आवाज़ में, एक साथ गाने लगे। लगता जैसे सभी एक-दूसरे से होड़ कर रहे हों और अदाकारी में अपनी मौलिकता तथा कुशलता दिखाना चाहते हों। बूढ़ी स्त्रियां अपनी जगह पर ही बैठी बैठी, रूमाल हिला हिलाकर हंसने और हल्के हल्के थिरकने लगीं और गीत की लय के साथ साथ चिल्ला चिल्लाकर एक दूसरी से होड़ करने लगीं। मर्द उठकर अपनी कुर्सियों के पीछे खड़े हो गये और गहरी, गंभीर आवाज़ में गाने लगे। उनके सिर एक ओर को झुके थे और गलों की नसें फूली हुई थीं।

जब भी स्तेशा का स्वर ऊंचा उठता, इल्यूश्का अपनी गिटार को उसके चेहरे के नज़दीक ले जाता, मानो उसकी मदद करना चाहता हो। सुन्दर युवक पागलों की तरह चिल्लाने लगता कि सुनो, अब स्तेशा पंचम में गायेगी।

जब नाच की धुन बजने लगी तो दुन्याशा सामने आ गयी और कन्धे और उरोज हिलाती हुई काउंट के सामने नाचने और चक्कर लगाने लगी। फिर जैसे तैरती हुई कमरे के ऐन बीचोंबीच जा पहुंची। इस पर तुर्बीन उछलकर खड़ा हो गया, जैकेट उतार डाली—अब वह केवल एक लाल क़मीज़ पहने था—और उसके साथ मिलकर नाचने लगा। उसने टांगों के वे करतब दिखाये कि जिप्सी एक दूसरे की ओर देख देखकर मुस्कराने और उसके नृत्य-कौशल पर वाह वाह करने लगे।

पुलिस-कप्तान एक तुर्क की तरह पलथी मारे बैठा था। अपनी छाती पर घूंसा मारते हुए चिल्ला उठा: "वाह, वाह!" फिर काउंट की टांगों के साथ चिपककर उसे अपना भेद बताने लगा कि मैं जब यहां आया था तो मेरे पास पूरे दो हज़ार रूबल थे और उनमें से अब केवल पांच सौ बच रहे हैं, मगर कोई परवाह नहीं, मैं इन पैसों के साथ जो चाहूंगा करूंगा, बस सिर्फ़ तुम्हारी इजाज़त चाहिए। वृद्ध कुटुम्बपति उठा और घर जाने को तैयार हुआ मगर उसे जाने नहीं दिया गया। सुन्दर युवक ने बड़ी मिन्नत-समाजत के बाद एक जिप्सी लड़की को अपने साथ नाचने के लिए राज़ी कर लिया। घड़सेना का अफ़सर यह दिखाने के लिए कि वह काउंट का गहरा मित्र है अपने कोने में से निकल आया और उसने अपनी बांहें उसके गले में डाल दीं।

"आह दोस्त!" वह बोला, "तुम आख़िर हमें छोड़कर चले क्यों

गये थे?" काउंट ने कोई उत्तर न दिया। जाहिर था कि वह कुछ और ही सोच रहा था। "तुम कहां चले गये थे? बड़े छलिया हो! मैं सब जानता हूं कि तुम कहां गये थे।"

किसी कारण तुर्बीन को यह घनिष्ठता अच्छी नहीं लगी। बिना मुस्कराये और बिना कुछ कहे उसने घुड़सेना के अफसर को घृणा से घूरकर देखा और फिर एक एकबारगी इतनी अश्लील और भद्दी गालियों की बौछार की कि वह सकते में आ गया और समझ नहीं पाया कि उसे मज़ाक समझे या कुछ और। आख़िर उसने इसे मज़ाक़ समझने का निर्णय किया, खिसियाकर मुस्कराता हुआ अपनी जिप्सी लड़की के पास लौट गया और उसे आश्वासन देने लगा कि मैं ज़रूर ईस्टर के बाद तुम्हारे साथ शादी कर लूंगा। सारी मण्डली ने मिलकर एक और गीत गया, इसके बाद एक और। फिर नाच शुरू हुआ। एक दूसरे के सम्मान में गीत गाये गये। सभी यह समझ रहे थे कि हम बहुत ही आनन्द लूट रहे हैं। शैम्पेन की नदी बह रही थी। काउंट ने भी बहुत शराब पी। उसकी आंखों में नमी आ गयी मगर वह लड़खड़ाया नहीं, बल्कि पहले से भी बढ़िया नाचने लगा। जब भी किसी से बात करता तो स्थिर आवाज़ में। जब जिप्सी सहगान गाने लगे तो वह भी उनमें शामिल हो गया और जब स्तेशा "प्रेम-पंखों की उड़ान" वाला गीत गाने लगी तो काउंट भी सुर में सुर मिलाकर साथ साथ गाने लगा। गीत अभी चल ही रहा था कि शराबघर का मालिक आया और मेहमानों से घर जाने का आग्रह करने लगा। सुबह के तीन बजा चाहते थे।

काउंट ने उसकी गर्दन पीछे से पकड़ ली और उसे पलथी मारकर नाचने को कहा। उसने नाचने से इन्कार कर दिया। काउंट ने शैम्पेन की एक बोतल उठायी, शराबघर के मालिक को सिर के बल खड़ा कर दिया और दूसरे लोगों से कहा कि उसे पकड़े रखें। फिर सारी की सारी बोतल उस पर उंडेल दी। लोगों को ख़ूब मज़ा आया।

पौ फट रही थी। काउंट के सिवा, सभी के चेहरे ज़र्द और थके हुए थे।

"मास्को जाने का वक़्त हो गया है," उसने सहसा कहा और उठ खड़ा हुआ, "मुझे विदा करने के लिए, साहिबान, मेरे यहां आइये और वहां हम एक साथ चाय भी पियेंगे।"

वृद्ध कुटुम्बपति के सिवा, जो अब सो रहा था, बाक़ी सभी तैयार हो गये। उसे वहीं छोड़ दिया गया। सब के सब दरवाज़े पर खड़ी तीन वर्फ़-गाड़ियों में जैसे-तैसे घुसकर बैठ गये और होटल के लिए रवाना हो गये।

(७)

"घोड़े जोत दो!" जिप्सियों तथा अन्य मेहमानों के साथ होटल के हॉल में क़दम रखते हुए काउंट ने चिल्लाकर कहा। "साशा! – जिप्सी साशा नहीं, मेरा साशा – घोड़ों के कारिन्दे से जाकर कह दो कि अगर उसने ख़राब घोड़े दिये तो मैं उसकी खाल उधेड़ दूंगा। और हमारे लिए चाय लाओ! ज़वलशेव्स्की, तुम चाय का इन्तज़ाम करो और मैं जरा जाकर देखता हूं कि इल्यीन का काम कैसे चल रहा है।" यह कहकर तुर्बीन बाहर बरामदे में निकल आया और उल्हन के कमरे की ओर चल दिया।

इल्यीन ने अभी अभी खेलना ख़त्म किया था। अपनी सारी रक़म, आख़िरी कोपेक तक वह हार चुका था और अब सोफ़े पर लेटा हुआ था। सोफ़े में घोड़े के बाल भरे थे और वह जगह जगह से फटा हुआ था। इल्यीन एक एक करके घोड़े के बाल सोफ़े में से निकालता, उन्हें मुंह में डालता, दांतों से काटता और थूक देता। एक मेज़ पर, जहां ताश के पत्ते बिखरे पड़े थे, दो मोमबत्तियां जल रही थीं। एक तो लगभग नीचे काग़ज़ तक जल चुकी थी। उनकी क्षीण रोशनी खिड़की में से झांक रहे सुबह के उजाले से संघर्ष कर रही थी। उस समय उल्हन के मन में कोई भी विचार न था। उसकी सभी मानसिक शक्तियां जुए की उत्तेजना के कारण धूमिल हो रही थीं। उसे पछतावा तक न हो रहा था। एक वक़्त उसने यह ज़रूर सोचने की कोशिश की थी कि अब मैं क्या करूंगा। एक कोपेक भी मेरे पास नहीं है, मैं इस जगह से कैसे जाऊंगा, फ़ौज के पन्द्रह हज़ार रूबल कैसे लौटाऊंगा, फ़ौज का कमाण्डर क्या कहेगा, मेरी मां क्या कहेगी, मेरे साथी क्या कहेंगे – और सहसा अपने प्रति घृणा और डर ने उसे जकड़ लिया। मन से इन बातों को दूर हटाने के लिए वह सोफ़े से उठा और कमरे में टहलने लगा। टहलते हुए वह फ़र्श पर लगे तख़्तों के जोड़ों पर ही क़दम रखने की कोशिश करता। मन ही मन एक बार फिर उसे वे सभी दांव

एक एक करके याद आने लगे, जो उसने खेल में चले थे। छोटी से छोटी तफ़सील याद आयी। उसे याद आया कि वह एक बार बिल्कुल जीतने तक था – उसने एक नहला उठाया था और हुकुम के बादशाह पर दो हज़ार रूबल लगाये थे: दाईं तरफ़ – बेग़म, बाईं तरफ़ – इक्का, दाईं तरफ़ – ईंट का बादशाह, और वह सब कुछ हार गया था। अगर छक्का दाईं तरफ़ होता और ईंट का बादशाह बाईं तरफ़ तो वह अपनी सारी की सारी रकम जीत लेता और इस रक़म पर दांव लगाकर पन्द्रह हज़ार रूबलों पर और हाथ साफ़ कर लेता। तब वह अपनी फ़ौज के कमाण्डर से एक सवारी घोड़ा ख़रीद लेता और एक फ़िटन-गाड़ी और घोड़ों की जोड़ी भी। और क्या? उफ़! कमाल हो जाता, सचमुच कमाल हो जाता!

वह फिर एक बार सोफ़े पर लेट गया और घोड़े के बाल चबाने लगा।

"सात नम्बर के कमरे में गाना-बजाना क्यों हो रहा है?" उसने सोचा। "ज़रूर तुर्बीन कोई दावत दे रहा होगा। शायद मुझे भी उनके साथ शामिल होना चाहिए और ख़ूब पीना चाहिए।"

ऐन उसी वक़्त काउंट कमरे में दाख़िल हुआ।

"कहो, जेब ख़ाली हो गयी?" उसने पूछा।

"मैं सोने का बहाना करूंगा," इल्यीन ने सोचा, "नहीं तो मुझे बातें करनी पड़ेंगी और मैं बहुत थका हुआ हूं।"

पर तुर्बीन उसके पास चला आया और उसके बाल सहलाने लगा।

"तो सब सफ़ाया हो गया, क्यों? सब कुछ हार गये? क्या बात है?"

इल्यीन ने कोई जवाब नहीं दिया।

काउंट ने उसकी आस्तीन खींची।

"हां, हार गया हूं। तुम्हें इससे क्या?" इल्यीन ने शिथिल सी आवाज़ में कहा, जिससे क्रोध और उपेक्षा का भाव झलकता था। उसने करवट तक नहीं बदली।

"क्या, सब कुछ?"

"हां, सब कुछ। मगर तुम्हें इससे मतलब?"

"सुनो, मुझे अपना दोस्त समझकर सच सच बता दो," काउंट ने कहा। शराब के नशे में उसकी कोमल भावनाएं जाग उठी थीं। वह अब भी युवक के बाल सहलाये जा रहा था। "मैं तुमसे सचमुच प्यार करने

लगा हूं। मुझे सच सच बताओ, अगर तुम फ़ौज का पैसा हार गये हो तो मैं तुम्हारी मदद करूंगा। मुझे अभी बतला दो, यह न हो कि मौक़ा हाथ से निकल जाये। क्या वह फ़ौज का पैसा था?"

इल्यीन सोफ़े पर से उछलकर खड़ा हो गया।

"अगर तुम सचमुच चाहते हो कि मैं तुम्हें बता दूं तो तुम मेरे साथ ऐसे बातें मत करो जैसे कि... जैसे कि... कृपया तुम मेरे साथ बात नहीं करो... मेरे सामने अब एक ही रास्ता रह गया है कि अपने को गोली का निशाना बना लूं," गहरी निराश आवाज में उसने कहा, दोनों हाथों से सिर पकड़कर बैठ गया और फूट फूटकर रोने लगा, हालांकि घड़ी भर पहले वह एक सवारी घोड़ा ख़रीदने के स्वप्न देख रहा था।

"वाह, तुम तो लड़कियों से भी गये-बीते हो। हम सब पर यह बीत चुकी है। अभी भी कुछ न कुछ हो सकता है, मामला सुधर सकता है। तुम यहां मेरा इन्तज़ार करो।"

काउंट बाहर चला गया।

"ज़मींदार लुख़नोव किस कमरे में ठहरा हुआ है?" उसने प्यादे से पूछा।

प्यादे उसे कमरा दिखाने के लिए साथ हो लिया। लुख़नोव के नौकर ने बार बार यह कहकर रोकने की कोशिश की कि मालिक अभी अभी अन्दर गये हैं और अभी कपड़े उतार रहे होंगे। लेकिन काउंट सीधा कमरे में घुस गया। लुख़नोव ड्रेसिंग गाउन पहने मेज़ के सामने बैठा नोट गिन रहा था। नोटों के पुलिन्दे सामने पड़े थे। मेज़ पर राईन-शराब की एक बोतल भी थी। यह शराब उसे सब से अधिक पसन्द थी। इतने पैसे जीतने के बाद आज उसने अपने को थोड़ा सा ऐश करने की इजाज़त दे रखी थी। लुख़नोव ने चश्मे में से काउंट की तरफ़ तीखी और उपेक्षापूर्ण नज़र से ऐसे देखा, मानो वह उसे जानता ही न हो।

"लगता है आपने मुझे पहचाना नहीं," काउंट ने बड़ी दृढ़ता से सीधे मेज़ के पास जाकर कहा।

लख़नोव ने काउंट को पहचान लिया और बोला:

"मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं?"

"मैं आपके साथ खेलना चाहता हूं," सोफ़े पर बैठते हुए तुर्बीन ने कहा।

"इस वक़्त?"

"हां।"

"किसी दूसरे वक़्त में बड़ी ख़ुशी से आपके साथ खेलूंगा, काउंट, मगर इस वक़्त में थका हुआ हूं और सोना चाहता हूं। क्या आप थोड़ी शराब पियेंगे? बहुत बढ़िया शराब है।"

"मैं इसी वक़्त खेलना चाहता हूं।"

"आज रात तो और खेलने का मेरा कोई इरादा नहीं। शायद कुछ लोग खेलना पसन्द करें। मैं नहीं खेल सकूंगा, काउंट, आशा है आप मुझे माफ करेंगे।"

"तो क्या आप नहीं खेलेंगे?"

लुख़नोव ने धीरे से कन्धे झटक दिये, मानो काउंट की इच्छा पूरी न करने पर खेद प्रकट कर रहा हो।

"किसी हालत में भी नहीं खेलेंगे?"

उसने फिर कन्धे झटके।

"मैं आपकी मिन्नत करता हूं... कहिये खेलेंगे न?"

लुख़नोव चुप रहा।

"खेलेंगे या नहीं?" काउंट ने फिर कहा। "अच्छी तरह सोच लीजिये!"

लुख़नोव फिर भी चुप रहा और अपनी ऐनक के शीशों के ऊपर से काउंट के चेहरे की ओर देखने लगा। काउंट के चेहरे पर एक छाया सी घिरती आ रही थी।

"खेलेंगे या नहीं?" काउंट ने ज़ोर से चिल्लाकर कहा और मेज़ पर इतने ज़ोर से घूंसा मारा कि शराब की बोतल नीचे जा गिरी और शराब फ़र्श पर बहने लगी। "आप जानते हैं कि आपने धोखा देकर पैसे जीते हैं। आप खेलेंगे या नहीं? मैं आख़िरी बार आपसे पूछ रहा हूं।"

"मैंने कह दिया है कि मैं नहीं खेलूंगा। आपका रवैया बड़ा अजीब है, काउंट। शरीफ़ लोग यों अन्दर नहीं घुस आते और तलवार की नोक पर धमकियां नहीं देने लगते।"

अब कुछ देर ख़ामोशी रही और इसके दौरान काउंट का चेहरा अधिकाधिक सफ़ेद पड़ता गया। सहसा लुख़नोव के सिर पर एक इतने ज़ोर का घूंसा पड़ा कि वह सन्नाटे में आ गया और सोफ़े पर गिर पड़ा। उसने

नोटों का पुलिन्दा पकड़ने की कोशिश की, फिर बड़े ज़ोर से चिल्ला उठा। उम्मीद नहीं हो सकती थी कि उस जैसा शान्त और गंभीर आदमी इतने ज़ोर से चिल्ला उठेगा। तुर्वीन ने पैसे मेज़ पर से उठा लिये, नौकर को धक्का देकर रास्ते से हटाया, जो अपने मालिक की चीख़ सुनकर भागा हुआ अन्दर आया था और दरवाज़े की ओर लपका।

"अगर आप द्वन्द्व-युद्ध लड़ना चाहते हों तो मैं आपकी सेवा करने को तैयार हूं। मैं अभी आध घण्टे तक अपने कमरे में और रहूंगा," काउंट ने दरवाज़े पर पहुंचकर कहा।

"चोर! लुटेरा!" कमरे के अन्दर से आवाज़ आयी, "मैं तुम्हें क़ैद करवा दूंगा!"

इल्यीन अब भी सोफ़े पर निराश पड़ा हुआ था। रह रहकर उसका गला रुंध जाता था। उसे काउंट के वचन पर विश्वास नहीं था कि वह मामले को ठीक कर देगा। पहले उसके मन पर एक धुंधलका सा छाया हुआ था और तरह तरह के विचार चक्कर काट रहे थे। परन्तु काउंट के सहानुभूतिपूर्ण शब्दों ने उसके दिल पर गहरा असर किया था और उसे अपनी दुःस्थिति का बोध होने लगा था। वह समझ रहा था कि उसका यौवन, जिससे लोगों को इतनी आशाएं थीं, आत्मसम्मान, उसके प्रति साथियों का आदर-भाव, प्रेम और मैत्री के स्वप्न—सब सदा के लिए धूल में मिल गये हैं। आंसुओं का सोता अब सूखता जा रहा था, उसके स्थान पर गहरी निराशा छाती जा रही थी और आत्महत्या के विचार अधिकाधिक दृढ़ता के साथ उसके मन में उठ रहे थे। आत्महत्या के प्रति घृणा और डर का भाव अब नहीं उठता था। ऐन इसी वक़्त उसे काउंट के पांवों की आहट सुनाई दी।

काउंट के चेहरे पर अब भी क्रोध के चिन्ह थे, उसके हाथ अब भी कुछ कुछ कांप रहे थे। पर उसकी आंखें प्रसन्नता तथा आत्मसन्तोष से चमक रही थीं।

"लो, मैं सब जीत लाया हूं!" उसने कहा और मेज़ पर नोटों का पुलिन्दा फेंक दिया। "गिन लो, रक़म पूरी है न। हां, और जल्दी से हॉल में पहुंचो, मैं जा रहा हूं," यह बोला और बिना यह दिखाये कि उसने उल्हन के चेहरे पर कृतज्ञता और ख़ुशी का भाव देख लिया है वह कोई जिप्सी धुन गुनगुनाता हुआ कमरे में से बाहर निकल गया।

साशा कमरबन्द कसे हुए अन्दर आया और सूचना दी कि घोड़े तैयार हैं। फिर काउंट से कहने लगा कि मेहरबानी करके अपना बड़ा ओवरकोट वापिस मंगवा लीजिये। उसकी क़ीमत तीन सौ रूबल से कम नहीं। फ़र का तो उस पर कॉलर लगा है। और उस बदमाश को उसका नीला चोग़ा वापिस भेजें। कैसा मनहूस चोग़ा उसने मार्शल के घर आपको दिया है। पर तुर्बीन ने जवाब दिया कि ओवरकोट वापस लेने की कोई जरूरत नहीं और अपने कमरे में कपड़े बदलने के लिए चला गया।

घुड़सेना का अफ़सर जिप्सी लड़की के पास चुपचाप बैठा बराबर हिचकियां ले रहा था। पुलिस-कप्तान ने वोद्का का आर्डर दिया और सब लोगों को अपने घर चलकर नाश्ता करने का निमन्त्रण दिया। कहने लगा, मैं वादा करता हूं कि मेरी पत्नी जरूर जिप्सियों के साथ नाचेगी। सुन्दर युवक बड़ी संजीदगी से इल्यूश्का को समझाने की कोशिश कर रहा था कि पियानो ज्यादा जानदार साज़ है और गिटार पर "अ" फ़्लैट नहीं बज सकता। सरकारी अफ़सर एक कोने में बैठा चाय पी रहा था और चूंकि अब दिन चढ़ आया था, अपने भ्रष्टाचार पर लज्जित जान पड़ता था। जिप्सी अपनी भाषा मे एक दूसरे के साथ झगड़ और यह जिद्द कर रहे थे कि रईसों के सम्मान में एक गीत और गायें, मगर स्तेशा आपत्ति कर रही थी कि "बड़ोराय" (मतलब "काउंट" या "राजकुमार", ठीक ठीक अर्थ में "बड़ा रईस") नाराज होंगे। किस्सा यह कि नाच-रंग की टिमटिमाती लौ भी बुझने को थी।

"बस, विदाई का गीत और इसके बाद सब अपने अपने घर जाओ," सफ़री पोशाक पहने काउंट ने कमरे में क़दम रखते हुए कहा। वह पहले से भी ज्यादा ताज़ादम, ख़ूबसूरत और ख़ुश लग रहा था।

जिप्सी आख़िरी गीत गाने के लिए वृत्त बनाकर खड़े हो गये। उसी वक़्त इल्यीन, हाथों में नोटों का पुलिन्दा लिये अन्दर आया और काउंट को एक तरफ़ ले गया।

"मेरे पास फ़ौज के सिर्फ़ पन्द्रह हज़ार रूबल थे और तुमने मुझे सोलह हज़ार तीन सौ रूबल दे दिये हैं," उसने कहा, "यह बाक़ी रुपया तुम्हारा है।"

"ख़ूब! तो लाओ दे दो!"

इल्यीन ने पैसे दे दिये। फिर शर्माकर काउंट की तरफ़ देखा और कुछ कहने को हुआ, मगर मुंह से बोल नहीं निकले, खड़ा शर्माता रहा, यहां तक कि उसकी आंखों में आंसू आ गये और वह काउंट का हाथ अपने हाथ में लेकर दबाने लगा।

"अब तुम जाओ! और इल्यूश्का, सुनो! यह लो कुछ पैसे। तुम लोग गाते हुए मुझे शहर के फाटक तक छोड़ आओ," और उसने एक हज़ार तीन सौ रूबल, जो इल्यीन ने उसे दिये थे, जिप्सी की गिटार पर फेंक दिये। मगर एक सौ रूबल, जो उसने पिछली रात घुड़सेना के अफ़सर से उधार लिये थे, लौटाने का ख़्याल उसे नहीं आया।

सुबह के दस बज रहे थे। सूरज मकानों की छतों के ऊपर आ गया था, सड़कों पर लोगों की चहल-पहल शुरू हो गयी थी। दूकानदारों ने कब से दूकानों के दरवाज़े खोल दिये थे। कुलीन लोग और सरकारी कर्मचारी गाड़ियों में इधर-उधर आ जा रहे थे। स्त्रियां एक दूकान से दूसरी दूकान पर चहलकदमी करती हुई जा रही थीं। जिप्सियों की टोली, पुलिस-कप्तान, घुड़सेना का अफ़सर, सुन्दर युवक, इल्यीन और रीछ की खाल के अस्तर वाला नीला चोग़ा पहने काउंट बाहर होटल की सीढ़ियों पर आकर खड़े हो गये। धूप खिल रही थी और बर्फ़ पिघल रही थी। तीन बर्फ़-गाड़ियां होटल के दरवाजे पर आकर खड़ी हो गयीं। हरेक में तीन तीन घोड़े जुते थे और घोड़ों की पूंछें दोहरी करके बांध दी गयी थीं। हंसी-मजाक करते हुए सभी लोग उन पर सवार हो गये। पहली गाड़ी मे काउंट, इल्यीन, स्तेशा, इल्यूश्का और काउंट का नौकर साशा बैठ गये। काउंट का कुत्ता ब्लूहर बेहद उत्तेजित था। वह दुम हिलाता हुआ आया और बीच वाले घोड़े पर भूंकने लगा। जिप्सी और अन्य लोग दूसरी गाड़ियों में बैठ गये। होटल से गाड़ियां एक दूसरी के पीछे आ गयीं और जिप्सी मिलकर गाने लगे।

गीतों की गूंज और छोटी छोटी घण्टियों की टुनटुन के बीच यह मण्डली सारा शहर लांघती हुई बाहर, शहर के फाटक तक जा पहुंची। रास्ते में जो भी गाड़ी आयी उसे मजबूर होकर एक तरफ़, पटरी पर चढ़ जाना पड़ा।

दूकानदार और पैदल जाने वाले सभी लोग, विशेषकर वे लोग,

जो उनसे परिचित थे, हैरान हो रहे थे कि ये शरीफ़ घरानों के आदमी शराब के नशे में चूर गाती हुई जिप्सी लड़कियों और जिप्सी मर्दों को साथ लिये शहर की सड़कों पर दिन दहाड़े कैसे घूम रहे हैं।

शहर के फाटक से बाहर आकर गाड़ियां रुक गयीं। हरेक ने बारी बारी काउंट से विदा ली।

इल्योन ने चलने से पहले बहुत शराब पी ली थी और एक जाम हाथ में लिये था। वह सहसा उदास हो गया और काउंट से एक दिन और रुक जाने के लिए बार बार इसरार करने लगा। जब वह समझ गया कि यह नामुमकिन है तो रोते हुए अपने नये दोस्त के गले लगकर कसमें खाने लगा कि मैं अपनी फ़ौज में वापस लौटते ही अर्ज़ी दूंगा कि मेरा तबादला तुर्बीन की हुस्सार फ़ौज में कर दिया जाये। काउंट ख़ास तौर पर बड़े रंग में था। उसने घुड़सेना के अफ़सर को, जो सुबह से काउंट के साथ घनिष्ठता जताने की कोशिश कर रहा था, सड़क के किनारे लगे बर्फ़ के ढेर पर पटक दिया। पुलिस-कप्तान पर अपना कुत्ता छोड़ दिया। स्तेशा को बांहों में उठा लिया और धमकी दी कि मैं तुम्हें जबर्दस्ती मास्को ले जाऊंगा। आख़िर वह कूदकर बर्फ़-गाड़ी पर चढ़ गया और ब्लूहर को अपने साथ बिठा लिया, हालांकि ब्लूहर को खड़े रहना पसन्द था। साशा ने फिर एक बार घुड़सेना के अफ़सर से आग्रह किया कि काउंट के बड़े ओवरकोट का पता लगाकर ज़रूर भेज देना, फिर कोचवान की सीट पर जाकर बैठ गया। काउंट ने टोपी उतारी और हवा में हिलाते हुए बोला: "तो, हम चल दिये!" और कोचवान की तरह घोड़ों को टचकारा। तीनों बर्फ़-गाड़ियां अलग अलग दिशाओं में चल दीं।

दूर तक बर्फ़ से ढका मैदान फैला था और उदास उदास लग रहा था। उसके बीचोंबीच मैले फीते की तरह बल खाती हुई सड़क चली गयी थी। पिघलती बर्फ़ की ऊपरी सख़्त पपड़ी पर धूप ज़ोरों से चमक रही थी और पीठ और चेहरे पर सुखद गरमाहट का भास होता था। घोड़ों की पीठें पसीने से तर हो रही थीं और उन पर से भाप उड़ने लगी थी। बर्फ़-गाड़ी की घण्टी टुनटुना रही थी। एक किसान सामान से लदी स्लेज के साथ साथ भागा जा रहा था। लगाम की जगह उसने रस्सियां बांध रखी थीं। सहसा वह रस्सियां खींचने लगा ताकि काउंट की बर्फ़-गाड़ी बेरोक

निकल जाये। ऐसा करते हुए सड़क के किनारे खड़े पानी में उसके छाल के जूते भीग गये। एक और बर्फ़-गाड़ी पर भेड़ की खाल का कोट पहने और उसी में अपने छोटे से बच्चे को दुबकाये लाल लाल चेहरेवाली मोटी सी किसान औरत बैठी थी। वह लगाम के सिरे से घोड़े को बार बार पीट रही थी। सफ़ेद रंग का घोड़ा बड़ी धीमी रफ़्तार से चल रहा था। सहसा काउंट को आन्ना प्योदोरोव्ना की याद आ गया।

"वापस चलो!" उसने चिल्लाकर कहा।

कोचवान कुछ नहीं समझा।

"गाड़ी मोड़ो, वापस शहर को चलो! फ़ौरन!"

बर्फ़-गाड़ी ने फिर शहर का फाटक लांघा और तेज़ी से मैडम जाइत्सेवा के घर के सामने जा खड़ी हुई। काउंट उतरा, भागता हुआ लकड़ी की सीढ़ियां चढ़ गया और बड़े बड़े डग भरता हुआ ड्योढ़ी और बैठक लांघ गया। उसने देखा कि नन्ही विधवा अभी तक बिस्तर में है। लपककर उसने उसे बांहों में भर लिया, ऊपर उठाया, उसकी उनींदी आंखों को चूमा और बाहर भाग गया। आन्ना प्योदोरोव्ना उस समय औंधा-नींदी में थी। वह केवल अपने होंठों पर जबान ही फेर पायी और इतना भर गुनगुनायी: "हुआ क्या है?"

काउंट कूदकर बर्फ़-गाड़ी पर चढ़ गया, कोचवान से चल देने को कहा और बिना रुके या लुख़नोव या नन्ही विधवा या स्तेशा के बारे में तनिक भी सोचे सदा के लिए क० नगर से चला गया। उस वक़्त वह केवल मास्को के बारे में सोच रहा था कि वहां क्या होने वाला है।

(६)

बीस वर्ष बीत चुके हैं। तब से अब तक बहुत कुछ हो चुका है। बहुत से लोग मर-खप गये हैं, कइयों ने जन्म लिया है, कई बड़े हुए हैं या बूढ़ा गये हैं, संख्या के नाते व्यक्तियों से भी अधिक विचार पैदा हुए हैं और मर गये हैं। उन गये दिनों का बहुत कुछ बुरा और बहुत कुछ अच्छा ख़त्म हो गया है, कई नयी अच्छी बातें पनपी हैं और इनसे भी अधिक कई नयी बुराइयां पैदा हो गयी हैं।

काउंट फ़्योदोर तुर्बीन को मरे कितने ही बरस बीत चुके हैं। वह किसी परदेसी के हाथों, जिसे उसने सड़क पर चाबुक से पीटा था, द्वन्द्व-युद्ध में मारा गया था। काउंट तुर्बीन का बेटा, बिल्कुल अपने बाप की तस्वीर है। वह २३ वर्ष का ख़ूबसूरत जवान है और घुड़सेना में अफ़सर है। पर छोटा तुर्बीन स्वभाव में अपने बाप से बिल्कुल भिन्न है। उसमें पिछली पीढ़ी के लोगों के विशेष गुण, उनका अल्हड़पन, उनकी मस्ती और अगर साफ़ साफ़ कहें, तो उनकी विलासिता लेश मात्र भी नहीं है। कुशाग्रबुद्धि है, सुशिक्षित है, प्रतिभासम्पन्न है। इन गुणों के अलावा उसमें कुछेक विशिष्ट गुण हैं – शिष्टता और आराम की ज़िन्दगी से मोह, लोगों और परिस्थितियों को व्यावहारिक स्तर पर जांचना-परखना और जीवन के प्रति एक सतर्क विवेकशील दृष्टिकोण। नौकरी में छोटे काउंट ने बड़ी जल्दी तरक़्क़ी की है। २३ साल की ही उम्र में वह लेफ़्टिनेंट बन गया है। फ़ौजी मुहिम शुरू होते ही उसने निश्चय कर लिया कि मोर्चे पर जाने से उसे फ़ौज में तरक़्क़ी जल्दी मिलेगी। इसलिए उसने अपना तबादला हुस्सारों की फ़ौज में करवा लिया। यहां वह कप्तान के पद पर काम करता रहा। फिर जल्दी ही उसे एक स्क्वाड्रन की कमान सौंप दी गयी।

१८४८ के मई महीने में हुस्सारों की स० रेजीमेंट क० गुबेर्निया में से गुज़र रही थी। छोटे काउंट तुर्बीन के स्क्वाड्रन को मोरोज़ोव्का गांव में रात बितानी थी। अन्ना फ़्योदोरोव्ना इस गांव की मालकिन थी। अन्ना फ़्योदोरोव्ना अब भी जीवित थी और उम्र में बड़ी हो चुकी थी, यहां तक कि अब वह अपने को जवान भी नहीं मानती थी, जो स्त्रियों के लिए बहुत महत्व की बात है। शरीर मोटा हो गया था। कहते हैं, मोटी होने से स्त्री उम्र में और भी छोटी लगने लगती है। पर उसके गोरे मोटे शरीर पर गहरी झुर्रियों का जाल बिछने लगा था। अब वह गाड़ी में बैठकर कभी भी शहर नहीं जाती थी। सच तो यह है कि उसके लिए गाड़ी पर चढ़ना भी मुश्किल हो गया था। पर अब भी वह पहले जैसी हंसोड़ तबीयत और बेवकूफ़ थी। अब चेहरे की लुनाई उसकी मूढ़ता को छिपा नहीं सकती थी। उसकी बेटी लीज़ा और भाई उसके साथ रहते थे। उसके भाई से हम परिचित हैं। यह वही घुड़सेना का अफ़सर था। बेटी २३ वर्ष की हो चली थी और ठेठ रूसी देहाती सुन्दरी थी। आराम-तलब तबीयत के कारण भाई अपनी सारी विरासत लुटा चुका था और अब बुढ़ापे में उसने बहन के घर

में पनाह ली थी। सिर के बाल बिल्कुल सफेद हो चुके थे, ऊपर का होंठ अन्दर की ओर मुड़ गया था। पर मूंछों को उसने वस्मा लगाकर काला कर रखा था। केवल गालों और माथे पर ही नहीं, बल्कि उसकी नाक और गले पर भी झुर्रियां अपना जाल बिछाये थीं। पीठ झुक गयी थी, पर फिर भी टेढ़ी और शिथिल टांगों में पहले के घुड़सेना के अफ़सर की कुछ कुछ लोच बाकी थी।

जिस दिन का हम जिक्र कर रहे हैं, उस रोज आन्ना फ्योदोरोव्ना अपने पुराने घर की छोटी सी बैठक में सारे परिवार के साथ बैठी थी। घर के बरामदे का दरवाजा और खिड़कियां पुराने ढंग के बाग़ में खुली हुई थीं। बाग का आकार सितारे की शक्ल का था और उसमें लाइम के पेड़ लगे थे। आन्ना फ्योदोरोव्ना के बाल पक गये थे। वह हल्के बैंगनी रंग की दगली जैकेट पहने, सोफे पर बैठी महोगनी लकड़ी की मेज़ पर ताश बिछा रही थी। बूढ़ा भाई नीला कोट और साफ़ सफेद पतलून पहने, हाथ में सफ़ेद धागा और सलाइयां लिये खिड़की के पास बैठा कोई जाली सी बुन रहा था। यह हुनर उसे उसकी भांजी ने सिखा दिया था। अब इस काम में उसकी दिलचस्पी खूब बढ़ गयी थी। उसमें कोई उपयोगी काम करने की योग्यता नहीं रह गयी थी। बीनाई कमज़ोर पड़ गयी थी, इस कारण वह अख़बार तक नहीं पढ़ सकता था, हालांकि अख़बार पढ़ने का उसे बहुत शौक था। पीमोच्का नाम की एक छोटी सी लड़की उसके पास बैठी थी और लीजा की देख-रेख में अपना सबक़ तैयार कर रही थी। इस लड़की को आन्ना फ्योदोरोव्ना ने गोद ले रखा था। लीजा लकड़ी की सिलाइयों से मामा जी के लिए बकरी की ऊन के मोजे बुन रही थी। दिन ढल रहा था। डूबते सूरज की तिरछी किरनें लाइम के पेड़ों में से छन रही थीं। आख़िरी खिड़की का शीशा और उसके पास रखा किताबदान चमक रहे थे। बाग और कमरे, दोनों में ऐसी निस्तब्धता थी कि बाग में जब कभी अबाबील पर फड़फड़ाती या आन्ना फ्योदोरोव्ना गहरी सांस लेती, या उसका बूढ़ा भाई टांग पर टांग रखते समय बड़बड़ाता तो यह सब भी सुनाई पड़ता।

"लीजा, मेरी बच्ची, ज़रा बताना तो कि यह पत्ता कहां पर रखूं, मैं बार बार भूल जाती हूं," आन्ना फ्योदोरोव्ना ने अपना खेल तनिक रोककर कहा।

लीज़ा उसी तरह बुनते बुनते मां के पास जा खड़ी हुई और पत्तों पर एक नज़र डाली।

"ओह्, तुमने तो सब गड़बड़ कर दिया, मां!" उसने कहा और पत्तों को फिर से ठीक करके रखने लगी। "यह तो यों होना चाहिए। लेकिन कोई बात नहीं, तुम्हारा अनुमान भी ठीक था, तुम्हारी इच्छा पूरी हो जायेगी।" और मां की नज़र बचाकर उसने चुपके से एक पत्ता हटा दिया।

"तुम हमेशा मुझे बनाती रहती हो, हमेशा यही कहती रहती हो कि मैं ठीक खेल रही हूं।"

"ठीक ही तो कहती हूं, मां। देखो? निकल आया कि नहीं ठीक पत्ता?"

"अच्छा, अच्छा, शैतान कहीं की। तो क्या अब चाय न पी जाये?"

"मैंने समावार गरम करने के लिए पहले से ही कह दिया है। जाकर देखती हूं। क्या चाय यहां मंगवाऊं? पीमोच्का, अपना सबक़ जल्दी जल्दी ख़त्म करो, फिर हम दोनों घूमने चलेंगे।"

यह कहकर लीज़ा दरवाज़े से बाहर निकल गयी।

"लीज़ा, लीज़ोच्का!" लीज़ा के मामा ने पुकारा। उसकी आंखें अब भी जाली पर जमी थीं। "फिर एक फंदा गिर गया जान पड़ता है। ज़रा आकर ठीक कर दो तो बेटी।"

"अभी आती हूं, अभी। मैं उन्हें शक्कर का ढेला तोड़ने के लिए दे आऊं।" लीज़ा ने ठीक ही कहा था। तीन ही मिनट में वह भागती हुई कमरे में लौट आयी और सीधी मामा के पास जाकर उसका कान पकड़ लिया।

"फंदे गिरायेंगे तो आपको यही सज़ा मिलेगी," वह हंसते हुए बोली, "आज का सबक़ भी आपने पूरा नहीं किया।"

"बस, बस, इसे ठीक कर दो। मालूम होता है कहीं गांठ पड़ गयी है।"

लीज़ा ने सलाइयां हाथ में लीं, सिर पर बंधे रूमाल में से पिन खींचकर निकाला, दो-तीन बार फंदे को उठाकर अपनी जगह पर ले आयी और जाली मामा के हाथ में दे दी। खिड़की में से हवा के झोंके आ रहे थे और इसलिए पिन निकालने से लीज़ा के सिर पर का रूमाल फूल उठा था।

"मेरा मेहनताना लाइये," रूमाल में पिन खोंसते हुए उसने कहा

ग्रौर ग्रपना गोरा गुलाबी गाल मामा के सामने कर दिया ताकि वह उसे चूमे। "ग्राज चाय के साथ ग्रापको रम मिलेगी। ग्राज शुक्रवार है, मालूम है न?"

वह फिर लौटकर चाय वाले कमरे में चली गयी।

"ग्राम्रो, मामा जी ग्राम्रो, देखो, हुस्सार ग्रा रहे हैं!" उसने स्पष्ट, ऊंची ग्रावाज़ में पुकारा।

ग्रान्ना प्योदोरोव्ना ग्रौर उसका भाई चाय वाले कमरे में पहुंचे। कमरे की खिड़कियां ऐन गांव के सामने खुलती थीं। खिड़कियों मे से बहुत कम दिखाई पड़ता था। धूल के बवण्डर उड़ रहे थे ग्रौर उनमें केवल एक भीड़ सी जाती दिखाई दे रही थी।

लीज़ा का मामा ग्रान्ना प्योदोरोव्ना से बोला:

"बड़े ग्रफसोस की बात है कि हमारा घर इतना छोटा है ग्रौर नये कमरे ग्रभी तक बनकर तैयार नहीं हुए, वरना हम कुछ ग्रफसरों को ग्रपने यहां ठहरने के लिए बुला लेते। हुस्सार ग्रफ़सर बड़े ख़ुशमिज़ाज जवान होते हैं। मुझे तो उनसे मिलने की बड़ी इच्छा होती है।"

"मुझे भी उन्हें ग्रपने यहां ठहराने में बड़ी ख़ुशी होती, भय्या, पर ठहराने के लिए हमारे पास जगह ही कहां है? एक मेरा सोने वाला कमरा है, एक छोटा कमरा लीज़ा के पास है, एक बैठक ग्रौर एक तुम्हारा कमरा, बस। हम उन्हें ठहरा कहां सकते हैं? ख़ुद ही सोचो। मिख़ाईल मत्वेयेव ने गांव के मुखिया का बंगला उनके लिए ठीक करवा दिया है। वह कहता है कि वह भी साफ़-सुथरा है।"

"लीज़ोच्का, हम उन्हीं हुस्सारों में से तुम्हारे लिए वर चुनेंगे, कोई ख़ूबसूरत सा हुस्सार युवक," मामा ने कहा।

"मैं हुस्सार नहीं चाहती, मुझे उलहन ज्यादा ग्रच्छे लगते हैं। ग्राप उलहन फ़ौज में ही थे न, मामा जी? मैं तो उन हुस्सारों को दूर से भी नहीं देखूंगी, लोग कहते हैं ये बड़े ग्रल्हड़ तबीयत के होते हैं।"

लीज़ा के गालों पर हल्की सी लाली दौड़ गयी ग्रौर फिर से उसकी टनटनाती हंसी गूंज उठी:

"लीजिये, वह ऊस्त्युश्का दौड़ी चली ग्रा रही है, उससे पूछें कि क्या देखकर ग्रायी है," उसने कहा।

ग्रान्ना प्योदोरोव्ना ने ऊस्त्युश्का को बुला भेजा।

"तुम्हें घर में कोई काम नहीं जो यों फ़ौजियों को देखने फिरती हो," आन्ना पयोदोरोव्ना ने कहा, "बताओ, अफ़सरों के का क्या इन्तज़ाम किया गया है?"

"प्रेरेम्किन के बंगले में ठहरेंगे। दो अफ़सर हैं, मालकिन, दोनों बेहद सुन्दर हैं। कहते हैं कि उनमें से एक काउंट है।"

"नाम क्या है?"

"कज़ारोव या तुर्बीनोव, या कुछ ऐसा ही। मुझे ठीक से याद नहीं।"

"तुम तो निरी बुद्धू हो, कुछ भी नहीं बता सकतीं। कम से उसका नाम तो मालूम किया होता।"

"आप कहें तो मैं अभी भागकर पूछ आऊं?"

"हां, क्यों नहीं, यह करने में तो तुम बड़ी होशियार हो, मैं खूब जानती हूं। नहीं, घर में बैठो, अब की बार दनीलो जायेगा। भय्या, उसे भेज दो, और कहना पूछकर आये कि अफ़सरों को किसी चीज़ की ज़रूरत तो नहीं? हमें उनकी पूरी पूरी ख़ातिरदारी करनी चाहिए। और उसे कहना कि वहां जाकर कहे कि मालकिन ने भेजा है।"

बुढ़िया और उसका भाई फिर से चाय के कमरे में जा बैठे। लीज़ा नौकरानियों के कमरे में शक्कर रखने चली गयी। वहां पर भी ऊस्त्युश्का हुस्सारों की ही बातें कर रही थी।

"ओह, छोटी मालकिन, क्या बताऊं तुम्हें, काउंट कितना सुन्दर है!" वह कहने लगी, "बिल्कुल जैसे कोई फ़रिश्ता हो। काली काली भवें, अगर तुम्हें ऐसा पति मिल जाये तो कितनी सुन्दर जोड़ी बने, क्यों?"

अन्य नौकरानियों ने मुस्कराकर हामी भरी। बूढ़ी धाय खिड़की के पास बैठी मोज़ा बुन रही थी। उसने गहरी सांस ली और उसी खिंची सांस में प्रार्थना के शब्द बुदबुदाने लगी।

"तो हुस्सारों के बारे में यही कुछ देखकर आयी हो!" लीज़ा बोली, "नमक-मिर्च लगाकर बातें करने में तो तुम उस्ताद हो। ऊस्त्युश्का, जाकर फलों का रस ले आओ। कुछ कुछ खट्टा होना चाहिए, जो हुस्सारों को पसन्द आये।"

इसके बाद लीज़ा शक्करदानी उठाये, हंसती हुई, बाहर निकल गयी।

"मैं भी उस हुस्सार को देखना चाहती हूं, जाने कैसा है," यह सोचने लगी, "सुनहरे बालों वाला है या काले बालों वाला? निश्चय ही उसे हम लोगों से मी मिलकर ख़ुशी होगी। पर शायद वह यहां से चला जायेगा और उसे मालूम तक न हो पायेगा कि यहां कोई ऐसी लड़की थी, जो उसके बारे में सोचती रही थी। अब तक कितने ही युवक यहां आये और चले गये। मामा जी और ऊस्त्युश्का के सिवा मुझे कोई देखनेवाला ही नहीं है। क्या फ़र्क़ पड़ता है कि मेरे बाल किस ढंग से बने हैं, या मेरे फ़्रॉक की आस्तीनें किस काट की हैं, मेरी तारीफ़ करने वाला तो यहां कोई है ही नहीं।" अपनी गोल गोल बांहों की ओर देखते हुए उसने ठण्डी सांस भरी और सोचने लगी: "वह क़द का ऊंचा-लम्बा होगा, बड़ी बड़ी आंखें होंगी, शायद पतली सी काली मूंछ होगी। मैं बाईस बरस की हो चली, लेकिन चेचकरू इवान इपातिच के सिवा अभी तक किसी को मुझसे प्रेम नहीं हुआ। चार साल पहले तो मैं और भी ज्यादा ख़ूबसूरत हुआ करती थी। लड़की तो अब मैं रही ही नहीं। सारा लड़कपन बीत गया और मैं किसी का मन नहीं रिझा पायी। उफ़, मेरी किस्मत ही खोटी है। मैं तो बस, बदनसीब देहातिन हूं!"

मां ने आवाज़ दी। लीज़ा के विचारों की शृंखला टूट गयी। मां उसे चाय ढालने के लिए बुला रही थी। लीज़ा सिर झटककर चाय वाले कमरे में चली गयी।

अचानक घटने वाली घटनाएं ही सब से अच्छी होती हैं। किसी चीज़ को पाने के लिए हम जितनी ही अधिक कोशिश करते हैं, परिणाम उतना ही बुरा निकलता है। देहात में बच्चों की शिक्षा की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। इसलिए अधिकांश स्थितियों में उन्हें जो शिक्षा मिलती है, वह अद्भुत होती है। लीज़ा के साथ भी यही हुआ। आन्ना फ़्योदोरोव्ना का दिमाग़ छोटा था और स्वभाव अत्यन्त आलसी। लीज़ा को किसी प्रकार की शिक्षा भी वह नहीं दे पायी। न संगीत सिखाया, न फ़्रांसीसी भाषा— जिसका सीखना बहुत उपयोगी माना जाता है। मां-बाप को उम्मीद भी न थी कि बच्ची इतनी स्वस्थ और सुन्दर निकलेगी। आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने उसे एक धाय के सुपुर्द कर दिया, जो इसकी देख-भाल करती थी। धाय ही उसे खाना खिलाती, उसे गाढ़े के फ़्रॉक और बकरी की खाल के जूते पहनाती, बाहर घुमाने ले जाती, जहां बच्ची रसभरियां और खुमियां इकट्ठी

करती फिरती। एक युवा विद्यार्थी उसे पढ़ना-लिखना और गणित सिखाने आता। इसी तरह सोलह साल बीत गये। तब अचानक आन्ना पयोदोरोव्ना ने देखा कि लीजा तो बड़ी खिली तबीयत की, मिलनसार और मेहनती लड़की निकल आयी है और एक सहेली का ही नहीं, बल्कि छोटी सी घर-मालकिन का भी स्थान लेने लगी है। आन्ना पयोदोरोव्ना स्वयं बड़ी दयालु स्वभाव की थी। हमेशा किसी बन्धक-दास के बच्चे या किसी पितृहीन बालक को गोद लिये रहती थी। लीजा दस बरस की उम्र से ही इन गोद लिये बच्चों की देख-भाल करने लगी थी। वह उन्हें वर्णमाला सिखाती, कपड़े पहनाती, गिरजे में ले जाती, शरारत करते तो डांटती, सजा देती। फिर घर में लीजा का बूढ़ा मामा आकर रहने लगा। दुबला-पतला पर नेकदिल आदमी। लीजा को एक बच्चे की तरह उसकी देख-भाल भी करनी पड़ती। इसके अलावा घर के नौकर-चाकर और गांव के बंधक-दास भी अपना दुखड़ा रोने इसके पास आते। कोई बीमार होता, किसी को कहीं दर्द होता। यह उन्हें इलाज के लिए एल्डर के फूलों का रस, पेपरमिन्ट और कपूर का सत देती। साथ ही सारे घर का प्रबन्ध करती। घर की सारी जिम्मेवारी अचानक ही उसके कंधों पर आ पड़ी थी। उधर प्रेम की लालसा भी हृदय मे दबी पड़ी थी, जो प्रकृति-प्रेम तथा धर्म-कर्म में व्यक्त होती थी। इस तरह लीजा, अचानक ही, एक व्यस्त, हंसमुख, स्वावलम्बी, मिलनसार, मन की उजली तथा धर्मानुरक्त लड़की निकल आयी। हां, जब कभी गिरजे में पड़ोसियों को नये चलन की टोपियां पहने देखती, जिन्हें वे क० नगर से लायी होतीं, तो लीजा के हृदय में ईर्ष्या की टीस उठती। मां बूढ़ी थी और झगड़ालू भी, उसकी सनकें लीजा को रुलाकर छोड़तीं। प्रेम के उसके स्वप्न कभी कभी अटपटे और बेडौल से होते। पर घर के काम-काज में वे स्वप्न खो जाते। वह दिन भर व्यस्त रहती। यह काम उसके लिए परमावश्यक हो गया था। अब बाईस वर्ष की अवस्था में, शारीरिक तथा नैतिक सौन्दर्य से सम्पन्न इस विकासोन्मुख युवती की आत्मा पर एक भी धब्बा, पश्चात्ताप का एक भी चिन्ह न था, जो इसकी दीप्ति और शान्ति को कम करता। लीजा मंझले क़द की थी, कुछ कुछ गदरायी हुई। नाक-नक़्श तीखे नहीं थे। आंखें बादामी और बहुत बड़ी नहीं थीं, निचली पलकों के नीचे तनिक काली आभा लिये; बाल लम्बे और सुनहरे थे। जब चलती तो खुले डग भरती हुई, झूमकर। जब वह व्यस्त होती और उसके मन

को यही कहता जान पड़ता : जिनकी अन्तरात्मा साफ़ है और जिनके हृदय में किसी के प्रति प्रेम है, उनके लिए जीवन सुखमय वरदान है। ऐसे समय में भी, जब किसी क्लेश या क्रोध, घबराहट या दुःख के कारण उसका मन विक्षुब्ध होता, आंखें बरबस भर आतीं, होंठ स्थिर हो जाते और दाईं आंख के ऊपर की भौंह सिकुड़ जाती – उस समय अनचाहे ही किसी भी प्रकार की कृत्रिमता से अस्पृश्य उसके दयालु और निष्कपट हृदय की ज्योति उसके गालों के गढ़ों, उसके होंठों के कोनों और उसकी चमकती आंखों मे झलकती रहती।

(१०)

जिस समय घुड़सेना की टुकड़ी मोरोज़ोव्का गांव में दाख़िल हुई उस समय सूरज डूब चुका था, मगर हवा में अभी गरमी थी। गांव की गर्द भरी सड़क पर एक चितकबरी गाय, जो झुंड से अलग हो गयी थी, टुकड़ी के आगे आगे भागी चली जा रही थी। किसी किसी वक़्त यह रुकती और रंभाने लगती। वह यह नहीं समझ पा रही थी कि घोड़ों के सामने से हटने के लिए केवल रास्ता छोड़ देना काफ़ी है। बूढ़े किसान, गांव की स्त्रियां और बच्चे हुस्सारों को देखने के लिए सड़क के दोनों तरफ़ भीड़ लगाये खड़े थे। हुस्सार काले हिनहिनाते घोड़ों पर सवार, हाथों में छोटी छोटी लगामें थामे, गर्द के बादल में से बढ़े चले आ रहे थे। टुकड़ी के दाईं ओर दो अफ़सर सुन्दर मुश्की घोड़ों पर शिथिल से बैठे थे। उनमें से एक काउंट तुर्बीन था। वह कमाण्डर था। दूसरा पोलोज़ोव नाम का एक युवक था, जिसकी हाल ही में नियुक्ति हुई थी।

गांव के सब से बढ़िया बंगले में से सफ़ेद कोट पहने एक हुस्सार निकला और सिर पर से फ़ौजी टोपी उतारकर सीधा अफ़सरों के पास गया।

"रहने का क्या इन्तज़ाम हुआ है?" काउंट ने उससे पूछा।

"हुज़ूर के लिए?" सेना के पड़ाव-प्रबन्धक ने कहा। वह बिल्कुल तनकर खड़ा था। "आपके लिए हमने गांव के मुखिया का यह बंगला साफ करवा दिया है। ज़मींदार के घर में हमने एक कमरा तलब किया, मगर वह नहीं मिला। मालकिन कमीनी सी औरत है।"

"अच्छी बात है," काउंट ने घोड़े पर से उतरकर टांगें सीधी करते हुए कहा और मुखिया के बंगले की तरफ़ चल दिया। "मेरी गाड़ी आ गयी?"

"जी हां," पड़ाव-प्रबंधक ने अपनी टोपी से फाटक के सामने खड़ी गाड़ी की ओर इशारा करते हुए जवाब दिया और बंगले के दरवाज़े की ओर आगे आगे भागने लगा। दरवाज़े पर एक किसान-परिवार अफ़सरों को देखने के लिए भीड़ लगाये खड़ा था। उसने झटके से फाटक खोला। एक बूढ़ी औरत गिरते गिरते बची। फिर एक तरफ़ को हटकर प्रबन्धक खड़ा हो गया ताकि काउंट अभी अभी धोकर साफ़ किये गये बंगले में आ सके।

बंगला बड़ा और खुला था, लेकिन बहुत साफ़ नहीं था। एक जर्मन अर्दली लोहे का पलंग बिछाकर अब सफ़री बैग में से बिस्तर के कपड़े निकाल रहा था।

"उफ़, कितनी गन्दी जगह है!" काउंट ने खीझकर कहा। "द्यादेंको, क्या जमींदार के घर में पड़े रहने के लिए थोड़ी सी भी जगह नहीं मिल सकती?"

"हुज़ूर हुक्म देंगे तो मैं अभी जाऊंगा और जमींदार का घर ख़ाली करवा लूंगा," द्यादेंको ने जवाब दिया, "पर जनाब, जमींदार का घर भी बहुत मामूली सा है, इस बंगले से ज़्यादा अच्छा नहीं है।"

"अब बहुत देर हो गयी है। तुम जाओ।"

और काउंट दोनों हाथ सिर के नीचे रख कर बिस्तर पर लेट गया।

"जोहान्न!" उसने अपने अर्दली को पुकारा, "यह फिर तुमने बिस्तर के बीच मे गांठ सी क्या रहने दी है? क्या बात है? क्या तुम बिस्तर भी ठीक तरह से नहीं बना सकते?"

जोहान्न उसे ठीक करने के लिए आगे बढ़ा।

"रहने दो अब, बहुत देर हो गयी है। मेरा ड्रेसिंग गाउन कहां है?"

अर्दली ड्रेसिंग गाउन लाया।

पहनने से पहले काउंट ने उसके किनारे को ध्यान से देखा।

"मुझे पहले ही मालूम था। तुमने यह धब्बा साफ नहीं किया। मैं नहीं जानता कि तुमसे ज़्यादा निकम्मा नौकर भी किसी के पल्ले पड़ सकता

है।" और अर्दली के हाथ से गाउन छीनकर ख़ुद ही पहनने लगा। "क्या जान-बूझकर ऐसा करते हो? बात क्या है? चाय तैयार है?"

"मुझे वक़्त ही नहीं मिला, हुज़ूर।"

"गधा कहीं का!"

इसके बाद काउंट ने एक फ़ांसीसी उपन्यास हाथ में लिया, जिसे ऐसे मौकों के लिए यह साथ रखता था, और काफ़ी देर तक चुपचाप लेटकर पढ़ता रहा। जोहान्न बाहर दरवाज़े के पास समावार गरम करने के लिए चला गया। ज़ाहिर है कि काउंट का पारा चढ़ा हुआ था। वह थका-हारा और धूल-मिट्टी के कारण गन्दा था, कपड़े कसे हुए थे और पेट ख़ाली था।

"जोहान्न!" उसने फिर पुकारा, "इधर आओ और दस रूबल का हिसाब दो, जो मैंने तुम्हें दिये थे। शहर में क्या क्या ख़रीदा था?"

हिसाब के पुर्ज़े पर काउंट नज़र दौड़ाने लगा और चीज़ों की महंगाई के बारे में कुछ बड़बड़ाया।

"मैं चाय के साथ रम पीऊंगा।"

"मैंने रम तो नहीं ख़रीदी।"

"ख़ूब! कितनी बार मैंने तुमसे कहा है कि रम साथ रखा करो!"

"मेरे पास काफ़ी पैसे नहीं थे।"

"मगर पोलोज़ोव ने भी क्यों नहीं ख़रीदी? तुम उसी के आदमी से ले लेते।"

"कोरनेट पोलोज़ोव ने? मुझे मालूम नहीं। उसने सिर्फ़ चाय और चीनी ख़रीदी थी।"

"नालायक!.. जाओ यहां से!.. तुम हमेशा ही मुझे परेशान कर देते हो... तुम्हें अच्छी तरह मालूम है कि कूच के दौरान मैं चाय के साथ रम पीना पसन्द करता हूं।"

"ये दो चिट्ठियां सदर मुकाम से हुज़ूर के नाम आयी हैं," अर्दली ने कहा।

काउंट ने बिस्तर पर लेटे लेटे चिट्ठियां खोलीं और पढ़ने लगा। ऐन इसी वक़्त कोरनेट अन्दर दाख़िल हुआ, जो सिपाहियों को उनके ठिकाने तक पहुंचाने गया था। उसका चेहरा खिल रहा था।

"कहो तुर्बीन, यह जगह तो कुछ बुरी नहीं है। पर मैं थककर चूर हो गया हूं। दिन भर बहुत गरमी रही।"

"बुरी नहीं है! गन्दी, बदबूदार झोंपड़ी है यह और तुम्हारी मेहरबानी से चाय के साथ पीने को रम भी नहीं है। तुम्हारा पाजी नौकर ख़रीदना भूल गया और मेरा आदमी भी। तुमने अपने आदमी को तो कह दिया होता।"

वह फिर चिट्ठियां पढ़ने लगा। पहला ख़त पढ़ चुकने के बाद उसने उसे मरोड़कर फ़र्श पर फेंक दिया।

इस बीच कोरनेट ने दरवाज़े के पास अपने नौकर के कान में फुसफुसाकर पूछा :

"तुमने रम क्यों नहीं ख़रीदी? पैसे तो थे तुम्हारे पास?"

"हम ही क्यों सब चीज़ें ख़रीदा करें? सब ख़र्च यों भी मैं ही करता हूं। उस जर्मन को तो बस पाइप पीने के अलावा कोई काम ही नहीं।"

दूसरा ख़त, ज़ाहिर है, अरुचिकर नहीं था, क्योंकि काउंट उसे पढ़ते हुए मुस्करा रहा था।

"किसका है?" पोलोज़ोव ने पूछा। वह कमरे में लौट आया था और अंगीठी के पास तख़्ते पर अपना बिस्तर बिछा रहा था।

"मिना का," काउंट ने ख़ुशी ख़ुशी जवाब दिया और ख़त आगे बढ़ा दिया, "पढ़ना चाहते हो? कमाल की लड़की है! हमारी लड़कियों से बहुत अच्छी है! ज़रा पढ़के देखो इस ख़त में कितनी सूझ-बूझ और भावनाएं हैं। बस, एक ही बात उसमें बुरी है—वह पैसे मांगती है।"

"हां, यह बुरी बात है," कोरनेट ने कहा।

"मैंने उसे कुछ पैसे देने का वादा किया था, पर तभी हम लोग इस कूच पर निकल आये... हां, फिर... अगर टुकड़ी की कमान मेरे हाथ में तीन महीने तक रही तो मैं उसे कुछ न कुछ भेज दूंगा। मुझे पैसे देने से बिल्कुल इन्कार नहीं। अच्छी लड़की है न, क्यों?" उसने मुस्कराते हुए और पोलोज़ोव के चेहरे का भाव पढ़ते हुए पूछा।

"बिल्कुल अनपढ़, मगर प्यारी है। लगता है तुम्हें सचमुच प्यार करती है," कोरनेट ने कहा।

"हां, अगर प्यार करे तो! उस जैसी लड़कियों का ही प्यार सच्चा होता है।"

"और दूसरा ख़त कहां से आया है?" कोरनेट ने ख़त लौटाते हुए पूछा।

"ओह, यह? एक आदमी है, बेहूदा सा, जिससे मैं जुए में कुछ पैसे हार गया था। तीसरी बार मुझसे पैसे मांग रहा है... इस वक़्त तो मैं उसे कुछ नहीं दे सकता... कैसी फ़िज़ूल सी चिट्ठी है!" काउंट ने कहा। उस घटना को याद करके वह क्रुद्ध हो उठा था।

इसके बाद दोनों अफ़सर कुछ देर तक चुप रहे। कोरनेट काउंट को बहुत मानता था। काउंट की मनःस्थिति को देखते हुए वह भी चुपचाप चाय पीता रहा। बातचीत करने से घबराता था। किसी किसी वक़्त वह तुर्बीन के सुन्दर चेहरे की तरफ़ नज़र उठाकर देख भर लेता। तुर्बीन किसी विचार में खोया हुआ बराबर खिड़की से बाहर देखे जा रहा था।

"हो सकता है सब कुछ ठीक-ठाक हो जाये," सहसा काउंट ने सिर झटका और पोलोज़ोव की ओर देखते हुए कहा, "अगर हमारी रेजीमेंट में इस साल तरक़्क़ियां हुईं और अगर साथ ही हमें फौजी कार्यवाही पर भी भेजा गया, तो मुमकिन है कि मैं अपने साथियों से आगे निकल जाऊं। वे इस वक़्त गार्ड के कप्तान हैं।"

चाय का दूसरा दौर शुरू हुआ। इसमें भी इसी तरह के विषयों पर वार्तालाप चलता रहा। इसी वक़्त अन्ना प़्योदोरोव्ना का सन्देश लेकर दनीलो आ पहुंचा।

"मालकिन जानना चाहती हैं कि हुज़ूर काउंट प़्योदोर इवानोविच तुर्बीन के सुपुत्र तो नहीं हैं?" अपनी ओर से जोड़ते हुए दनीलो ने पूछा, क्योंकि उसने अफ़सर का नाम सुन रखा था और स्वर्गीय काउंट के क० नगर में आ ठहरने के बारे में भी जानता था। "हमारी मालकिन अन्ना प़्योदोरोव्ना उन्हें बहुत अच्छी तरह जानती थीं।"

"वह मेरे पिता थे। अपनी मालकिन से कहो कि हम उनके बहुत आभारी हैं कि उन्होंने हमारी सुध ली। हमें किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं, हां, उन्हें इतना कहना कि अगर हमें अपनी कोठी में या कहीं और रहने के लिए साफ़ सा कमरा दिला सकें तो हम बहुत आभार मानेंगे।"

"तुमने यह क्यों कहा?" दनीलो के चले जाने पर पोलोज़ोव ने पूछा। "क्या फ़र्क पड़ता है? हमें एक ही रात तो यहां रहना है, इसके लिए हम क्यों उन्हें परेशान करें?"

"तुम भी ख़ूब हो! मुर्ग़ी-ख़ानों में सो सोकर तुम्हारा जी नहीं भरा? तुममें व्यावहारिक सूझ तो नाम को भी नहीं। अगर एक रात भी हम कहीं

आराम में सो सकें, तो क्यों न ऐसे मौके का फायदा उठाया जाये? वे तो इसे अपना मान समझेंगे।

"बस एक बात मुझे पसन्द नहीं कि यह औरत मेरे पिता को जानती थी," धीरे से मुस्कराते हुए काउंट ने कहा। उसके दांत चमक रहे थे। "जब कभी मुझे अपने पिता की याद आता है तो बड़ी शर्म महसूस होती है। कहीं बदनामी और कहीं क़र्ज़, यही कहानियां सुनने को मिलती हैं। इसी लिए मैं उनके पुराने परिचितों से कन्नी काटता हूं। पर वह ज़माना ही ऐसा था," उसने गम्भीरता से कहा।

"मैं तुम्हें एक बात बताना भूल गया," पोलोज़ोव बोला, "मुझे एक बार उल्हन ब्रिगेड का एक कमांडर मिला था। उसका नाम इल्यीन था। वह तुमसे बहुत मिलना चाहता था। तुम्हारे पिता का तो वह बड़ा आदर करता था।"

"वह इल्यीन ख़ुद कोई निकम्मा आदमी रहा होगा। बात यह है कि जो सज्जन मेरे साथ घनिष्ठता बढ़ाने के लिए यह दावा करते हैं कि वे मेरे पिता के मित्र थे, वही मुझे ऐसी कहानियां सुनाते हैं, जिन्हें सुनकर मैं शर्म से गड़ जाता हूं, हालांकि वे उन्हें चुटकुलों की तरह सुनाते हैं। मैं हर बात को ठण्डे दिल से, उसकी असलीयत में जाकर देखता हूं। मैं समझता हूं कि मेरे पिता बड़े तेज़ मिज़ाज के आदमी थे और कई बार बड़ी अनुचित बातें कर बैठते थे। लेकिन वह ज़माना ही ऐसा था। अगर वे आज के ज़माने में होते तो बहुत कामयाब रहते, क्योंकि यह मानना पड़ता है कि वे बहुत ही योग्य आदमी थे।"

लगभग पन्द्रह मिनट के बाद दनीलो वापस आया और यह सन्देश लाया कि वे दोनो मालकिन के घर पर रात बितायें।

(११)

जब आन्ना प्योदोरोव्ना को मालूम हुआ कि यह युवा हुस्सार अफ़सर काउंट प्योदोर तुर्बीन का बेटा है तो वह अत्यन्त उद्विग्न हो उठी।

"हाय भगवान! दनीलो, फौरन भागकर वापस जाओ और उनसे कहो कि मालकिन चाहती हैं कि आप हमारे यहां आकर रहें," उसने कहा

ग्रौर भागती हुई लीज़ा के कमरे में गयी: "लीज़ोच्का! ऊस्त्युश्का! वे लोग तुम्हारे कमरे में ठहर सकते हैं, लीज़ा! तुम ग्राज रात ग्रपने मामा के कमरे में चली जाग्रो ग्रौर तुम भय्या... तुम्हें ग्राज की रात बैठक मे सोना पड़ेगा, एक रात वहां सोने से तकलीफ़ नहीं होगी।"

"बिल्कुल नहीं, बहन, मैं फ़र्श पर लेट रहूंगा।"

"ग्रगर उसकी शक्ल बाप से मिलती है तो वह जरूर बड़ा खूबसूरत होगा। ग्रोह, उसका मुखड़ा देखने को कैसा जी चाह रहा है! .. तुम देखोगी तो जानोगी, लीज़ा! उसका बाप बहुत ही खूबसूरत ग्रादमी था! यह मेज कहां लिए जा रहे हो? इसे यहीं रहने दो," ग्रान्ना फ़्योदोरोव्ना ने उद्विग्न होकर कहा, "दो पलंग मंगवा लो – एक कारिंदे के घर से मिल जायेगा – ग्रौर वह बिल्लौरी शमादान, जो मेरे जन्मदिन पर मुझे भय्या ने दिया था, वह लेती जाग्रो ग्रौर उसमें स्टेयरिंग बत्ती लगा दो।"

ग्राख़िर सब तैयारी मुकम्मल हो गयी। मां के बार बार दख़ल देने के बावजूद लीज़ा ने कमरा ग्रपनी रुचि के ग्रनुसार सजाया। वह बिस्तर के लिए नयी चद्दरें ले ग्रायी, उनमें से इत्र की ख़ुशबू ग्रा रही थी। फिर ख़ुद ग्रपने हाथ से दोनों बिस्तर बिछाये। पलंग की बग़ल में एक मेज़ पर पानी का जग, शमादान रखे, ख़ुशबूदार काग़ज जलाया ग्रौर ग्रपना बिस्तर मामा के कमरे में लगा दिया। ग्रब ग्रान्ना फ़्योदोरोव्ना का मन कुछ शान्त हुग्रा तो वह ग्रपनी रोज़ की जगह पर जा बैठी ग्रौर ताश की गड्डी निकाल ली... पर पत्ते नहीं बिछाये। ग्रपनी गोल-मटोल कोहनी मेज पर टिकाकर सपने देखने लगी: "वक़्त कैसे गुज़र जाता है! कितनी तेज़ी से गुज़र जाता है!" उसने धीमी सी ग्रावाज़ में मन ही मन कहा। "लगता है जैसे कल की बात हो... बिल्कुल वह मेरी ग्रांखों के सामने है... कैसा मस्त ग्रादमी था!" ग्रौर ग्रान्ना फ़्योदोरोव्ना की ग्रांखों में ग्रांसू ग्रा गये। "ग्रब लीज़ोच्का की बारी है – पर इसमें वह बात नहीं, जो मुझमें तब थी, जब मैं इसकी उम्र की थी – बड़ी सुन्दर बच्ची है, मगर... वह बात नहीं, जो मुझमें थी..."

"लीज़ोच्का, ग्रच्छा हो ग्रगर तुम ग्राज ग्रपनी मलमल की बढ़िया पोशाक पहन लो।"

"क्या तुम उनकी ग्रावभगत करना चाहती हो, मां? मगर इसकी क्या ज़रूरत है, मां?" यह सोचकर ही कि वह ग्रफ़सरों से मिलेगी लीज़ा

से अपनी उत्तेजना दबाये न दबती थी। "मैं तो समझती हूं कि इसकी जरूरत नहीं।"

सच तो यह है कि वह उनसे मिलने के लिए जितनी बेताब थी उससे ज्यादा उस उत्तेजनापूर्ण सुख से डरती थी जो उसे लगता था कि उसे मिलनेवाला है।

"मुमकिन है वे ख़ुद हमसे मिलना चाहें, लीज़ोच्का!" मन ही मन सोचते हुए और बेटी के बाल सहलाते हुए आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने कहा "इसके बालों में भी वह बात नहीं, जो मेरे बालों में थी, जब मैं जवान थी... ओह, लीज़ोच्का, मैं चाहती हूं तुम्हें..." और उसने सचमुच ही उसके लिए मन ही मन किसी बात की कामना की। पर युवा काउंट के साथ लीज़ा की शादी की वह आशा न कर सकती थी और उसके साथ उसका उसी तरह का सम्बन्ध हो, जैसा बड़े काउंट के साथ उसका अपना रहा था, यह वह नहीं चाहती थी। तिस पर भी वह अपने मन में किसी चीज की कामना कर रही थी। शायद उसे यह आशा थी कि वह अपनी बेटी के द्वारा उन भावनाओं को पुनःजागृत कर पाये, जो किसी समय स्वर्गीय काउंट के प्रति उसके हृदय में उठी थीं।

काउंट के आ जाने से घुड़सेना का बूढ़ा अफ़सर भी कुछ कुछ उत्तेजित हो उठा था। वह अपने कमरे में गया और उसने अन्दर से ताला लगा लिया। पन्द्रह मिनट बाद वह फ़ौजी कोट और घुड़सवारी की नीली बिर्जिस पहने बाहर निकला। जब कोई लड़की पहली बार नाच में जाने के लिए गाउन पहनकर आती है तो वह ख़ुश भी होती है और लजाती-झेंपती भी है। यही स्थिति घुड़सेना के अफ़सर की थी, जब वह उस कमरे में दाख़िल हुआ, जो मेहमानों के लिए तैयार किया गया था।

"देखें तो नयी पीढ़ी के हुस्सार कैसे हैं, बहन। स्वर्गीय काउंट तो असली हुस्सार था। देखें, ये लोग कैसे हैं।"

दोनों अफ़सर पिछले दरवाज़े से अपने कमरे में दाख़िल हुए।

"मैंने क्या कहा था?" काउंट ने कहा और धूल से अटे बूट पहने नये बिस्तर पर लेट गया। "क्या यह जगह उस झोंपड़े से अच्छी नहीं? वहां तो तिलचटे ही तिलचटे थे।"

"ज्यादा अच्छी तो जरूर है, मगर हमने फ़िज़ूल ही मेज़बानों का एहसान सिर पर लिया।"

"छिः! आदमी की नज़र हमेशा व्यावहारिक होनी चाहिए। निश्चय ही हमारे आने से वे बेहद ख़ुश हैं... नौकर!" उसने जोर से कहा, "उनसे कहो कि इस खिड़की के ऊपर कोई पर्दा-वर्दा टांग दें, ताकि रात को हवा तंग न करे।"

ऐन इसी वक़्त वह बुज़ुर्ग अफ़सरों से परिचय करने के लिए कमरे में दाख़िल हुआ। वह यह कहे बिना नहीं रह सका—और यह स्वाभाविक ही था—कि मैं स्वर्गीय काउंट का साथी रह चुका हूं, वह मेरे दोस्त थे, उन्होंने मुझ पर बड़े एहसान किये थे। ये बातें कहते वक़्त बूढ़े के चेहरे पर लाली दौड़ गयी। एहसान से उसका मतलब क्या उन १०० रूबलों से था, जो काउंट ने उसे वापस नहीं दिये थे, या इस बात से कि काउंट ने उसे बर्फ़ पर पटक दिया था, या यह कि उस पर गालियों की बौछार की थी? इसका जवाब देना मुश्किल है—बुज़ुर्ग ने इसकी व्याख्या नहीं की। युवा काउंट घुड़सेना के बूढ़े अफ़सर के साथ बड़ी इज़्ज़त से पेश आया और उन्हें वहां ठहराने के लिए उसे धन्यवाद दिया।

"काउंट, माफ़ करना, यह कमरा बहुत आरामदेह नहीं है," (ऊंचे रुतबे के आदमियों से बात करने की उसकी आदत छूट गयी थी, यहां तक कि वह उसे "हुज़ूर" कहकर सम्बोधित करने जा रहा था।) "मेरी बहन का घर बहुत छोटा है। हम उस खिड़की पर अभी कुछ टांग देंगे, जिससे हवा अन्दर नहीं आयेगी," उसने कहा और पर्दा लाने के बहाने, पांव घसीटता हुआ कमरे से बाहर चला गया। वास्तव में वह घर वालों से अफ़सरों की चर्चा करना चाहता था।

इसके बाद ख़ूबसूरत ऊस्त्युश्का खिड़की पर टांगने के लिए मालकिन की शाल हाथों में लेकर आई। मालकिन ने उसे अफ़सरों से यह पूछने को भी कहा था कि क्या वे चाय पीना चाहेंगे?

जगह अच्छी थी, साफ़-सुथरी थी। इस बात का असर काउंट पर भी हुआ। उसकी उदासी जाती रही। ऊस्त्युश्का के साथ वह हंसी-मजाक करने लगा। वह इस लापरवाही से बातें करने लगा कि लड़की बीच ही मे बोल उठी: "आप तो बड़े शरारती हैं!" काउंट ने छोटी मालकिन के बारे में पूछा कि क्या वह ख़ूबसूरत है? ऊस्त्युश्का ने जब चाय के बारे में मालकिन का सन्देश दिया तो काउंट बोला कि बेशक चाय तो पी जा सकती है, पर हां, हमारा आदमी अभी तक खाना तैयार नहीं कर पाया,

६०

इसलिए कुछ वोद्का और कुछ खाने की चीजें, और अगर हो सके तो थोड़ी शैरी भी चाय के साथ भेज दें।

लीज़ा का मामा छोटे काउंट की चाल-ढाल पर ही लट्टू हो गया था। नयी पीढ़ी के अफ़सरों की तारीफ़ों के पुल बांधने लगा। पिछली पीढ़ी वालों से ये लोग कहीं ज्यादा रोबदार हैं, दोनों का कोई मुकाबला ही नहीं।

आन्ना प्योदोरोव्ना इस बात को नहीं मानती थी। काउंट प्योदोर इवानोविच से बेहतर कोई नहीं हो सकता। यहां तक कि वह चिढ़ गयी और कहने लगी, "तुम्हारा क्या है, भय्या, तुम्हारे साथ तो जो भी जरा प्यार से पेश आता है, तुम उसी की तारीफ़ करने लगते हो। कौन नहीं जानता कि अब लोग ज्यादा चतुर हो गये हैं। पर काउंट प्योदोर इवानोविच का सा सलीका तो किसी में हो? उस जैसा एकोसाएज़-नाच तो कोई नाचकर दिखाये? हर कोई उस पर लट्टू था। फिर भी उसकी आंख को कभी कोई नहीं भाया–सिवाय मेरे। तुम्हें मानना पड़ेगा कि पिछली पीढ़ी में बहुत अच्छे अच्छे आदमी हो गुजरे हैं।"

उसी वक़्त वोद्का, शैरी और खाने-पीने के सामान की फ़रमाइश पहुंची।

"देख लिया भय्या, तुम कभी भी कोई बात ढंग से नहीं करते हो। तुम्हें चाहिए था कि खाना तैयार करवाते," आन्ना प्योदोरोव्ना ने कहा, "लीज़ा, बेटी, अब सब काम तुम ख़ुद संभालो।"

लीज़ा भण्डारे में खुमियां और ताज़ा मक्खन लाने भागी और रसोइये से कहा कि थोड़ा मांस भून दे।

"क्या तुम्हारे पास कुछ शैरी है भय्या?"

"नहीं, बहन, शैरी तो मेरे पास कभी थी ही नहीं!"

"यह कैसे हो सकता है? तुम चाय के साथ कुछ पिया तो करते हो?"

"रम पीता हूं, आन्ना प्योदोरोव्ना।"

"क्या फ़र्क पड़ता है? वही भेज दो... अ... रम ही भेज दो। पर क्या यह ज्यादा मुनासिब नहीं होगा कि हम उन्हें यहीं पर बुला लें। तुम बताओ क्या करना चाहिए? यहां बुलाने पर वे नाराज तो नहीं होंगे न, क्यों?"

घुड़सेना के अफ़सर को पूरा विश्वास था कि काउंट बड़ा उदारहृदय आदमी है, आने से कभी इन्कार नहीं करेगा और वह जरूर उन्हें लिवा

लायेगा। आन्ना फ्योदोरोव्ना अपनी "प्रास ग्रेन" की पोशाक और नयी टोपी पहनने चली गयी, पर लीज़ा इतनी व्यस्त थी कि उसे कपड़े बदलने का ख़्याल तक नहीं आया। गुलाबी लिनेन की चौड़ी आस्तीन वाली जो पोशाक पहने थी, वही पहने रही। वह बेहद घबराई हुई थी। उसका मन कह रहा था कि कोई बहुत बड़ी बात होने वाली है। लगता था मानो किसी घने बादल ने उसकी आत्मा को ढक लिया हो। वह समझती थी कि यह काउंट, यह सुन्दर हुस्सार युवक कोई बहुत ही शानदार आदमी होगा। उसकी हर बात में नवीनता होगी और वह उसे समझ नहीं पायेगी। उसकी चाल-ढाल, बात करने का ढंग, उसकी हर बात निराली होगी। उसका सोचने का ढंग, उसके मुंह से निकला हुआ एक एक वाक्य सच्चाई और विद्वत्ता से भरपूर होगा। उसकी हर क्रिया निश्छल-निष्कपट होगी। उसका समूचा व्यक्तित्व अत्यन्त सुन्दर होगा। लीज़ा को इसमें तनिक भी सन्देह नहीं था। काउंट ने शैंरी और खाने-पीने की चीज़ों के लिए कहला भेजा था। लेकिन अगर वह इत्र में नहाने की भी मांग करता तो भी वह हैरान न होती, वह समझ लेती कि यही उचित और ठीक होगा।

आन्ना फ्योदोरोव्ना का निमन्त्रण मिलते ही काउंट ने उसे स्वीकार कर लिया। झट बालों में कंघी की, कोट पहना और अपने सिगारों का डिब्बा उठा लिया।

"चलो भई," उसने पोलोज़ोव से कहा।

"मैं तो सोचता हूं कि हमें नहीं जाना चाहिए," कोरनेट ने जवाब दिया। "Ils feront des frais pour nous recevoir."*

"फ़ुज़ूल बात! लोग ख़ुश होंगे। मैंने पहले ही से पता लगा लिया है कि मालकिन की लड़की बड़ी ख़ूबसूरत है... चलो, चलें," काउंट ने फ़्रांसीसी भाषा में कहा।

"Je vous en prie, messieurs!"** घुड़सेना के अफ़सर ने सिर्फ़ यह दिखाने के लिए कहा कि वह भी फ़्रांसीसी समझता है और उनकी बात उसकी समझ में आ गयी है।

---

*हम उन पर ख़र्च का बोझ डाल रहे है (फ़्रेंच)।

**हमारे यहा पधारिये (फ़्रेच)।

ये कमरे में दाख़िल हुए। लीज़ा का चेहरा शर्म से लाल हो गया। वह पलकें झुकाये चाय बनाती रही ताकि वे यही समझें कि उसका सारा ध्यान चाय की ओर है। वास्तव में आंख उठाकर, अफ़सरों की ओर देखने में उसे डर लगता था। इसके विपरीत, आन्ना फ़्योदोरोव्ना उछलकर खड़ी हो गयी, हल्के से झुककर उनका स्वागत किया और काउंट के चेहरे पर आंखें गड़ाये, उसके साथ निःसंकोच बतियाने लगी। काउंट, तुम तो बिल्कुल अपने बाप की तसवीर हो। फिर अपनी बेटी से उसका परिचय कराया। काउंट के सामने चाय रखी, साथ में जैम और जंगली फलों का गूदा। कोरनेट देखने में बड़ा सीधा-सादा था, इसलिए उसकी ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया। और इसके लिए वह दिल में उन्हें धन्यवाद भी दे रहा था क्योंकि इस तरह उसे चुपचाप, शिष्टता से लीज़ा का रूप निहारने का मौका मिल गया था। लीज़ा पर नजर पड़ते ही उसने देख लिया कि लड़की असाधारण है। बूढ़ा मामा इस इन्तजार में था कि बहन बोलना बन्द करे तो वह भी कुछ कह सके। वह भी बोलने के लिए बेताब था और चाहता था कि अपने घुड़सेना के ज़माने के क़िस्से उन्हें सुनाये। काउंट ने सिगार सुलगाया। वह इतना तेज़ था कि लीज़ा को खांसी आ गयी। वह बातें करने का बड़ा शौकीन और साथ ही नम्र-स्वभाव निकला। पहले तो आन्ना फ़्योदोरोव्ना की चटर-पटर में अपनी ओर से एकाध शब्द जोड़ता रहा बाद में स्वयं चहकने लगा। सुनने वालों को उसकी बातों में एक बात यह विचित्र लगी कि वह ऐसे शब्दों का प्रयोग करता था, जो उसकी अपनी मण्डली में तो बेशक बुरे न लगते होंगे, मगर यहां वे ज़रूर बहुत खटकते थे। आन्ना फ़्योदोरोव्ना उन्हें सुनकर कुछ सहम सी गयी। शर्म के मारे लीज़ा के तो कान तक लाल हो गये। मगर काउंट को इसका भास नहीं हुआ, वह उसी तरह मज़े से और बड़ी विनम्रता से बतियाता रहा। लीज़ा ने चुपचाप गिलास भरे, पर मेहमानों के हाथों में देने के बजाय उनके नज़दीक रख दिये। अब भी वह बहुत घबरा रही थी और काउंट की बातें का एक एक शब्द कान लगाकर सुन रही थी। काउंट की बातें बेहद सीधी सादी थीं। बोलते हुए वह बार बार रुकता था। लीज़ा का मन कुछ कुछ संभलने लगा। जिन विद्वत्ता भरी बातों को सुनने की उसे आशा थी वे सुन

को नहीं मिलीं। काउंट की चाल-ढाल में भी उसे बांकपन की कोई ऐसी झलक न मिली, जिसकी धुंधली सी श्रास उसके मन में लगातार बनी रही थी। चाय का तीसरा दौर चलने लगा। लीज़ा ने लजाते हुए श्रांख उठाकर उसकी श्रोर देखा। काउंट ने उसकी नज़र को जैसे श्रपनी श्रांखों से बांध लिया, किसी झेंप के बिना बातें भी करता गया, टिकटिकी बांधे उसे देखता श्रौर हल्के हल्के मुस्कराता रहा। लीज़ा के श्रन्दर उसके प्रति एक विरोध-भाव सा उठ खड़ा हुश्रा श्रौर फ़ौरन ही उसे महसूस होने लगा कि इस श्रादमी में कोई भी विलक्षण बात नहीं है, इतना ही नहीं, इसमें श्रौर उन सभी श्रादमियों में, जिन्हें वह जानती थी, उसे कोई श्रन्तर नज़र नहीं श्राता था। इसलिए उससे डरने की उसे कोई ज़रूरत नहीं महसूस हुई। यह ठीक है कि इसके नाख़ून लम्बे थे श्रौर ढंग से तराशे हुए थे, पर देखने में भी वह कोई ख़ास ख़ूबसूरत नहीं था। इसलिए जब लीज़ा ने जाना कि उसके स्वप्न निराधार थे तो सहसा उसका मन क्षुब्ध हो उठा, पर साथ ही उसे एक तरह का ढाढ़स भी मिला। उसे श्रब एक ही बात विचलित कर रही थी—कोरनेट चुपचाप बैठा बराबर उसकी श्रोर देखे जा रहा था। लीज़ा श्रपने चेहरे पर उसकी नज़र महसूस कर रही थी। "शायद वह नहीं, यह होगा," उसने सोचा।

(१३)

चाय के बाद वृद्ध महिला श्रपने मेहमानों को दूसरे कमरे में ले गयी। श्रन्दर पहुंचकर वह श्रपनी रोज़ की जगह पर बैठ गयी।

"शायद श्राप श्राराम करना चाहेंगे, काउंट?" उसने पूछा। काउंट ने सिर हिला दिया। इस पर वह बोली: "तो मैं श्राप लोगों के मनबहलाव का क्या इन्तजाम करूं? काउंट, क्या श्राप ताश खेलते हैं? भय्या, तुम कोई ताश का खेल शुरू कर दो।"

"तुम तो ख़ुद 'प्रेफ़्रेन्स' खेलती हो, बहन," उसके भाई ने जवाब दिया, "श्राइये, एक बाज़ी हो जाये, काउंट? श्रौर श्राप?"

श्रफ़सरों ने कहा कि मेजबानों को जो कुछ भी पसन्द है, वे शौक से उसी में हिस्सा लेंगे।

लीज़ा पुराने ताश की एक गड्डी उठा लायी। इससे यह ऐसी बातों का पता लगाया करती थी कि श्रान्ना पयोदोरोव्ना के दांत का दर्द जल्दी दूर होगा या नहीं, मामा शहर से कब गांव लौटेंगे, पड़ोसी उनसे मिलने श्रायेंगे या नहीं, श्रादि, श्रादि। इस गड्डी के पत्ते पिछले दो महीने से इस्तेमाल किये जा रहे थे, फिर भी उस गड्डी के पत्तों से ज्यादा साफ़ थे, जिनसे श्रान्ना पयोदोरोव्ना रमल लगाया करती थी।

"पर शायद श्राप छोटे दांव पर खेलना पसन्द नहीं करते?" मामा ने पूछा। "श्रान्ना पयोदोरोव्ना श्रौर मैं तो श्राधा कोपेक फ़ी पाइंट खेलते हैं। इस पर भी यह हमें लूट लेती है।"

"जिस दांव पर भी श्राप खेलना चाहें, मैं ख़ुशी से खेलूंगा," काउंट ने कहा।

"तो फिर चलिये, एक कोपेक फ़ी पाइंट रहा – श्रौर श्रदायगी नोटों में। ऐसे श्रच्छे मेहमानों के लिए मैं सब कुछ करने के लिए तैयार हूं। भले ही वे मुझे गली की भिखारिन बना दें," श्रान्ना पयोदोरोव्ना ने कहा श्रौर श्रारामकुर्सी पर बैठकर श्रपनी जालीदार शाल ठीक करने लगी।

उसने मन में सोचा: "हो सकता है कि इनसे एक रूबल जीत हूं जाऊं।" बुढ़ापे में उसे जुए का कुछ चसका हो गया था।

"इस खेल को खेलने का एक दूसरा ढंग भी है। कहें तो सिखा दूं। इसे 'श्रानर्स' श्रौर 'मिज़री' से खेलना कहते हैं। बड़ा मज़ेदार है," काउंट ने कहा।

पीटर्सबर्ग में खेला जाने वाला यह नया ढंग सब लोगों को बहुत पसन्द श्राया। मामा बोले कि किसी ज़माने में मैं इस तरह खेलना जानता था यह "बोस्टन" से बहुत कुछ मिलता-जुलता है, पर श्रब यह मुझे कुछ कुछ भूलने लगा है। श्रान्ना पयोदोरोव्ना के पल्ले कुछ नहीं पड़ा। पर उसने यही ठीक समझा कि सिर हिलाती रहे श्रौर मुस्करा मुस्कराकर कहती जाए कि मैं सब समझ गयी हूं, सब बात साफ़ है। खेल के बीच में इक्का श्रौर बादशाह हाथ में पकड़े हुए श्रान्ना पयोदोरोव्ना ने "मिज़री" कहा श्रौर छः सरें उठा लीं। सब लोग ठहाका मारकर हंस पड़े। उसे बड़ी झेंप हुई धीमे से मुस्करायी श्रौर झट कहने लगी कि इतनी जलदी कोई नया तरीक़ा कैसे सीख सकता है। पर वह हार गयी थी श्रौर उसके नाम के श्रागे हारे हुए पैसे लिख लिये गये थे। वह बार बार हारने लगी। काउंट ऊंचे दां

पर खेलने का आदी था और इस वक़्त भी बड़ी सावधानी से खेल रहा था। एक एक चाल का बाकाइदा हिसाब रख रहा था। मेज़ के नीचे कोरनेट बार बार उसे पांव से ठोकर मारकर समझाने की कोशिश करता, पर काउंट कुछ भी नहीं समझ पा रहा था। कोरनेट ख़ुद बड़ी ग़लतियां कर रहा था।

लीज़ा खाने-पीने का और सामान ले आयी – तीन तरह के जैम, फलों का गूदा और एक ख़ास ढंग के अचारी सेब। वह मां की कुर्सी के पीछे खड़ी हो गयी और खेल देखने लगी। किसी किसी वक़्त वह उड़ती नज़र से अफ़सरों को देखती, विशेषकर काउंट को। काउंट बड़ी चतुराई, आत्मविश्वास और सफ़ाई से खेल रहा था। जब पत्ते फेंकता या उठाता तो उसके गोरे-चिट्टे हाथ और गुलाबी नाख़ून लीज़ा का ध्यान आकर्षित करते।

आन्ना फ़्योदोरोव्ना एक बार फिर जोश में आयी, उसने बाज़ी मारने की कोशिश में सात तक की चाल बोल दी। पर आये उसके पास केवल चार। भाई के कहने पर अंकों वाले काग़ज़ पर उसने अपने अंक लिख तो दिये पर इस ढंग से कि पढ़े न जा सकें।

"घबराओ नहीं मां, तुम हारोगी नहीं। सब वापिस जीत लोगी," लीज़ा ने मुस्कराते हुए कहा। वह चाहती थी कि मां को किसी तरह इस अटपटी स्थिति में से उबारे। "अगर तुम मामा जी के पत्ते ले लो तो वे फंस जायेंगे।"

"आओ, मेरी कुछ मदद करो लीज़ा," आन्ना फ़्योदोरोव्ना ने घबराकर बेटी की ओर देखते हुए कहा। "मैं नहीं जानती कि यह कैसे करूं..."

"मैं भी खेल के नये नियमों को नहीं जानती," लीज़ा बोली और जल्दी से मन ही मन जोड़ लगाने लगी कि मां कितने पैसे हार चुकी है। "इस तरह खेलती रहोगी तो सब पैसे हार जाओगी मां। घर में इतने पैसे भी नहीं बचेंगे कि पीमोच्का के लिए फ़्रॉक भी ख़रीद सको," उसने हंसकर कहा।

"इसमें कोई शक नहीं। इस तरह खेलेंगी तो आप कम से कम चांदी के दस रूबल तो ज़रूर हार जायेंगी," कोरनेट ने कहा। वह टिकटिकी बांधे लीज़ा की ओर देख रहा था। लीज़ा के साथ बातें करने के लिए उसका मन ललक रहा था।

"मगर हम तो नोटों के साथ खेल रहे हैं न?" श्रान्ना प्योदोरोव्ना ने कहा श्रौर खेलने वालों की श्रोर देखने लगी।

"शायद," काउंट बोला, "मगर मुझे तो काग़ज़ी नोटों से हिसाब जोड़ना ही नहीं श्राता। श्राप किस तरह... मतलब है, यह काग़ज़ी नोटों का हिसाब क्या है?"

"श्राजकल कोई भी काग़ज़ी नोटों से नहीं खेलता," मामा ने कहा। वह पैसे जीत रहा था।

वृद्ध महिला ने फलों का रस मंगवाया, स्वयं भी दो गिलास पिये। उसका चेहरा तमतमाने लगा था। यों जान पड़ता था जैसे कह रही हो कि श्रब मेरा कुछ नहीं बन सकता। उसके माथे पर टोपी के नीचे से बालों की सफ़ेद लट खिसक श्रायी थी। वह उसे भी ठीक करना भूल गयी। वह सचमुच यों महसूस कर रही थी जैसे लाखों की रकम हार गयी हो श्रौर उसका दिवाला निकलने वाला हो। कोरनेट बार बार मेज़ के नीचे काउंट को ठोकर मारकर समझा रहा था। बुढ़िया पैसे हारती जा रही थी श्रौर काउंट उनका बराबर हिसाब लिखता जा रहा था। श्राख़िर खेल ख़त्म हुश्रा। श्रान्ना प्योदोरोव्ना ने पूरी कोशिश की कि कुछ पैसे श्रपने हिसाब में जोड़ ले, यह बहाना भी किया कि हिसाब लिखने में उससे ग़लती हो गयी है, कि उसे हिसाब लिखना श्राता ही नहीं। जब उसने श्रपने नाम के श्रागे लिखी रक़में देखीं तो उसका दिल बैठ गया। पर इन सब बातों के बावजूद हिसाब जोड़ा गया। मालूम हुश्रा कि वह नौ सौ बीस पाइंट हारी है। "तो क्या यह नोटों में नौ रूबल नहीं बनते?" वह बार बार पूछने लगी। उसे श्रपने नुकसान का श्रनुमान उस वक़्त तक नहीं हुश्रा, जब तक कि उसके भाई ने उसे सारा हिसाब नहीं समझाया। उसने बताया कि वह नोटों में पूरे साढ़े बत्तीस रूबल हार गयी है श्रौर यह रकम उसे ज़रूर श्रदा कर देनी चाहिए। सुनते ही बुढ़िया को कंपकंपी छिड़ गयी। खेल ख़त्म होने पर काउंट उठकर खिड़की के पास चला गया। वहां लीज़ा खाना परोस रही थी श्रौर प्लेट में खुमियां रख रही थी। काउंट ने जीत के पैसों का हिसाब तक लगाने की परवाह नहीं की। कोरनेट सारी शाम लीज़ा से बातें करने के लिए छटपटाता रहा था, मगर बेसूद। काउंट बड़े इतमीनान से लीज़ा के पास गया श्रौर मौसम की चर्चा करने लगा।

कोरनेट की स्थिति बड़ी श्रटपटी हो रही थी। काउंट खेल की मे

पर से उठ गया था। लीज़ा भी, जो मां का ढाढ़स बंधाती रही थी, वहां से चली गयी थी। बुढ़िया बेहद क्षुब्ध हो उठी थी।

"मुझे बड़ा खेद है कि हमने आपसे पैसे जीते," पोलोज़ोव बोला। उसे कुछ तो कहना ही था। "हमने बड़ी असभ्य बात की है।"

"ये नये खेल आप लोगों ने ढूंढ़ निकाले हैं–'आनर्स' और 'मिज़री' और जाने क्या क्या। मैं क्या समझूं? क्या कहा, भय्या, कितने पैसे बनते हैं नोटों के हिसाब से?"

"बत्तीस रूबल, साढ़े बत्तीस," बूढ़े ने जवाब दिया। उसने ख़ुद पैसे जीते थे, इसलिए बड़ा ख़ुश था। "लाओ बहन, लाओ, निकालो पैसे।"

"अब की बार तो दे दूंगी, पर फिर कभी नहीं दूंगी। इतने पैसे मैं कभी भी नहीं जीत पाऊंगी।"

और आन्ना फ़्योदोरोव्ना तेज़ तेज़ क़दम बढ़ाती और डोलती हुई कमरे से बाहर चली गयी। थोड़ी देर बाद वह एक एक रूबल के नौ नोट ले आयी। पर भाई टस से मस न हुआ और बड़ी दृढ़ता से पैसे तलब करने लगा। आख़िर लाचार होकर बढ़िया को सारी रक़म चुकानी पड़ी।

पोलोज़ोव मन ही मन डर रहा था कि यदि उसने बुढ़िया से कुछ भी कहा तो वह बरस पड़ेगी। वह चुपके से वहां से सरक गया और खिड़की के पास जाकर खड़ा हो गया। खिड़की खुली थी, काउंट और लीज़ा वहीं खड़े बातें कर रहे थे।

खानेवाली मेज़ पर दो मोमबत्तियां जल रही थीं। रह रहकर कमरे में वसन्त की ताज़ा हवा के झोंके आ रहे थे, जिससे बत्तियों की शिखा कांप उठती थी। बाग की ओर खुलने वाली खिड़की में भी रोशनी थी, लेकिन कमरे के अन्दर की रोशनी से वह बिल्कुल भिन्न थी। लगभग पूर्णिमा का चांद इस समय तक अपनी सुनहरी आभा खो बैठा था और लाइम के पेड़ों के ऊपर तैरता चला जा रहा था। स्वच्छ, श्वेत बादलों के टुकड़े चांद के सामने से गुज़रते और निखर उठते। नीचे, ताल में मेंढ़क टर्रा रहे थे। उसका पानी पेड़ों के बीच में से झिलमिला रहा था। खिड़की के पास फूलों से लदे महकते लीलक पौधे पर छोटे छोटे पक्षी फुदक रहे थे और पंख फड़फड़ा रहे थे। ओस से भीगे फूलों के गुच्छे धीरे-धीरे झूल रहे थे।

"कैसी सुहावनी रात है!" खिड़की के दासे पर लीज़ा के निकट बैठते हुए काउंट ने कहा। "आप तो अक्सर घूमने जाती होंगी?"

"हां, जाती हूं," लीज़ा बोली। न जाने क्यों काउंट से बातें करते हुए अब उसे तनिक भी घबराहट नहीं हो रही थी। "घर का काम-काज देखने हर सुबह सात बजे बाहर जाती हूं। पीमोच्का को साथ लेकर भी घूमने निकलती हूं। पीमोच्का को मां ने गोद ले रखा है।"

"देहात में रहने में बड़ा आनन्द है!" एक आंख पर चश्मा लगाते हुए और कभी बाग की ओर और कभी लीज़ा की ओर देखते हुए काउंट कहने लगा। "क्या आप चांदनी रातों में भी घूमने जाती हैं?"

"अब तो नहीं जाती, पर तीन साल पहले मैं और मामा जी चांदनी रातों में हर रोज़ घूमने जाया करते थे। पूर्णिमा की रात को तो इनके लिए सोना असम्भव हो जाता था। इनका यही कमरा सीधा बाग़ में खुलता है और खिड़की नीची है, चांदनी ऐन उनके मुंह पर पड़ती है।"

"अजीब बात है, मैं सोच रहा था कि यह आपका कमरा है," काउंट ने कहा।

"मैं केवल आज ही की रात यहां सोऊंगी। मेरे वाले कमरे में तो आप लोग सोयेंगे।"

"सच? आपको हमने बड़ी तकलीफ़ दी है। इसके लिए मैं तो कभी भी अपने को क्षमा नहीं कर पाऊंगा," काउंट बोला और सद्भावना जताने के लिए आंख का चश्मा ढीला कर दिया, जिससे वह नीचे गिर पड़ा। "यदि मैं जानता कि मेरे कारण आपको यों परेशान होना पड़ेगा..."

"इसमें परेशानी की क्या बात है! बल्कि मुझे तो बड़ी ख़ुशी है मामा जी का कमरा बहुत अच्छा है, उसकी नीची सी खिड़की है। मैं तो उसी पर बैठी रहूंगी या शायद मैं कूदकर बाग़ में निकल जाऊंगी और टहलती रहूंगी, फिर लौटकर सो जाऊंगी।"

"कितनी प्यारी लड़की है!" काउंट सोच रहा था। उसके चेहरे को ज़्यादा अच्छी तरह देख पाने के लिए उसने फिर आंख पर चश्मा लगाया और खिड़की पर बैठते हुए उसकी टांग को अपने पैर से छूने की कोशिश की। "कैसी चतुराई के साथ इसने मुझे इशारा कर दिया है कि यदि मैं चाहूं तो इसे खिड़की के पास मिल सकता हूं।" लड़की का दिल जीतने

उसे सचमुच इतना आसान जान पड़ा कि उसका आकर्षण उसकी नजरों में बहुत कुछ कम हो गया।

"अपने प्रिय व्यक्ति के साथ बाग़ में ऐसी सुहानी रात बिताने मे कितना मज़ा होगा," काउंट ने कहा।

इन शब्दों को सुनकर लीज़ा झेंप गयी। उसे लगा जैसे उसकी टांग को काउंट का पैर फिर छू गया हो। झेंप को दबाने के लिए वह झट से बोली: "हां, चांदनी रात में घूमने का सचमुच बड़ा मज़ा है।" पर उसकी झेंप दूर नहीं हुई। उसने झट से खुमियों के मर्तबान को ढक्कन से बन्द किया और उठाकर बाहर ले जाने लगी। ऐन उसी वक़्त कोरनेट वहां पहुंच गया। लीज़ा के मन में सहसा कुतूहल जगा कि देखें, यह किस क़िस्म का आदमी है।

"कैसी सुहावनी रात है," कोरनेट बोला।

"मौसम के अलावा ये लोग और कोई बात ही नहीं करते," लीज़ा ने सोचा।

"बाग़ का नज़ारा बहुत ख़ूबसूरत है!" कोरनेट ने कहा। "पर शायद अब तक आप इससे ऊब उठी होंगी।" कोरनेट को जो लोग बहुत पसन्द होते थे, उनके सामने वह जरूर कोई अप्रिय सी बात कहता था। यह उसकी आदत थी।

"क्यों? आपको यह ख़्याल कैसे आया? आदमी रोज़ एक ही चीज खाकर या एक ही फ्रॉक रोज पहनकर ऊब सकता है, मगर सुन्दर बाग से वह क्यों ऊबेगा? ख़ास तौर पर जब चांद आसमान में और भी ऊपर उठ आया हो। मामा जी के कमरे में से पूरे के पूरे ताल का दृश्य नज़र आता है। आज रात मैं उसे जरूर देखूंगी।"

"लगता है कि आपके यहां बुलबुलें नहीं हैं?" काउंट ने पूछा। वह पोलोज़ोव से बेहद नाराज़ था कि वह बीच में आ टपका है और अब वह लीज़ा के साथ मिलने का स्थान और समय निश्चित नहीं कर पायेगा।

"नहीं, पर पहले थीं। पिछले साल एक शिकारी आया और एक को पकड़कर ले गया। इस साल—पिछले ही हफ़्ते की बात है—मैंने एक बुलबुल को गाते सुना था। उसकी आवाज़ में बड़ी मिठास थी। उसी वक़्त कान्स्टेबल कहीं से आ निकला। गाड़ी पर घंटियां लगी थीं। उनकी टन-टन सुनकर बुलबुल डर गयी और उसी वक़्त उड़ गयी। पिछले से पिछले साल

में और मामा जी पेड़ों के नीचे बैठे घंटों बुलबुलों का गाना सुनते रहते थे।"

"हमारी बिटिया बड़ी बातूनी है। क्या सुना रही हो उन्हें?" मामा ने पास आकर कहा। "आइये, कुछ खा-पी लें।"

मेज पर बैठे तो काउंट ने भोजन की तारीफ़ की, अपनी भूख का भी अच्छा प्रदर्शन किया। आन्ना प्योदोरोव्ना का दिल कुछ कुछ ठिकाने आया। खाना खा चुकने पर दोनों अफ़सरों ने विदा ली और अपने कमरे में चले गये। काउंट ने मामा के साथ हाथ मिलाया। इसके बाद आन्ना प्योदोरोव्ना के साथ, परन्तु उसके हाथ को चूमा नहीं। आन्ना प्योदोरोव्ना अवाक् रह गयी। इसी ढंग से काउंट ने लीज़ा से भी हाथ मिलाया और नजर भरकर उसे देखा। उसके होंठों पर हल्की सी लुभावनी मस्कान थी। लीज़ा फिर झेंप गयी।

"देखने में तो अच्छा है," लीज़ा ने मन ही मन कहा, "मगर अपने को समझता बहुत कुछ है।"

(१४)

दोनों अफ़सर कमरे में पहुंचे।

"तुम्हें शर्म आनी चाहिए," पोलोज़ोव ने कहा, "मैं तो कोशिश करता रहा कि हम लोग कुछ पैसे हार जायें। मेज़ के नीचे से तुम्हें इशारे भी करता रहा। लेकिन तुम बड़े संगदिल आदमी निकले। बेचारी बुढ़िया को परेशान कर डाला।"

काउंट ठहाका मारकर हंस पड़ा।

"बड़ी अजीब औरत है! तुमने देखा, जब हार गयी तो कैसे मुंह बनाने लगी!"

वह फिर ठहाका मारकर हंसा, इस बेपरवाही से कि सामने खड़ा नौकर–जोहान्न–भी आंख बचाकर मुस्कराने लगा।

"परिवार के पुराने दोस्त का बेटा! .. हा, हा! हा!" काउंट खिलखिलाकर हंसता गया।

"पर सचमुच तुमने ठीक नहीं किया। मुझे तो बुढ़िया पर तरस आने लगा था," कोरनेट ने कहा।

"छि:! तुम अभी कमसिन हो। क्या तुम समझे बैठे थे कि मैं जान-बूझकर हार जाऊंगा? मैं क्यों हारूं? जब खेलना नहीं जानता था तो हारा करता था। ये दस रूबल काम आयेंगे, दोस्त। आदमी में व्यवहारकुशलता होनी चाहिए, नहीं तो बेवक़ूफ़ों में शुमार होने लगता है।"

पोलोज़ोव चुप हो गया। वह मन ही मन लीज़ा के बारे में सोचना चाहता था। उसके विचार में लीज़ा अत्यन्त पवित्र और सुन्दर लड़की थी। पोलोज़ोव ने कपड़े बदले और गुदगुदे, साफ़ बिस्तर पर लेट गया।

"सैनिक जीवन में बड़ा मान है, बड़ा गौरव है–सब झूठ!" खिड़की की ओर देखते हुए वह सोचने लगा। खिड़की पर टंगी शाल में से चांदनी छन रही थी। "सच्चा सुख तो इसमें है कि मनुष्य किसी एकान्त स्थान पर, किसी सरल, समझदार और सुन्दर पत्नी के साथ जीवन बिता दे। इसी में सच्चा और स्थायी सुख है!"

पर पोलोज़ोव ने अपने मित्र के सामने अपने विचार व्यक्त नहीं किये, इस ग्रामीण युवती का ज़िक्र तक नहीं किया, हालांकि वह भली भांति जानता था कि काउंट भी उसी के बारे में सोच रहा है।

"तुम कपड़े क्यों नहीं बदल रहे हो?" उसने काउंट से पूछा। काउंट कमरे में टहल रहा था।

"मालूम नहीं क्यों, पर मेरी सोने की इच्छा नहीं हो रही। तुम बेशक बत्ती बुझा दो, मुझे इसकी ज़रूरत नहीं है।"

और वह कमरे के एक सिरे से दूसरे सिरे तक टहलने लगा।

"सोने की इच्छा नहीं है," पोलोज़ोव ने काउंट के शब्दों को दोहराया। पोलोज़ोव पर काउंट का बड़ा रोब था। परन्तु आज शाम की घटनाओं के बाद वह दिल ही दिल में कुढ़ने लगा था। ऐसा उसने पहले कभी महसूस नहीं किया था। जी में आता था कि डटकर काउंट का विरोध करे। "मैं जानता हूं तुम्हारी इस चिकनी-चुपड़ी खोपड़ी के अन्दर किस तरह के विचार घूम रहे हैं," उसने मन ही मन तुर्बीन से कहा। "मैं देख रहा था तुम्हारा मन उस लड़की पर बुरी तरह रीझ उठा है। पर उस जैसी सरल और सच्ची लड़की को समझने की योग्यता भी तुममें हो। तुम्हें तो मिना जैसी औरतें और वर्दी पर कर्नल के एपोलेट चाहिए।" पोलोज़ोव के मन में आया कि काउंट से पूछे कि लीज़ा पसन्द आयी या नहीं।

पर काउंट की ओर मुख़ातिब होते ही पोलोज़ोव ने इरादा बदल दिया। उसने सोचा कि अगर लीज़ा के बारे में काउंट का विचार वही हुआ, जो मैंने समझा है, तो उसका विरोध करने की मुझमें हिम्मत नहीं होगी, बल्कि मैं इस हद तक इसके रोब के नीचे हूं कि मैं उसकी हां में हां मिलाने लगूंगा। यह जानते हुए भी कि दिन ब दिन उसका यह रोब अनुचित और असह्य होता जा रहा है।

"कहां जा रहे हो?" काउंट को टोपी पहनकर दरवाज़े की ओर जाते देखकर उसने पूछा।

"अस्तबल की तरफ जा रहा हूं। देखना चाहता हूं कि वहां इन्तज़ाम ठीक है या नहीं।"

"अजीब बात है," कोरनेट ने सोचा। पर उसने बत्ती बुझा दी और करवट बदल ली, और अपने मन में से ईर्ष्या और द्वेष के विचार निकालने की कोशिश करने लगा, जो इस भूतपूर्व मित्र ने उसके मन में उकसाये थे।

इस बीच आन्ना फ़्योदोरोव्ना भी अपनी आदत के मुताबिक अपने भाई, बेटी और गोद ली लड़की पर क्रास का चिन्ह बनाकर और उन्हें चूमकर अपने कमरे में चली गयी। बड़ी मुद्दत के बाद आज पहली बार एक ही दिन में उसने इतनी विभिन्न और गहरी भावनाएं अनुभव की थीं। कुछ तो स्वर्गीय काउंट की विषादमयी एवं सजीव स्मृतियों के कारण, कुछ इस युवा छैले का ख़्याल करके, जिसने इतनी बेहयाई से उससे पैसे झाड़ लिये थे, उसका मन बहुत विचलित हो उठा था। वह चैन से प्रार्थना भी नहीं कर पायी। तिस पर भी, रोज़ की तरह उसने कपड़े बदले, पलंग के पास तिपाई पर रखे क्वास का आधा गिलास पिया, जो हर रोज़ इस समय वहां रख दिया जाता था, और लेट गयी। उसकी चहेती बिल्ली चुपचाप कमरे में सरक आयी। उसने बिल्ली को अपने पास बुलाया, उसकी पीठ सहलाने लगी और बिल्ली की धीमी धीमी आवाज़ सुनने लगी।

"इस बिल्ली के कारण मैं सो नहीं पा रही हूं," उसने सोचा और बिल्ली को धकेलकर पलंग के नीचे पटक दिया। बिल्ली चुपचाप अपनी मुलायम और रोयेंदार पूंछ टेढ़ी किये अंगीठी के चबूतरे पर चढ़ गयी। उसी वक़्त नौकरानी अपना नमदा उठाये अन्दर आयी, नमदे को फ़र्श पर बिछाया,

बत्ती बुझायी, देव-प्रतिमा के आगे लैम्प जलाया और लेटते ही खर्राटे भरने लगी। पर आन्ना फ्योदोरोव्ना को नींद नहीं आयी और उसके बेचैन दिल को शान्ति नहीं मिली। ज्यों ही वह आंखें बन्द करती हुस्सार का चेहरा सामने आ जाता। जब आंखें खोलती तो कमरे की सब चीज़ें – अलमारी, मेज़, लटकते सफ़ेद फ़्रॉक, जिन पर देव-प्रतिमा के लैम्प की धीमी सी रोशनी पड़ रही थी, सभी अजीब अजीब शक्लों में उसी के प्रतिरूप से बनकर नज़र आने लगतीं। एक क्षण वह ऐसा महसूस करती, जैसे नरम रज़ाई में उसका दम घुट रहा हो, दूसरे क्षण वह घड़ी की टनटन या नौकरानी के खर्राटों से परेशान होने लगती। उसने लड़की को जगा दिया और ग़ुस्से से बोली कि खर्राटे मत लो। उसके दिमाग़ में बेटी, स्वर्गीय काउंट तथा छोटे काउंट के चेहरे और ताश के खेल की स्मृतियां अजीब तरह से गड्डमड्ड हो रही थीं। किसी किसी वक़्त उसकी आंखों के सामने एक तसवीर खिंच जाती – वह स्वर्गीय काउंट के साथ नाच रही है, उसे अपने गोरे गोरे कंधे नज़र आते, उन पर किसी के होंठों की अनुभूति होती, फिर उसे अपनी बेटी छोटे काउंट की बांहों में नज़र आती। ऊस्त्युश्का फिर खर्राटे भरने लगी थी...

"उफ़, नहीं! अब लोग बदल गये हैं। वह आदमी आग और पानी में मेरी ख़ातिर कूद सकता था। और कूदता भी क्यों नहीं? पर मुझे पक्का यकीन है कि यह दूसरा आदमी अपनी जीत पर मस्त इस वक़्त गधों की तरह सो रहा होगा। उसे यह ख़्याल तक न आयेगा कि उठूं, यह समय प्रेमालाप का है। पर इसका बाप था कि कैसी कैसी क़समें उसने मेरे सामने घुटने टेककर खायी थीं। 'तुम क्या चाहती हो? क्या मैं जान पर खेल जाऊं? मैं हंसते हुए तुम्हारी ख़ातिर ख़ुदकुशी कर लूंगा।' अगर मैं कहती तो वह कर भी लेता।"

सहसा ड्योढ़ी में किसी के पांव की आहट हुई। कोई नंगे पांव चल रहा था। दूसरे क्षण लीज़ा भागती हुई अन्दर आयी। उसका चेहरा पीला पड़ गया था और वह सिर से पांव तक कांप रही थी। उसने ड्रेसिंग-जाकेट पर केवल एक शाल ओढ़ रखी थी। आते ही वह मां के पलंग पर गिर पड़ी...

मां से विदा होकर लीज़ा मामा के कमरे में चली गयी थी। वहां उसने सफ़ेद ड्रेसिंग-जाकेट पहनी, लम्बे बालों पर रूमाल बांधा, बत्ती बुझायी

ग्रोर खिड़की खोलकर कुर्सी पर बैठ गयी। ताल पर चांदनी झिलमिल रही थी। उसकी ग्रोर देखते हुए वह विचारों में खो गयी।

सहसा उसे अपनी सब रुचियां ग्रोर काम-काज एक नये रूप में नज़र आने लगे – बूढ़ी, सनकी मां, जिससे वह प्रेम करती थी – वह गहन प्रेम, जो उसके अस्तित्व का अंग बन गया था; बूढ़े नेकदिल मामा जी; नौकर-चाकर, जो अपनी छोटी मालकिन पर जान देते थे। घर में गौएं थीं, उनके बछड़े थे। चारों ग्रोर प्रकृति की अनुपम छटा थी। उसकी आंखों के सामने कितने ही पतझड़ ग्रोर वसन्त अपनी लीला दिखा चुके थे। इन्हीं के बीच वह पलकर बड़ी हुई थी। सभी उससे प्रेम करते थे। पर आज उसे सब निरर्थक, नीरस ग्रोर अवांछित जान पड़ता था। मानो उसके कान में कोई धीमे से कह रहा हो: "पगली, बीस बरस से ग्रौरों की सेवा में जान खपा रही हो। तुम यह भी नहीं जानतीं कि जीवन कहते किसे हैं, सुख चीज़ क्या है?" चांदनी में नहाये निस्तब्ध बाग़ की गहराइयों में देखते हुए यह विचार बार बार उसके मन में उठने लगा। इतनी प्रबलता से यह विचार पहले कभी नहीं उठा था। उसे किस चीज़ ने उकसाया था? क्या वह सहसा काउंट से प्रेम करने लगी थी? नहीं, बिल्कुल नहीं। वह तो उसे अच्छा भी नहीं लगा था। इससे तो वह कोरनेट से ही ज़्यादा आसानी से प्रेम कर सकती थी, पर वह बहुत ही सीधा-सादा ग्रोर चुप्पू क़िस्म का आदमी था ग्रोर कबका उसके मन से उतर भी चुका था। पर काउंट को याद करते ही उसका मन गुस्से ग्रोर क्षोभ से भर उठता। "नहीं, यह वह व्यक्ति नहीं है," वह मन ही मन कहती। उसकी कल्पना का वीर-नायक दूसरे ही प्रकार का व्यक्ति था – सर्वांगीण सुन्दर, मन-वचन ग्रोर कर्म से सुन्दर। उसके साथ सुहावनी रात के समय प्रकृति के स्निग्ध विलास-कानन में प्रेम करते हुए प्रकृति का सर्वव्यापी सौन्दर्य कलुषित नहीं होगा। लीज़ा के मन में अपने आदर्श प्रेमी की धारणा ज्यों की त्यों बनी थी। भोंडी यथार्थता के अनुकूल बनाने के लिए लीज़ा ने अपने आदर्श को छोटा नहीं किया था।

विधाता ने हर प्राणी को समान रूप से प्रेम करने की क्षमता दी है। पर लीज़ा की प्रेम-क्षमता अविचल ग्रोर अक्षय बनी रही थी। कारण उसका जीवन एकान्त में कटता था ग्रोर आस-पास उसकी रुचि का कोई व्यक्ति न था। इसमें सुख के साथ असन्तोष भी था। इसी स्थिति में रहते

उसे अब तो इतनी मुद्दत हो चुकी थी कि उसके लिए किसी नवागन्तुक पर अपना प्रेम लुटा देना असंभव हो गया था। किसी किसी समय वह अन्तर्मुखी हो, हृदय में छिपी भावनाओं के ख़ज़ाने को निहारने लगती। उसका रोम रोम पुलकित हो उठता। हमारी हार्दिक कामना है कि वह आजीवन अपने इस छोटे से सुख में सुखी रह सके। कौन जाने, शायद यही जीवन का सब से गहरा और परमसुख हो, यही जीवन का सच्चा और संभाव्य सुख हो?

"हे भगवान!" वह बुदबुदायी, "क्या यह संभव है कि मैं यौवन और सुख से वंचित रह गयी हूं? मैं उन्हें कभी भी अनुभव नहीं कर पाऊंगी? क्या यह सच है?" उसने आंख उठाकर आकाश की ओर देखा। चांद-तारों से जगमगाते आकाश में सफ़ेद बादलों के पुंज चन्द्रमा की ओर जाते हुए तारों को ढकते जा रहे थे। "यदि सबसे आगे वाला यह बादल चन्द्रमा को छू गया तो यह सच है," उसने मन ही मन कहा। बादल के धुंधलके से चांद का निचला भाग ढकने लगा और धीरे धीरे ताल, लाइम-वृक्षों के शिखरों तथा घास पर चांदनी मन्द पड़ने लगी, पेड़ों का धूमिल आकार और भी अस्पष्ट होने लगा। प्रकृति को ढकने वाले इन उदास पर्दों के पीछे हल्की हल्की हवा बहने लगी, पत्ते सरसराने लगे। ओस से भीगे पत्तों, गीली मिट्टी और लीलक के फूलों की महक के झोंके खिड़की में से अन्दर आने लगे।

"नहीं, यह सच नहीं," उसने दिल को ढाढ़स बंधाते हुए कहा, "आज रात यदि किसी बुलबुल के गाने की आवाज़ आयी तो मैं समझूंगी कि इस तरह उदास होना पागलपन है और निराश होने का कोई कारण नहीं।" बड़ी देर तक वह चुपचाप किसी की प्रतीक्षा में बैठी रही। किसी किसी वक़्त चांद बादलों की ओट में से झांकता, जिससे सामने का दृश्य खिल उठता। फिर वह छिप जाता और साये पृथ्वी को अपने आंचल से ढक देते। उसकी आंखें झपकने लगीं। सहसा ताल की ओर से बुलबुल की आवाज़ सुनाई दी। आवाज़ बिल्कुल साफ़ थी। युवा देहातिन ने आंखें खोलीं। चारों ओर निस्तब्धता थी, प्रकृति अपना वैभव लुटा रही थी। लीज़ा की आत्मा नये उल्लास से भर उठी। वह कोहनियों के बल आगे की ओर झुकी। एक सुखद उदासी उसके हृदय में अंगड़ाइयां लेने लगी। आंखों में किसी असीम और पावन प्रेम के आंसू छलछला उठे। वह प्रेम पूर्ति के लिए छटपटा

६°

रहा था। इन निर्मल, स्वच्छ आंसुओं में सान्त्वना भरी थी। लीज़ा ने खिड़की के दासे पर बाज़ू टिका लिये और उन पर सिर रख दिया। उसे आप ही उसकी सबसे प्यारी प्रार्थना के शब्द दिल में से उठने लगे। बैठे बैठे उसे झपकी आ गयी। उसकी आंखें आंसुओं से तर थीं।

किसी ने उसे छुआ। उसकी नींद टूट गयी। स्पर्श कोमल तथा स्नि था। उसकी पकड़ उसके बाज़ू पर मज़बूत होने लगी। सहसा उसे इस बात का बोध हुआ कि वह कहां है, हल्की सी चीख़ उसके मुंह में से निकली, वह उछलकर खड़ी हो गयी और अपने आपको यह समझाते हुए कि वह व्यथित काउंट नहीं हो सकता, जो चांदनी में नहाया हुआ सा था, वह कमरे में से भाग खड़ी हुई...

(१५)

वह काउंट ही था। लड़की के चीख़ने पर चौकीदार खांसता हुआ बाड़ के पास से अन्दर आया। यह देखकर काउंट भाग खड़ा हुआ और ओस से भीगी घास पर चलता हुआ सीधा बाग़ के अन्दर घुस गया। उसे लगा जैसे वह चोरी करते पकड़ा गया हो। "कैसा पागल हूं मैं!" उसने अपने आपसे कहा, "मैंने उसे डरा दिया। मुझे अधिक सावधान होना चाहिए था, उसे आवाज़ देकर जगाना चाहिए था। कैसा भोंडा हूं मैं!" वह एक जगह रुक गया और कान लगाकर सुनने लगा। चौकीदार फाटक में से बाग़ के अन्दर आ गया था और लाठी घसीटता हुआ रेतीली पगडण्डी पर चल रहा था। उसे छिप जाना चाहिए था। वह ताल की ओर दौड़ा। मेंढक डरकर उसके पांवों के नीचे से उछल उछलकर ताल में कूदने लगे। वह चौंका। उसके पांव भीग रहे थे, मगर इसके बावजूद वह ज़मीन पर उकड़ूं बैठकर मन ही मन सारी घटनाओं पर विचार करने लगा: मैं बाड़ से कूदकर अन्दर आया, फिर लीज़ा की खिड़की को ढूंढ़ने लगा, आख़िर मझे लीज़ा की सफ़ेद आकृति नज़र आयी। मैं दबे पांवों उसके पास गया। मैं नहीं चाहता था कि आहट हो। फिर मैं लौट गया। बार बार मैं यही करने लगा। उसके नज़दीक जाता, फिर लौट पड़ता। कभी मुझे यकीन हो जाता कि लीज़ा मेरा इन्तज़ार कर रही है। तब मुझे लगता कि वह कुछ नाराज़ भी है कि मैंने उसे बहुत देर इन्तज़ार में रखा। पर शीघ्र ही मेरा विचार बदल जाता। उस जैसी लड़की इतनी जल्दी मिलने के लिए

यार कभी नहीं होगी। आख़िर मैंने सोचा कि देहातिन शर्मा रही है, सोने का बहाना कर रही है और मैं उसके पास जा पहुंचा। मगर वह सचमुच सो रही थी। किसी कारण मैं वहां से हट गया, पर फिर मुझे अपनी भीरुता पर शर्म आने लगी। मैं लौट पड़ा और सीधे उसके बाजू पर हाथ रख दिया। चौकीदार फिर एक बार खांसा और बाग में से बाहर जाने लगा। फाटक के चरमराने की आवाज़ आयी। किसी ने ज़ोर से लीज़ा के कमरे की खिड़की बन्द कर दी। अन्दर से शटर भी ज़ोर से बन्द करने की आवाज़ आयी। काउंट मन ही मन क्षुब्ध हो उठा। काश कि ऐसा मौक़ा फिर मिल सके! दूसरी बार ऐसी बेवकूफ़ी कभी न करूंगा। "कितनी प्यारी लड़की है! ओस से भीगी! प्यार करने के लिए बनी है। मैंने उसे हाथ से निकल जाने दिया! कैसा गधा हूं मैं!" उसकी नींद काफ़ूर हो गयी। जोश में ज़ोर ज़ोर से पांव पटकता हुआ वह लाइम-वृक्षों के बीच वाले रास्ते पर चलने लगा।

पर उस शान्त, निस्तब्ध रात्रि से उस जैसे प्राणी ने भी शान्ति का वरदान पाया। उसका हृदय सान्त्वनापूर्ण उदासी और प्रेम की लालसा से भर उठा। लाइम-वृक्षों के घने पत्तों में से चन्द्रमा की रश्मियां कच्चे रास्ते पर छन रही थीं। रास्ते पर जगह जगह घास और सूखे डंठल थे। ज़मीन चितकबरी सी लग रही थी। टेढ़ी-मेढ़ी शाखाओं के एक तरफ़ चांदनी छिटकी थी, लगता जैसे शाखाएं सफ़ेद काई से ढकी हों। चांदनी में नहाये पत्ते किसी किसी वक़्त एक-दूसरे से फुसफुसाने लगते। घर की सब रोशनियां बुझ चुकी थीं। चारों ओर मौन छाया था। हां, उस झिलमिलाते, निस्तब्ध, असीम विस्तार में बुलबुल का तराना गूंजने लगा था। "कैसी सुहावनी रात है!" बाग़ की स्वच्छ महक से लदी हवा में सांस भरते हुए काउंट सोचने लगा। "पर कहीं कोई त्रुटि है। मैं असन्तुष्ट जान पड़ता हूं, अपने से, अन्य लोगों से, जीवन तक से। कितनी भोली-भाली लड़की है। शायद सचमुच ही नाराज़ हो गयी है..." यहां पहुंचकर उसकी कल्पना ने एक और करवट ली। वह अपने को इस देहाती लड़की के साथ बाग में अजीब अजीब और विभिन्न स्थितियों में देखने लगा। फिर इस लड़की का स्थान मिना ने ले लिया। "मैं भी कैसा पागल हूं। मुझे चाहिए था सीधे उसकी कमर में हाथ डालकर उसका मुंह चूम लेना।" मन ही मन पछताता हुआ काउंट अपने कमरे में लौट गया।

कोरनेट अभी तक जाग रहा था। उसने करवट बदली और काउं की ओर मुंह फेरा।

"तुम अभी तक सोये नहीं?" काउंट ने पूछा।

"नहीं तो।"

"बताऊं तुम्हें क्या हुआ है?"

"कहो।"

"शायद मुझे नहीं बताना चाहिए। पर मैं बताऊंगा। थोड़ा दीवार की तरफ़ सरक जाओ।"

काउंट कोरनेट के पलंग पर बैठ गया। उसके होंठों पर मुस्कान खेल रही थी। अपनी बेवकूफ़ी के कारण वह बहुत अच्छे मौक़े से हाथ धो बैठा था। पर अब उसे कोई अफ़सोस न था।

"तुम मानोगे नहीं, लड़की मुझसे rendez-vous* के लिए राज़ी हो गयी थी।"

"क्या कह रहे हो?" पोलोज़ोव ने चिल्लाकर कहा और उछलकर बैठ गया।

"सुनाऊं।"

"कैसे? कब? मैं नहीं मान सकता!"

"जिस वक़्त तुम जीत के पैसे गिन रहे थे, उसी वक़्त उसने मुझे बताया कि वह खिड़की पर मेरा इन्तज़ार करेगी। यह भी कहा कि मैं खिड़की के रास्ते उसके कमरे में आ जाऊं। व्यवहार-कुशलता से यही लाभ होता है। इधर तुम बुढ़िया के साथ बैठे हिसाब जोड़ रहे थे, उधर मैं यह दांव खेल रहा था। तुमने ख़ुद भी तो उसे कहते सुना था कि वह आज रात खिड़की में बैठकर ताल का नज़ारा देखेगी।"

"हां, यही उसने कहा था।"

"बस, यही तो बात है। मैं निश्चय नहीं कर पा रहा हूं कि यह बात उसने अनजाने ही कही थी या जान-बूझकर। शायद उसके मन में यह न रहा हो, पर जो कुछ मैंने देखा, वह सब इसके उलट बैठता है। सारे मामले का अन्त कुछ अजीब सा हुआ। मुझसे बड़ी बेवकूफ़ी की बात हो गयी," उसने कहा। उसके होंठों पर अनुतापपूर्ण मुस्कान थी।

"कैसे? तुम इस वक़्त कहां से आ रहे हो?"

---

* मुलाकात (फ़्रेंच)।

काउंट ने सारी घटना कह सुनायी। पर वार्ता में खिड़की तक पहुंचने से पहले बार बार अपने सकुचाने और लौट पड़ने का ज़िक्र नहीं किया।

"अपने हाथों से सब काम चौपट कर आया हूं। मुझे ज्यादा दिलेरी से काम लेना चाहिए था। वह चीख़ी और उठकर भाग गयी।"

"चीख़ी और उठकर भाग गयी," कोरनेट ने दोहराकर कहा। काउंट को मुस्कराता देखकर जिससे वह मुद्दत से बहुत प्रभावित होता था, उसके होंठों पर भी अटपटी-सी मुस्कराहट आ गयी।

"हां, तो अब सोया जाये।"

कोरनेट ने करवट बदली, दरवाज़े की ओर पीठ की और चुपचाप दसेक मिनट तक लेटा रहा। कहना कठिन है कि उस समय उसके अन्ततंम की गहराइयों में क्या कुछ हो रहा था, पर जब दूसरी बार उसने करवट बदली तो उसके चेहरे पर वेदना और दृढ़ संकल्प की छाप थी।

"काउंट तुर्बीन!" उसने चिल्लाकर कहा।

"क्या है? होश में तो हो?" काउंट ने धैर्य से कहा। "क्या है, कोरनेट पोलोज़ोव?"

"काउंट तुर्बीन! तुम नीच आदमी हो!" पोलोज़ोव ने चिल्लाकर कहा और पलंग पर से उठकर खड़ा हो गया।

(१६)

दूसरे दिन घुड़सेना की टुकड़ी वहां से चली गयी। अफ़सर अपने मेज़बानों से मिले बिना, विदा लिये बिना चले गये। वे एक दूसरे से भी नहीं बोले। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि पहले ही पड़ाव पर द्वन्द्व-युद्ध लड़ेंगे। काउंट ने कप्तान शुलत्ज़ को अपना सहायक नियत किया था, जो बहुत बढ़िया घुड़सवार और हुस्सारों का लोकप्रिय अफ़सर था। उसने बड़ी चतुराई से सारी बात का प्रबन्ध किया। द्वन्द्व-युद्ध टल गया। इतना ही नहीं, सारी फौज में किसी को इस बात की कानोकान ख़बर तक न हुई। तुर्बीन और पोलोज़ोव पहले जैसे मित्र तो अब नहीं रहे थे, पर एक दूसरे को अब भी बेतकल्लुफ़ी से बुलाते थे और पार्टियों तथा भोजों में कभी-कभी उनकी मुलाक़ात भी होती रहती थी।

१८५६

इन्सान और हैवान
(एक घोड़े की कहानी, उसी की जबानी)

मि० अ० स्तखोविच की पुण्य स्मृति में

पहला अध्याय

सूर्योदय का समय था। आसमान साफ़ होता जा रहा था। प्रकाश फैलने लगा था। झिलमिल करती ओस अब और उज्ज्वल हो उठी थी। हंसिया सा चांद पीला पड़ रहा था और जंगल में आवाज़ों का शोर बढ़ने लगा था। लोग जागने लगे थे। जमींदार के अस्तबल में सूखी घास पर खड़े घोड़े ज़ोर ज़ोर से नयने फरफराने और पांव पटकने लगे थे। कभी कभी वे आपस में उलझ जाते, एक दूसरे को धकेलते और ज़ोर ज़ोर से हिनहिनाते।

"हिश्श! ओ! अभी बहुत वक़्त है! अरे भूखे नहीं मरोगे!" फाटक चरमराया और बूढ़ा चरवाहा अन्दर दाख़िल हुआ। फाटक खुला देखकर एक घोड़ी बाहर को लपकी। "हिश्श! .. ख़बरदार!" चरवाहा बाज़ू झटककर चिल्लाया।

चरवाहे का नाम नेस्तेर था। उसने कज्जाक जाकेट पहन रखी थी और उसे कामदार पेटी से कस रखा था। तौलिये में बन्धी डबलरोटी पेटी में खोंस रखी थी। हाथों में ज़ीन और लगाम उठाये और कन्धे पर चाबुक डाले वह अन्दर आ खड़ा हुआ।

उसकी आवाज़ में व्यंग था, लेकिन उससे घोड़े न तो डरे और न क्रुद्ध ही हुए। उल्टे, लापरवाही का दिखावा करते हुए फाटक से परे हट गये। सिवाय सुरमई रंग की एक बूढ़ी घोड़ी के, जिसकी गर्दन पर घने अयाल लटक रहे थे। उसने अपने कान पीछे को दबा लिये और तेज़ी से घूमकर अपनी पीठ चरवाहे की ओर फेर ली। इस पर, पीछे खड़ी हुई

एक कम-उम्र घोड़ी, जो शान्त खड़ी थी, हिनहिनाई और उसने अपने पास खड़े एक घोड़े पर दुलत्ती चला दी।

"हो-हो!" चरवाहे ने जोर से डांटा और अस्तबल के दूसरे सिरे की ओर मुड़ गया।

अस्तबल में सौ के क़रीब घोड़े थे। जिस घोड़े ने सबसे ज्यादा धीरज दिखाया, वह था चितकबरे रंग का बधिया घोड़ा। वह अकेला खड़ा छप्पर के बलूत के खम्भे को बार बार चाट रहा था और अधमुंदी आंखों से इधर-उधर देख रहा था। कहना कठिन है कि खम्भे का स्वाद कैसा रहा होगा, पर उसे चाटते हुए वह घोड़ा बड़ा गंभीर और विचारमग्न लग रहा था।

"क्यों, कोई शरारत सूझ रही है?" उसके पास आते हुए चरवाहा पहले की सी आवाज़ में बोला और जीन और जामा घास के ढेर पर रख दिये।

चितकबरे घोड़े ने खम्भे को चाटना छोड़ दिया और हिले-डुले बिना नेस्तेर की ओर एकटक देखने लगा। घोड़ा हंसा नहीं, न उसने भवें चढ़ाईं, न ही उसका मिज़ाज गरम हुआ, मगर कुछ ही देर में उसके पेट पर एक कंपकंपी सी दौड़ गयी। उसने एक गहरी सांस ली और मुंह फेर लिया। चरवाहे ने अपनी बांह उसकी गर्दन में डाली और लगाम चढ़ा दी।

"ठण्डी सांसें क्यों ले रहे हो?" नेस्तेर ने पूछा।

बधिया घोड़े ने यह सुनकर पूंछ हिलाई, मानो कह रहा हो: "कोई ख़ास बात नहीं, नेस्तेर।" चरवाहे ने उसकी पीठ पर पहले जामा फैलाया और फिर जीन कस दिया। बधिया घोड़े ने अपनी अस्वीकृति दिखाने के लिए अपने कान पीछे को दबाए, पर इसके लिए चरवाहे की ओर से उसे केवल बेवक़ूफ़ की ही उपाधि मिली। जब साज़ की पेटी कसी जाने लगी तो इसे रोकने के लिए बधिया घोड़े ने अपने अन्दर ख़ूब सांस भर ली, पर जब मुंह पर सीधा एक घूंसा और पेट पर लात पड़ी, तो रुकी हुई सांस खुल गयी। तिस पर भी नेस्तेर ने जब दांत से जीन का तस्मा खींचा, तो बधिया घोड़े ने फिर साहस किया और कान बैठा लिये, यहां तक कि उसे घूरा भी। वह जानता था कि इसका कोई लाभ न होगा, पर वह नेस्तेर को जता देना चाहता था कि यह उसे मंज़ूर नहीं और वह अपनी खीझ छिपायेगा भी नहीं। जब उस पर जीन चढ़ गया तो उसने अपनी सूजी हुई दाहिनी टांग ढीली छोड़ दी और लगाम का दहाना चबाने लगा,

यद्यपि उसे अब तक मालूम हो जाना चाहिए था कि इस जैसी बेस्वाद औ कोई चीज़ नहीं हो सकती।

नेस्तेर ने रकाब में पांव रखा और पीठ पर चढ़ गया। उसने चाबु खोला, घुटनों के नीचे से अपना कोट निकाला और ऐसे ढंग से जीन प बैठ गया, जैसे केवल कोचवान, शिकारी और चरवाहे ही बैठा करते हैं लगाम खिंचते ही घोड़े ने गर्दन उठाई – यह दिखाने के लिए कि मैं तैया हूं, जहां कहो ले चलूं, पर अपनी जगह से हिला नहीं। वह जानता था कि यह घुड़सवार उस वक़्त तक नहीं चलेगा, जब तक कि एक दूस चरवाहे, वास्का, को ज़रूरी निर्देश न दे ले। और अकेले वास्का को ही नहीं, घोड़ों को भी। बात ठीक ही निकली। नेस्तेर ने चिल्लाना शु किया: "वास्का! ओ वास्का! घोड़ियों को निकाला है या नहीं? कहां म गया, शैतान? सो रहा है क्या? फाटक खोल। घोड़ियों को बाह निकालो।" वह इसी तरह बड़बड़ाता गया।

फाटक के किवाड़ चरमराये। खम्भे के साथ सटा हुआ झल्लाया ह वास्का, एक घोड़े की लगाम हाथ में थामे, बाक़ी घोड़ों को बाहर निकाल लगा। एक एक करके घोड़े निकल रहे थे। वे बड़े ध्यान से सूखी घास बच बचकर चलते, उसे सूंघते जाते। जवान घोड़ियां, एक एक साल छौने, दूध पीते बछेड़े, गर्भवती घोड़ियां – जो बड़ी सावधानी से चल र थीं ताकि उनके पेट को ठोकर न लगे – सभी एक क़तार में बाहर निकल गये। छोटी घोड़ियां, दो-दो, तीन-तीन करके आगे भागी जाती थीं, उन सिर एक-दूसरे की पीठ पर चढ़ जाते और जल्दी में पांव टकरा जाते इस पर चरवाहा पीछे से गालियां बकने लगता। दूध पीते बछेड़े अपरिचि घोड़ियों की टांगों के बीच इधर-उधर दौड़ रहे थे। जब मां-घोड़ि हिनहिनातीं तो उनकी आवाज़ सुनकर ये भी ज़ोर से हिनहिनाने लगते।

एक नटखट जवान घोड़ी फाटक में से निकली। उसने पहले सि झटका, फिर दुलत्ती झाड़कर हल्की हल्की आवाज़ में हिनहिनायी। पर उसमे इतनी हिम्मत नहीं हुई कि भागकर चित्तीदार घोड़ी झुल्दीवा से आगे निक जाये। झुल्दीवा बड़ी उम्र की घोड़ी थी और धीरे धीरे, मस्तानी चाल से पेट को दाएं-बाएं झुलाती हुई, सब घोड़ों से आगे आगे चली जा रही थी

कुछ मिनटों में ही बाड़ा ख़ाली हो गया और सारी चहल-पहल ख़त्म हो गयी। जिन खम्भों पर छप्पर टिके हुए थे वे उदास और अकेले से ख

नज़र आने लगे। सीद सने, गन्दे-मन्दे भूसे के अलावा यहां कुछ भी देखने को न रहा। चितकबरा बधिया घोड़ा इस दृश्य को देखने का आदी हो गया था, पर जान पड़ता था कि वह भी उदास हो उठा है। धीरे से उसने सिर हिलाया, मानो किसी को दुआ-सलाम कर रहा हो, गहरी सांस खींची, उतनी गहरी जितनी कि पेट पर बंधी पेटी इजाज़त दे सकती थी, दुबली पीठ पर बूढ़े नेस्तेर को बैठाये वह अपनी टेढ़ी हड़ियल टांगों को घसीटते हुए झुण्ड के पीछे पीछे चलने लगा।

"ज्यों ही हम सड़क पर पहुंचेंगे, यह ज़रूर दियासलाई जलाएगा और अपना पुराना पाइप सुलगायेगा, जिस पर पीतल का पतरा और ज़ंजीर लगी है," घोड़ा सोचने लगा। "इसकी मुझे ख़ुशी है, क्योंकि सुबह सुबह, जब अभी घास पर ओस पड़ी हो, इस पाइप की ख़ुशबू मुझे अच्छी लगती है, इससे मेरी कई मृदु स्मृतियां जाग उठती हैं। हां, अगर मुझे कोई एतराज़ है तो यह कि बूढ़ा मुंह में पाइप रखते ही अपने को बहुत कुछ समझने लगता है, ऐंठने लगता है, तिरछा होकर बैठ जाता है और कंबख़्त हमेशा उसी जगह तिरछा बैठता है, जहां मेरी पीठ दुखती है। शैतान ग़ारत करे इसे! मगर यह पहली बार तो है नहीं कि किसी दूसरे की ख़ुशी के लिए मुझे दुख सहना पड़ा हो। आख़िर मैं घोड़ा ही तो हूं। इसमें भी मुझे एक प्रकार का सन्तोष मिलने लगा है। ऐंठने दो, बेचारे को। यह तभी ऐसे करता है, जब अकेला होता है और इसे कोई देख नहीं रहा होता। अगर इसे तिरछा बैठने में ही ख़ुशी मिलती है, तो बैठे।" घोड़ा अपनी अस्थिर टांगों को बचा बचाकर सड़क के बीचोंबीच रखता हुआ सोच रहा था।

दूसरा अध्याय

घोड़ों को नदी के किनारे तक पहुंचाकर नेस्तेर घोड़े से उतरा और उसकी पीठ पर से ज़ीन उतार लिया। यहां घोड़ों को चरना था। घोड़े धीरे धीरे चरागाह की ओर बढ़ने लगे।

हरी हरी घास ओस में भीगी थी। चरागाह नदी के मोड़ पर थी। जान पड़ता जैसे नदी अपनी बांह से चरागाह को लपेट में लिये हो। पानी की सतह तथा ज़मीन पर से उड़ती धुन्ध सारे वातावरण में छा रही थी।

लगाम उतारकर नेस्तेर ने घोड़े की ठुड्डी खुजलायी। घोड़े ने आंखें बन्द कर लीं, मानो अपनी खुशी और कृतज्ञता प्रकट कर रहा हो। "मज़ा आता है, खूसट!" नेस्तेर बुदबुदाया। पर बधिया घोड़े को यह बिलकुल अच्छा नहीं लग रहा था। केवल शिष्टाचार के नाते वह खुश होने का बहाना कर रहा था और स्वीकृति में अपना सिर हिला रहा था। सहसा, किसी कारण और किसी चेतावनी के बिना (मुमकिन है नेस्तेर ने यह सोचा हो कि बहुत घनिष्ठता बढ़ाने से घोड़े की नज़रों में उसका रोब कम हो जायेगा) नेस्तेर ने झटके से उसका मुंह परे हटा दिया, बकसुए वाले सिरे से लगाम पकड़कर उसकी पतली टांग पर मारी और फिर कुछ कहे बिना एक टीले पर चढ़ गया और पेड़ के ठूंठ पर जा बैठा। वहीं पर वह रोज़ बैठा करता था।

ऐसे व्यवहार से बधिया घोड़ा अवश्य ही क्षुब्ध हुआ होगा, पर उसने ज़ाहिर नहीं होने दिया। वह केवल घूम गया और धीरे धीरे अपनी खसखसी पूंछ हिलाता नदी की ओर चल दिया। वह मानो किसी चीज़ को सूंघ रहा था और महज़ दिखावे के लिए थोड़ी बहुत घास चरता जा रहा था। उसके चारों ओर जवान घोड़ियां, एक एक साल के और दूध पीते बछेड़े, सुबह की ताज़ा हवा का आनन्द लेते हुए उछल-कूद रहे थे। इसने उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। वह जानता था कि स्वास्थ्य के लिए, विशेषकर उसकी उम्र में, सबसे अच्छी चीज़ यही है कि ख़ाली पेट खूब पानी पिया जाये और उसके बाद नाश्ता किया जाये। उसने नदी के तट पर सबसे ढलुआं और खुली जगह चुनी, टखनों तक नदी में उतर गया, फिर थूथनी पानी में डाल, फटे होंठों से गटगट पानी पीने लगा। उसके कूल्हे उभरने लगे। बार बार वह अपनी खसखसी पूंछ हिलाता, जिसमें कहीं कहीं सफ़ेद बाल उग आये थे और जो रीढ़ की हड्डी के करीब गंजी हो चली थी।

एक नटखट, कुम्मैत घोड़ी इस बूढ़े घोड़े को हमेशा छेड़ा करती थी। पानी को लांघती हुई वह उसकी ओर लपकी मानो उसे इसके साथ कोई काम हो। दरअसल, उसका इरादा पानी को उस जगह गंदला करने का था, जहां बधिया घोड़ा पी रहा था। पर उसके पहुंचने तक वह भर-पेट पानी पी चुका था। और, जैसे कि उसे घोड़ी के इरादों का कुछ पता न हो, उसने पहले एक, फिर दूसरा, दोनों पांव कीच में से निकाले, सिर

झटका और जवान घोड़ों और बछेड़ों से काफ़ी दूर हटकर अपना नाश्ता करने लगा। तीन घण्टे तक वह बराबर, बिना सिर उठाये, घास चरता रहा। वह अपना बोझ टांगों पर, कभी एक बल, कभी दूसरे बल रखता, ताकि घास कुचलने न पाये। आख़िर उसने इतना खा लिया कि उसका पेट एक भरे हुए बोरे की तरह उसकी उभरी हुई पसलियों पर से लटकने लगा। उसने अपना वज़न दुखती चारों टांगों पर इस तरह सन्तुलित कर लिया कि कम से कम दर्द हो। वह विशेषकर अगली, दायीं टांग को बचाना चाहता था, जो सब से कमज़ोर थी। इसके बाद वह सो गया।

बुढ़ापा कभी गौरवपूर्ण, कभी घृणास्पद और कभी दयनीय होता है। कभी कभी यह एक ही जगह गौरवपूर्ण भी होता है और घृणास्पद भी। बधिया घोड़े का बुढ़ापा कुछ इसी प्रकार का था।

बधिया घोड़ा क़द में अच्छा था, कम से कम साढ़े पांच फ़ुट ऊंचा तो होगा ही। उसका रंग क़रीब क़रीब काला था, मगर बदन पर कहीं कहीं *सफ़ेद दाग़ थे। किसी ज़माने में ये दाग़ सफ़ेद थे, मगर अब तो* मटमैले लगते थे। कुल मिलाकर उसके बदन पर तीन धब्बे थे। एक धब्बा उसकी नाक के एक तरफ़ से शुरू होकर सिर के ऊपर और आधी गर्दन तक फैला हुआ था। उसके खुरदरे उलझे हुए लम्बे अयाल कहीं कहीं सफ़ेद और कहीं कहीं भूरे थे। दूसरा धब्बा उसके दायें कूल्हे पर से शुरू होकर आधे पेट पर फैला हुआ था। तीसरा, दुम से शुरू होकर उसके ऊपरी हिस्से और कमर के आधे भाग पर फैला हुआ था। दुम के बाक़ी हिस्से में हल्के सफ़ेद रंग की धारियां थीं। सिर महज़ हड्डियों का ढांचा रह गया था और आकार में बड़ा था। आंखों के ऊपर बड़े बड़े गड्ढे थे। फटा हुआ और काला सा निचला होंठ लटक गया था। गर्दन पतली और सूखी हुई थी मानो लकड़ी की बनी हो और उस पर सिर बोझ बनकर लटका हुआ लगता था। लटकते निचले होंठ के पीछे उसकी काली सी जीभ मुंह में चलती नज़र आती। दांतों की जगह कुछ पीले से ठूंठ ही रह गये थे। दोनों कान हर वक़्त लटकते रहते थे और उनमें से एक चिरा हुआ था। हां, किसी किसी वक़्त, किसी ढीठ मक्खी को उड़ाने के लिए वह उन्हें झटककर हिला देता। माथे पर के बालों की एक लट कान के पीछे से होकर लटकती रहती। माथा बीच में धंसा हुआ और खुरदरा था। गले के नीचे का मांस ढीला होकर लटक गया था। जब भी कोई मक्खी उसकी गर्दन

या सिर पर थपथपाता तो उसके स्पर्श मात्र से उसकी नस नस काँप जाती। उसके चेहरे से धैर्य, गांभीर्य और गहरी यातना का भाव टपकता था। आगे की दोनों टाँगें घुटनों के पास से मुड़ी हुई थीं, दोनों खुर मुड़े हुए थे और आगे की दायीं टाँग पर घुटने के पास गहरी सूजन थी। उसकी पिछली टाँगें कुछ बेहतर हालत में थीं, पर कूल्हों पर के बाल, जो एक बार किसी चीज की रगड़ में आकर उड़ गये थे, फिर न उग पाये थे। उसकी दुबली-पतली काया को देखते हुए उसकी टाँगें बड़ी लम्बी लगती थीं। उसकी पसलियाँ बाहर को निकली हुई थीं, लगता जैसे चमड़ी बीच के गड्ढों से चिपकी हुई हो। पीठ और कन्धों पर फोड़ों के निशान थे। पिछली टाँग पर एक ताजा जख्म अब सड़ने लगा था। बिना बालों वाली पूँछ, रीढ़ की हड्डी के साथ एक ठूँठ की तरह लटक रही थी। दुम के पास हथेली जितना बड़ा फोड़ा था (जो शायद किसी के काटने से हो गया था)। इसमें से सफ़ेद सफ़ेद बाल उग आये थे। कन्धे पर एक और फोड़े का निशान था। बदहजमी के पुराने रोग के कारण पिछले पैरों के जोड़ों और पूँछ पर सारा वक्त छींटे पड़े रहते थे। जिल्द पर छोटे छोटे, कँटीले बाल उग रहे थे। इस घिनौने बुढ़ापे के बावजूद, जो कोई भी उसे देखता, यह सोचे बिना न रहता कि किसी जमाने में यह अवश्य शानदार घोड़ा रहा होगा। घोड़ा-शिनास तो जरूर ही यह कहता।

घोड़ा-शिनास तो यह भी कहता कि जो गुण इस घोड़े में पाये जाते हैं वे रूस में घोड़ों की एक ही नस्ल में देखने को मिलते हैं। चौड़ी हड्डी, घुटनों की चक्कियाँ बड़ी बड़ी, खुर बढ़िया, टाँगें पतली, गर्दन ख़मदार और सबसे बड़ी विशेषता—सिर सुडौल और आँखें काली, बड़ी बड़ी और चमकती हुई। चेहरे और गर्दन पर नाड़ियों की सुन्दर ग्रन्थियाँ बनती हैं। खाल और बाल मुलायम और बढ़िया। इस वक़्त घोड़े की दुर्बलता दयनीय थी (चितकबरा होने के कारण तो वह और भी घिनौनी लगती थी)। पर साथ ही उसके चेहरे और भाव-भंगिमा में एक प्रकार की शान्त आत्मनिष्ठा पायी जाती थी, जो विशेषकर उन लोगों में होती है, जो जानते हैं कि वे सुन्दर और प्रभावशाली हैं। इन दोनों ने मिलकर घोड़े को एक अद्भुत गौरव प्रदान किया था।

ओस भीगी इस चरागाह में यह घोड़ा एक जिन्दा खण्डहर की तरह अलग-थलग खड़ा था। थोड़ी दूरी पर अन्य घोड़े, जवानी में मस्त, इधर-

उधर घूम-फिर रहे थे—कोई ज़मीन पर पांव पटक रहा था, कोई ज़ोर ज़ोर से सांस ले रहा था, कोई हिनहिना रहा था।

तीसरा अध्याय

सूर्य अब जंगल के ऊपर उठ चुका था और उसका प्रकाश चरागाह और नदी के मोड़ तक फैलने लगा था। ओस सूख चली थी और कहीं कहीं जमकर क़तरों का रूप ले रही थी। दलदल और जंगल के ऊपर कहीं कहीं फैली धुन्ध अब हल्के धुएं की तरह छितर रही थी। आकाश में बादल उमड़ आये थे, मगर हवा अब भी बन्द थी। नदी के पार, खेतों में, राई के छोटे छोटे, हरे हरे और कंटीले पौधे लहलहा रहे थे। हवा में पौधों और फूलों की महक थी। जंगल में कुकू पक्षी की तीखी आवाज़ सुनाई दे रही थी। पीठ के बल लेटा हुआ नेस्तेर उसकी कूकें गिन रहा था और उनके अनुसार अपनी ज़िन्दगी के बाक़ी सालों का हिसाब लगा रहा था। चरागाहों और खेतों के ऊपर लार्क पक्षी उड़ रहे थे। घोड़ों के बीच कहीं एक खरहा फंस गया। ख़तरे का भास पाते ही वह भाग खड़ा हुआ और काफ़ी दूर जाकर एक झाड़ी की ओट में जा बैठा। वास्का घास पर लेटे लेटे सो गया था और उसके इर्द-गिर्द काफ़ी दूर तक चरती हुई घोड़ियां ढलान के नीचे तक जा पहुंची थीं। बड़ी उम्र की घोड़ियां ऐसी जगह खड़ी थीं, जहां उनसे कोई छेड़-छाड़ न कर सके और वे रसीली घास पर पगडंडी सी बना देती थीं। वे चरती नहीं थीं, रसीली घास पर जब-तब मुंह मार लेती थीं। धीरे धीरे सारे का सारा झुण्ड एक ही दिशा में सरकता जा रहा था। यहां पर भी बूढ़ी ज़ुल्दीबा ही सबसे आगे आगे बाक़ी का पथ-प्रदर्शन कर रही थी। काले रंग की युवा मूश्का दांत निकाले और दुम उठाये हुए अपने पहले बछेड़े को देख देखकर हिनहिना रही थी। बैंगनी ब्राउन रंग का नन्हा सा बछेड़ा, कांपता, लड़खड़ाता, उसके साथ सटकर खड़ा था। सुरमई रंग की घोड़ी अबाबील खेल ही खेल में घास को दांतों से काटती, फिर सिर ऊंचा करके उसे हवा में उछालती और जब घास की पत्तियां नीचे ज़मीन की ओर आतीं तो अपने ओस भीगे गुच्छेल टखनों से उन्हें ठोकर मारती। उसे अभी तक कोई साथी नहीं मिला था। उसकी खाल रेशम की तरह मुलायम और चिकनी थी। जब वह सिर नीचा करती,

तो उसके रेशम जैसे मुलायम और काले अयाल उसके माथे और आंखों को ढक लेते। एक बड़ा सा बछेड़ा अपनी नन्ही सी घुंघराली पूंछ उठाये हुए अपनी मां के इर्द-गिर्द दौड़ रहा था और इस तरह छब्बीस चक्कर काट चुका था। उसकी मां अब तक अपने बेटे की आदतों से वाक़िफ़ हो चुकी थी। वह चुपचाप घास चरती रही। हां, कभी कभी उसे अपनी बड़ी बड़ी काली आंखों से देख भर लेती। एक छोटा सा मुश्की बछेड़ा, जिसका सिर बड़ा सा और कानों के बीच माथे पर के बाल खड़े खड़े थे, बड़ा हैरान सा जान पड़ता था। उसकी पूंछ उसी तरह एक ओर को मुड़ी हुई थी, जैसे मां के गर्भ में रही होगी। यह बछेड़ा, बिल्कुल बुत बना, दूसरे बछेड़ों की कूद-फांद को देखे जा रहा था। यह कहना मुश्किल है कि उनकी आंखों में ईर्ष्या का भाव था या क्रोध का। कई छोटे छोटे बछेड़े बड़ी आतुरता से अपने थूथन मांओं के पेट के साथ लगाये स्तन ढूंढ़ रहे थे। कई अपनी मांओं के बार बार बुलाने के बावजूद बेढब चाल से कूदते हुए बिल्कुल उल्टी दिशा में चले जाते, मानो कोई चीज़ ढूंढ़ रहे हों, फिर सहसा, अकारण ही, एक जगह खड़े होकर हिनहिनाने लगते। कुछ बछेड़े घास पर लोट रहे थे, कुछ घास चरना सीख रहे थे। कई अपनी पिछली टांगों से कान के पीछे खजला रहे थे। दो गर्भवती घोड़ियां, अन्य घोड़ियों से ज़रा हटकर, धीरे धीरे चलती हुई, साथ साथ घास चर रही थीं। उनके प्रति सब के दिल में मान और आदर का भाव था, क्योंकि कोई भी बछेड़ा उनके नज़दीक जाकर उन्हें तंग नहीं कर रहा था। अगर कोई अल्हड़ बछेड़ा उनके पास पहुंच भी जाता, तो कान या दुम के एक ही हल्के से झटके से वे उसे समझा देतीं कि यह ठीक नहीं है।

एक साल की जवान घोड़ियां और घोड़े बड़ों की तरह दिखने की कोशिश कर रहे थे। वे बहुत कम उछलते-कूदते या छोटे बछेड़ों के साथ खेलते। बड़े रोब से वे घास चरते और अपनी मेहराबदार गर्दनें टेढ़ी करके अपनी छोटी छोटी दुमें हिलाने की कोशिश करते। बड़ों की तरह वे भी किसी किसी वक़्त ज़मीन पर लोटते या एक दूसरे की पीठ खुजलाते। दो या तीन साल की घोड़ियां या वे घोड़ियां, जिनके अभी तक कोई बछेड़ा नहीं हुआ था, सबसे ज़्यादा ख़ुश थीं। अलबेली युवतियों की तरह उन्होंने अपनी एक अलग टोली बना रखी थी। वे सारा वक़्त उछलतीं, पांव पटकतीं, ज़ोर ज़ोर से फुंकारतीं और हिनहिनातीं। वे पास पास खड़ी होकर

एक दूसरी के कन्धे पर अपना सिर रखतीं, एक दूसरी को सूंघतीं। वे हल्के से हिनहिना और दुम हिलाकर एक दूसरी के सामने कभी क़दम चाल और कभी दुलकी चाल से नख़रे के साथ भागने लगतीं। इन सब मौजी, अल्हड़ घोड़ियों में सबसे ज्यादा ख़ूबसूरत, शरारती और नटखट थी कुम्मैत घोड़ी। सब घोड़ियां उसकी हर चाल की नक़ल करतीं। जहां कहीं वह जाती, जवान घोड़ियों का झुण्ड का झुण्ड उसके पीछे लग जाता। आज वह पहले से भी ज्यादा मस्ती में थी। उसके मन में भी वैसी ही हिलोर उठी, जैसी कि इन्सानों के मन में उठती है। बूढ़े बधिया घोड़े से नदी पर ठिठोली करने के बाद वह तट के साथ साथ भागने लगी, शायद यह दिखाने के लिए कि वह किसी चीज़ से डर गयी है। फिर हल्की सी फुंकार मारकर वह दौड़ पड़ी और चरागाह में सरपट भागने लगी। उसकी साथिनें भी उसकी देखादेखी, उसके पीछे पीछे भागने लगीं। उन्हें रोकने के लिए वास्का को उनके पीछे सरपट घोड़ा दौड़ाना पड़ा। एक जगह पर वह रुककर घास चरने लगी और कुछ देर बाद ज़मीन पर लोटने लगी। फिर बूढ़ी घोड़ियों को चिढ़ाने के लिए वह उनके सामने दौड़ने लगी। एक बछेड़े को, जो अपनी मां के साथ खड़ा था, उसने धकेलकर परे हटा दिया और फिर यों उसके पीछे भागने लगी मानो उसे काटना चाहती हो। मां भयभीत हो उठी और उसने चरना छोड़ दिया। बछेड़ा दर्द भरी आवाज़ में हिनहिनाने लगा। पर नटखट कुम्मैत घोड़ी ने उसे छुआ तक नहीं। वह तो केवल अपनी सहेलियों का मन बहलाने के लिए उसे डरा रही थी। सहेलियां दूर खड़ी तमाशा देख रही थीं। नदी के पार, दूर राई के खेत में भूरे रंग का एक घोड़ा हल में जुता हुआ था। घोड़ी के मन में आयी कि इसे बेवक़ूफ़ बनाया जाये। वह खड़ी हो गयी, गर्व से सिर ऊंचा उठाया, अपने बदन को हिलाया-डुलाया और फिर बड़ी मधुर, लम्बी खिंची हुई आवाज़ में हिनहिनायी। इस हिनहिनाहट में मस्ती थी, भावुकता थी और था कुछ कुछ अवसाद का भाव। साथ ही एक कामना थी, प्रेम का आश्वासन था और उसके लिये उदासी की भावना थी।

झाड़ियों में एक कार्नक्रेक पक्षी फुदक फुदककर बड़ी कामातुर आवाज़ में अपनी संगिनी को बुला रहा था। कुकू पक्षी और बटेर प्रेम के गीत गा रहे थे। यहां तक कि फूल भी हवा के पंखों पर एक दूसरे को अपना पराग भेज रहे थे।

"मैं भी जवान हूं, ख़ूबसूरत हूं, तगड़ी हूं," कुम्मैत घोड़ी हिनहिनायी, "पर अभी तक प्रेमानन्द से वंचित रही हूं। इतना ही नहीं, किसी भी प्रेमी ने मेरी ओर अभी तक आंख उठाकर नहीं देखा।"

जवानी की उमंग और उदासी लिये हुए यह सोद्देश्य हिनहिनाहट ढलान और फिर खेतों पर फैलती हुई दूर खड़े भूरे घोड़े के कानों तक पहुंच गयी। उसके कान खड़े हो गये और वह बुत की तरह खड़े का खड़ा रह गया। किसान ने, जो छाल का जूता पहने था, उसे ठोकर लगायी। पर घोड़ा उस मनमोहक आवाज़ पर इतना लट्टू हो गया था कि जहां का तहां खड़ा जवाब में हिनहिनाने लगा। किसान को गुस्सा आ गया। उसने लगाम खींची और घोड़े के पेट पर एक लात जमायी, इतनी ज़ोर से कि उसका हिनहिनाना बन्द हो गया और वह चुपचाप हल खींचने लगा। पर एक मधुर उदासी इस भूरे घोड़े के मन पर छा गयी। उसकी मस्ती और किसान के गुस्से की सूचना राई के खेत को पार कर दूसरे तट के पार घोड़ों के गिरोह तक जा पहुंची।

भूरा घोड़ा नटखट कुम्मैत घोड़ी की आवाज़ सुनकर ही इतना मुग्ध हो गया था कि उसे अपना काम भूल गया। यदि कहीं वह उस सुन्दरी को अपनी आंखों से देख पाता, तो उस पर क्या गुज़रती? घोड़ी कान खड़े किये, नथुने फुलाये, मानो हवा को सूंघ रही हो, गर्दन अकड़ाये खड़ी थी। उसके सुन्दर शरीर के एक एक अंग में सिरहन दौड़ रही थी।

पर नटखट घोड़ी ने ज़्यादा देर तक अपने को भावुकता में नहीं बहने दिया। जब जवाब में दूर से आवाज़ आनी बन्द हो गयी, तो वह एक बार तो हिनहिनायी, पर फिर अपना सिर झुकाकर पांवों से ज़मीन कुरेदने लगी। फिर वह चितकबरे बधिया घोड़े को जगाने और तंग करने के लिए उसके पास चली गयी। बधिया घोड़ा इन्सान के ज़ुल्म से इतना परेशान न होता था, जितना कि इन जवानों की ठिठोली और मज़ाक़ से। तिस पर भी उसने न तो इन्सान को और न अपने साथियों को ही कभी नुकसान पहुंचाया था। इन्सान को तो अभी भी उसकी ज़रूरत थी। पर ये जवान घोड़े उसे क्यों सताते थे?

चौथा अध्याय

यह बूढ़ा था, ये जवान थे; इसका शरीर हड्डियों का ढांचा भर था, उनके शरीर में यौवन की कान्ति थी; इसका मन मर चुका था, उनके मन में उमंग थी। संक्षेप में कहें तो बस इतना ही कि यह अजनबी था, बाहर का था, उनसे बिल्कुल भिन्न था, इसलिए उनकी अनुकम्पा का पात्र नहीं हो सकता था। घोड़े केवल अपनों पर ही तरस कर सकते हैं। हां, यदि किसी और के प्रति उनके मन में तरस की भावना जाग भी जाये, तो वह भी उनके प्रति ही, जिन्हें वे अपनी स्थिति में पाते हैं। भला, चितकबरे बधिया घोड़े का क्या दोष, जो वह अब वृद्ध, दुर्बल और कुरूप हो गया था? पर ये घोड़े तो उसे ही दोषी मानते थे। वे ही ख़ुश हो सकते हैं, जो सुन्दर और नौजवान हैं, जिन्हें अपने सामने भविष्य उज्ज्वल दिखाई देता है, जिनकी पेशियां हल्की सी उत्तेजना से भी थिरकने लगती हैं और पूंछ खड़ी हो जाती है। शायद बधिया घोड़ा यह सब समझता था। शान्त क्षणों में तो वह स्वीकार भी करता कि यह उसी का दोष है कि वह अपनी ज़िन्दगी गुज़ार चुका है। वह इस अपराध की सज़ा भुगतने के लिए तैयार हो जाता। पर था तो आख़िर घोड़ा ही। वह सोचता कि ये जवान घोड़े उसे बहुत सताते रहते हैं। भविष्य में, जब बुढ़ापा उन पर हावी होगा, तो न जाने उन्हें क्या क्या देखना पड़ेगा। यह सोचकर उसका दिल एकदम उदास, क्षुब्ध और खिन्न हो उठता। घोड़ों की इस हृदयहीनता के पीछे कुलीनता की भावना छिपी थी। प्रत्येक घोड़े की लम्बी-चौड़ी वंशावली थी, *प्रत्येक घोड़ा विख्यात स्मेतांका को अपना पूर्वज मानता था। पर बूढ़े* चितकबरे के वंश का तो किसी को पता तक न था। तीन बरस हुए अस्सी रूबल देकर घोड़ों की मण्डी में इसे ख़रीदा गया था। बस, यही इसकी औक़ात थी।

कुम्मंती घोड़ी चितकबरे घोड़े के पास आयी और बड़ी लापरवाही से धक्का देकर चली गयी। घोड़े को और किसी बात की आशा भी न थी। आंखें तक खोले बिना उसने कान झुकाकर दांत निकाल दिये। घोड़ी ने उसकी ओर पीठ कर ली और यों जान पड़ा जैसे अभी दुलत्ती लगायेगी। घोड़े ने आंखें खोलीं और सरककर आगे बढ़ गया। उसकी नींद तो हवा हो चुकी थी, वह चुपचाप घास चरने लगा। घोड़ी और उसकी साथिनें

फिर चहलक़दमी करती हुई उसके पास आकर खड़ी हो गयीं। उन्हीं में दो बरस की एक बुद्धू सी घोड़ी भी थी। सिर से गंजी, वह हर बात मे कुम्मैत घोड़ी की नक़ल किया करती थी। परन्तु सब नक़्क़ालों की तरह उसकी नकल में भी कोई ताल-मेल न होता। जब भी कुम्मैत घोड़ी ठिठोली करने आती तो वह बधिया घोड़े के सामने से यों गुज़रती, जैसे किसी काम पर जा रही हो, उसकी ओर आंख उठाकर भी न देखती। इससे घोड़ा समझ ही न पाता कि उसे क्रुद्ध होने का कोई अधिकार भी है या नहीं। यह भी एक दिल्लगी थी। यही कुछ उसने इस बार भी किया। पर उसकी गंजी सहेली ठिठोली करने के लिए बड़ी बेताब थी। वह सीधी आयी और बधिया घोड़े को ज़ोर से दुलत्ती मारकर चली गयी। बूढ़े घोड़े की चीख़ निकल गयी। उसने फिर दांत निकाले और भागकर उसके कूल्हे पर काट खाया। ऐसी फुर्ती की उससे उम्मीद नहीं की जा सकती थी। गंजी घोड़ी ने उसकी बाहर को निकली पसलियों पर सीधी दुलत्ती मारी, जिससे वह कराह उठा। बूढ़े घोड़े ने फुंकार छोड़ी। वह फिर उसके पीछे भागने ही वाला था कि उसने समझ लिया कि इसका कोई लाभ नहीं। बस, ठण्डी सांस ले, वह एक तरफ़ को चला गया। जान पड़ता था कि झुण्ड के सभी जवानों ने निश्चय कर लिया है कि वे इस हमले का बदला ज़रूर लेकर रहेंगे। बूढ़े चितकबरे ने गंजी घोड़ी पर वार करने का दुःसाहस क्यों किया? उन्होंने इसे इतना सताया कि वह दिन के बाकी हिस्से में घास का एक तिनका तक न खा पाया। कई बार तो चरवाहे ने उन्हें उसके पास से हटाया। वह स्वयं इनके रवैये को नहीं समझ सका। बधिया घोड़ा इस क़दर नाराज़ था कि जब घर लौटने का वक़्त आया तो वह स्वयं नेस्तेर के पास चला गया। जब उस पर फिर ज़ीन कसा गया और चरवाहा पीठ पर चढ़ बैठा तो उसने चैन की सांस ली।

बूढ़ा बधिया घोड़ा बूढ़े चरवाहे को लिये घर जाने लगा। कौन जानता है कि उस समय उसके मन में कैसे विचार उठ रहे होंगे? शायद वह बड़े उदास मन से सोच रहा था कि जवानी मे घोड़े बड़े निर्दयी होते हैं। या शायद, जैसा कि बुज़ुर्गों की आदत होती है, उसने अपराधियों को माफ़ कर दिया था और उनके प्रति एक गर्वपूर्ण, परन्तु मौन भर्त्सना का भाव उसके मन में था। उसके विचार जो भी रहे हों, जब तक वह लौटकर बाड़े में नहीं पहुंच गया, उसने अपने विचार किसी पर प्रकट नहीं किये

उस दिन शाम को नेस्तेर के कुछ सम्बन्धी उससे मिलने आये। नेस्तेर ने घोड़ों को लिये नौकरों की कोठरियों के पास से गुज़रते हुए देखा कि उसके अपने झोंपड़े के बाहर, खम्भे के साथ एक छकड़ा और घोड़ा बन्धे हैं। वह जल्दी से जल्दी घर पहुंचना चाहता था। इसलिए ज्यों ही घोड़े बाड़े के अन्दर पहुंचे, उसने बधिया को छोड़ दिया और वास्का को उसका ज़ीन उतारने को कहा। फिर बाड़े के फाटक को ताला लगाकर वह अपने दोस्तों से मिलने चला गया।

उस रात बाड़े में एक अपूर्व घटना घटी। इसका कारण शायद यह रहा हो कि गंजी घोड़ी का अपमान हुआ था, जो स्मेतांका की पड़पोती थी। इसका मतलब है कि सारे झुण्ड की कुलीनता का अपमान हुआ था। और हुआ भी इस "मरियल घोड़े" की ओर से, जो मण्डी की ख़रीद था, न बाप का पता न मां का। या शायद इस कारण कि बधिया घोड़ा पीठ पर ऊंचा ज़ीन चढ़ाये, बिना किसी सवार के, एक स्वांग सा लग रहा था। सभी घोड़े, वयस्क, बड़े और छोटे, एक साथ दांत निकाले बधिया के पीछे पड़ गये। कभी वह एक ओर को भागता, तो कभी दूसरी ओर को। उसके धंसे हुए कूल्हों पर वे तड़ातड़ अपने खर जमाते रहे और वह दर्द से कराहता-चिल्लाता रहा। जब बधिया अधिक बरदाश्त न कर सका तो वह बाड़े के बीचोंबीच खड़ा हो गया। उसके चेहरे पर पहले बूढ़ों की सी खीज थी, फिर गहरी निराशा का भाव आ गया। उसने कान झुकाये और सहसा एक ऐसी बात की, जिससे सभी घोड़े जहां के तहां खड़े रह गये। व्याज़ोपूरिख़ा ने, जो उम्र में सबसे बड़ी थी, पास आकर बधिया को सूंघा और गहरी सांस ली। बधिया ने भी गहरी सांस ली।

. . . .

पांचवां अध्याय

चांदनी रात में बाड़े के ऐन बीचोंबीच बधिया घोड़े का ऊंचा आकार नज़र आ रहा था। पीठ पर ऊंचा ज़ीन था। बाकी घोड़े उसके इर्द-गिर्द चुपचाप खड़े थे, मानो उसकी बातें सुनकर आश्चर्यचकित रह गये हों।

जो कुछ उसने कहा वह इस प्रकार था।

. . . .

"मैं दयालु प्रथम तथा बाबा का पुत्र हूं। वंशावली के अनुसार मैं मजीक प्रथम हूं। मुझे लोग सदा मापदण्ड के नाम से पुकारते रहे हैं। मैं लम्बे लम्बे डग भरता हुआ चलता था। रूस भर में इस तरह कोई और न चलता होगा। इसी लिए मेरा यह नाम डाल दिया गया था। संसार भर में किसी भी घोड़े की रगों में मुझ जैसा ख़ानदानी ख़ून नहीं है। तुम्हारे सामने मैं इसकी चर्चा कभी भी नहीं करता। आख़िर करता भी क्यों? तुम तो मुझे बिल्कुल नहीं पहचानते, न! और तो और ब्याज़ोपूरिख़ा तक ने मझे नहीं पहचाना। वह तो जवानी में ख्रेनोवो में मेरे साथ रही थी। उसने मुझे पहचाना है तो अभी अभी। अगर इस वक़्त ब्याज़ोपूरिख़ा यहां मौजूद न होती, तो तुम मेरी बात पर विश्वास भी न करते। मैं भी कभी तुम्हें यह न बतलाता। मैं नहीं चाहता कि मैं घोड़ों के दल की अनुकम्पा का पात्र बनूं। पर तुमने मुझे मजबूर कर दिया है। हां, मैं ही वह मापदण्ड हूं, जिसे घोड़ों के पारखी चारों दिशाओं में ढूंढ़ते फिरते हैं और पा नहीं सकते, वही मापदण्ड, जिसे स्वयं काउंट तक जानते थे। उन्होंने ही मुझे घुड़शाला में से निकलवाया था, क्योंकि मैंने उनके चहेते घोड़े राजहंस को दौड़ में मात दे दी थी।"

. . . .

"जब मैं पैदा हुआ तो मुझे कुछ मालूम न था कि चितकबरा किसे कहते हैं। मैं तो सोचता था कि मैं केवल एक घोड़ा हूं। मुझे याद है कि जब पहले पहल मेरे रंग पर फ़िकरे कसे गये थे तो मुझे और मेरी मां को बड़ा गहरा सदमा पहुंचा था। जान पड़ता है कि मेरा जन्म रात के वक़्त हुआ था। सुबह तक मेरी मां ने चाट चाटकर मेरा बदन साफ़ कर दिया था और मैं टांगों के बल खड़ा होने लगा था। मुझे याद है कि मेरे मन में उस वक़्त किसी ख़ास चीज़ की इच्छा उठी थी। प्रत्येक चीज़ मुझे बड़ी आश्चर्यजनक, पर साथ ही अत्यन्त सरल जान पड़ती थी। हमारा अस्तबल एक लम्बे बरामदे में था। घुड़साल की कोठरियों के दरवाज़ों में जाली लगी थी। बाहर की हर चीज़ साफ़ नज़र आती थी। मां ने मुझे दूध पिलाने की कोशिश की, मगर मैं तब इतना भोला-भाला था कि कभी अपना थूथन मां की अगली टांगों में फंसा लेता और कभी उसकी छाती

दबाने लगता। सहसा मां ने जाली में से झांककर बाहर देखा, अपनी टांग उठाकर मुझे लांघने लगी और पीछे हट गयी। जिस साईस की उस रोज़ ड्यूटी थी, वह जाली में से आंखें फाड़ फाड़कर अन्दर देख रहा था।

"'देखो, देखो, बाबा ने बछेड़ा दिया है,' उसने सांकल खोलते हुए कहा। अस्तबल में ताज़ा पुआल बिछा था। वह पुआल रौंदता हुआ आया और मुझे अपनी बांहों में भर लिया। 'इधर आओ तरास, यह देखो,' उसने पुकारा, 'इस बछेड़े से अधिक चितकबरा तो नीलकण्ठ भी नहीं होगा।'

"मैंने कूदकर भागने की कोशिश की, पर घुटनों के बल गिर पड़ा।

"'हिश्! शैतान के बच्चे!' उसने कहा।

"मां विचलित हो उठी, पर मुझे बचाने की कोशिश नहीं की। केवल ठण्डी सांस भरकर मुंह फेर लिया। इतने में और साईस भी आ गये और घूर घूरकर मुझे देखने लगे। एक साईस अस्तबल के रखवाले को सूचना देने चला गया। सभी मेरे रंग-बिरंगे शरीर पर हंसने और अजीब अजीब नामों से मुझे पुकारने लगे। इनका मतलब न मेरी मां समझ पायी और न मैं ही। अभी तक न हमारे यहां और न ही हमारे नाती-रिश्तेदारों के यहां कोई चितकबरा घोड़ा पैदा हुआ था। हम नहीं जानते थे कि घोड़े के रंग में भी कोई बुरी और खटकनेवाली बात हो सकती है। पर उस वक़्त भी सबने मेरे मोटे-ताज़े बदन और सुन्दर डील-डौल की तारीफ़ की।

"'देखो तो कितनी ताक़त है इस नन्हे से बछेड़े में!' साईस बोला, 'क़ाबू में ही नहीं आता।'

"थोड़ी देर में रखवाला वहां पहुंच गया। वह कुछ कुछ परेशान और हैरान नज़र आया।

"'यह भूत का भूत कहां से आ टपका?' उसने कहा, 'जनरल साहिब इसे अस्तबल में कभी नहीं रखेंगे। भगवान जानता है, बाबा, तुमने मुझे कहीं का न रखा!' मां की ओर घूमकर उसने कहा, 'इस चितकबरे जोकर के बजाय तो गंजा बछेड़ा ही पैदा किया होता!'

"मेरी मां न बोली, न डोली। ऐसे मौक़ों पर वह केवल आह भरकर रह जाया करती थी। सो, इस समय भी उसने यही किया।

"'यह शैतान पड़ा किसको है? बिल्कुल मुजीक* नज़र आता है। इसे

* किसान।

हम अस्तबल में नहीं रख सकते। यह हमारी नाक कटवायेगा। पर जो भी हो, घोड़ा अच्छा है, बहुत बढ़िया है!' रखवाले ने और जिस किसी ने मुझे देखा, यही कहा। "कुछ रोज़ बाद एक जनरल साहिब तशरीफ़ लाये। यह भी मुझे देखकर बौखला उठे। मेरी चमड़ी के रंग के कारण उन्होंने मुझे और मां को जाने क्या क्या कहा। इस पर भी जो कोई मुझे देखता, यही कहता, 'घोड़ा अच्छा है, बहुत बढ़िया है।'

"घोड़ियों के अस्तबल में हम वसन्त तक रहे। प्रत्येक बछेड़ा अपने कटघरे में अपनी मां के साथ रहता था। पर जब सूरज की गर्मी से छप्पर पर की बर्फ पिघलने लगी तो हमें अपनी अपनी मां के साथ कभी कभी बाहर, खुले बाड़े में भेजा जाने लगा। यहां ताज़ा पुआल बिछा रहता। यहां पहली बार मैं अपने दूर और पास के सम्बन्धियों से मिला। मैंने उस ज़माने की नामी से नामी घोड़ियों को अपने अपने बछेड़ों के साथ दरवाज़ों से निकलते देखा। उन्हीं में प्रौढ़ा गोलांका, स्मेतांका की बेटी मूश्का, ऋस्नूख़ा और सवारी की घोड़ी दोब्रोख़ोतिख़ा भी थीं। अपने अपने बछेड़ों के साथ वे खिली धूप में इकट्ठी घूमती-फिरतीं, पुआल पर लोटतीं, बिल्कुल साधारण घोड़े-घोड़ियों की तरह एक दूसरी को सूंघतीं। सुन्दर घोड़ियों से भरा हुआ वह बाड़ा आज भी मुझे याद है। तुम मानोगे नहीं, एक वक़्त था, जब मैं भी जवान हुआ करता था, मैं भी उछलता-कूदता था। यहीं पर मेरा परिचय व्याज़ोपूरिख़ा से हुआ था। उस समय वह साल भर की रही होगी—बड़ी नेकदिल, ख़ुशमिज़ाज और जानदार हुआ करती थी। मैं उसका दिल नहीं दुखाना चाहता, पर इतना ज़रूर कहूंगा कि आज जिस घोड़ी को तुम बड़ी ख़ानदानी मानते हो, उसे उन दिनों सबसे छोटी जात की समझा जाता था। व्याज़ोपूरिख़ा स्वयं इस बात का समर्थन करेगी।

"मेरा चितकबरा रंग इन्सान को फूटी आंख न सुहाता था, पर घोड़ों को बहुत प्यारा लगता था। वे सब मुझे घेरे रहते, मुझे सराहते, मेरे साथ कल्लोल करते। होते होते मैं अपने रंग के सम्बन्ध में लोगों की बातें भूलने और ख़ुश रहने लगा। पर शीघ्र ही मुझे अपने जीवन का पहला दुःख अनुभव हुआ। इस अनुभव का कारण मेरी मां थी। बर्फ़ पिघलने लगी, छतों के नीचे पंछी चहचहाने लगे, चारों ओर वसन्त गमकने लगा। मां मेरे साथ दूसरे ढंग का व्यवहार करने लगी। वह बाड़े में भागने-कूदने लगी, जो उसकी अवस्था की घोड़ी को ज़रा भी शोभा न देता था; खड़े खड़े

ग्रौर भटक जाता ग्रौर वह हिनहिनाने लगती या दूसरी ग्रौर दुलत्तियां झाड़ने लगती। यदि यह भी न करती बड़ी घृणा से फुंकारती। वह ग्रपनी चचेरी बहन फुज्चीखा खड़ी होती, ग्रपना सिर उसके कन्धे पर टिका देती, बड़ी देर तक उसकी पीठ खुजलाती रहती, मुझे दूध ाब मैं पास जाता तो बड़ी रुखाई से एक ग्रोर को ढकेल ावाला ग्राया ग्रौर मां को लगाम डालकर कहीं ले गया। जवाब में हिनहिनाया ग्रौर उसके पीछे दौड़ा। पर उसने ऽ उठाकर नहीं देखा। साईस तरास ने मुझे ग्रपनी बांहों : जब तक दरवाजे में ताला नहीं लगा दिया गया, वह ने निकल भागने की कोशिश की ग्रौर साईस को पुग्राल (दरवाजा बन्द था ग्रौर मां की हिनहिनाहट प्रति क्षण थी। दरग्रसल वह मुझे बुला भी नहीं रही थी। वह हो पुकार रही थी। यह मुझे बाद में मालूम हुग्रा। (घोड़े की तेज ग्रौर भारी ग्रावाज का जवाब दे रही ोग्री प्रथम की थी, जिसे दो साईस पकड़कर मेरी मां है थे। मेरे दिल को ऐसी चोट लगी कि मुझे किसी बात ा। मैंने जाना तक नहीं कि तरास कब ग्रस्तबल से बाहर ो बस ऐसा लगा जैसे कि सदा सदा के लिए मैंने मां है ग्रौर सो भी इसलिए कि मेरा रंग चितकबरा है। था। जब मुझे इस सम्बन्ध में लोगों की कही-सुनी बातों मेरा दिल इस तरह क्रोध से भर उठता कि मैं कटघरे ार पटकने ग्रौर घुटने रगड़ने लगता। यहां तक कि मैं ाता ग्रौर मेरी टांगें लड़खड़ाने लगतीं।

ाद मेरी मां वापस ग्रायी। मैंने बरामदे में उसके क़दमों ाज उसकी दुलकी-चाल रोज जैसी न थी। जब दरवाजा दर ग्रायी तो मैं उसे मश्किल से पहचान पाया। वह ान लग रही थी। उसने मुझे सूंघा, लम्बी सांस छोड़ ी। उसकी प्रत्येक क्रिया से नजर ग्रा रहा था कि ग्रब करती। उसने मुझे समझाया कि दोग्री बहुत सुन्दर है : करती है। कई बार मां को उससे मिलाने के लिए

ले जाया गया और मां मेरे साथ अधिकाधिक रूखा व्यवहार करने लगी।

"कुछ ही दिनों बाद घास चरने के लिए हमें बाहर ले जाया लगा। इससे मुझे एक नई तरह की खुशी हुई और मां के स्नेह का थोड़ा-बहुत पूरा होने लगा। मुझे नये दोस्त और साथी मिले। हमने ए साथ घास चरना, सयाने घोड़ों की तरह हिनहिनाना और अपनी माता के इर्द-गिर्द सरपट दौड़ना सीखा। वे बड़े उल्लास भरे दिन थे। मेरी स बुराइयां माफ़ कर दी गयीं। हर कोई मुझे प्यार करता, मेरा मान करत और मेरी त्रुटियों की ओर कोई ध्यान न देता। पर यह स्थिति बहुत सम तक नहीं रही। शीघ्र ही एक भयानक घटना घटी।" बधिया घोड़े ने ल भरी और वहां से दूर हट गया।

पौ फूट रही थी। फाटक चरमराए और नेस्तेर अन्दर दाखिल हुआ घोड़े इधर-उधर बिखर गये। चरवाहे ने बधिया घोड़े पर जीन कसा औ झुण्ड को चरागाह की ओर ले चला।

छठा अध्याय

दूसरी रात

शाम के वक़्त जब घोड़े वापस लाये गये, तो वे फिर बधिया घो के इर्द-गिर्द खड़े हो गये।

"अगस्त महीने में मुझे मां से अलग कर दिया गया," उसने अप कहानी जारी रखते हुए कहा, "इसका मुझे कोई विशेष दुःख नहीं हुआ मैंने देखा अब मेरा छोटा भाई, प्रसिद्ध उसान आने वाला था और मां नजरों में अब मेरी कोई कद्र नहीं रह गयी थी। मेरे दिल में कोई ई न थी। मैं महसूस करता था कि मेरा प्यार उसके प्रति ठण्डा पड़ रहा है इतना ही नहीं, मुझे यह भी मालूम था कि मां से अलग होने के बाद बछेड़ों के अस्तबल में रखा जायेगा, जहां दो-दो तीन-तीन बछेड़े एक स रहेंगे और हम सब को रोज हवाखोरी के लिए ले जाया जायेगा। डार्लिंग के साथ एक ही कटघरे में रखा गया। डार्लिंग सवारी का घो था, जो बाद में सम्राट की सवारी बना। कलाकारों ने उसके चित्र बन और मूर्तिकारों ने उसकी प्रतिमाएं। उस समय वह एक साधारण सा बछे

था, उसकी खाल नरम और चिकनी थी, गर्दन राजहंस की सी और टांगें पतली और सीधी, मानो वीणा के तार हों। स्वभाव से वह प्रसन्नचित्त, सुशील और दयालु था। उसे उछलना-कूदना, साथियों को चाटना-दुलारना, घोड़ों और इन्सानों सभी से छेड़छाड़ करना बहुत पसन्द था। हमारी आपस में गहरी दोस्ती हो गई और यह दोस्ती जवानी के अन्त तक रही। उन दिनों वह बड़ा चपल और ख़ुशदिल हुआ करता था। उसने अभी से छोटी छोटी घोड़ियों से छेड़छाड़ और प्रेम करना शुरू कर दिया था और मेरे भोलेपन का अक्सर मज़ाक़ उड़ाया करता। मेरा दुर्भाग्य कि आत्माभिमानवश मैं भी वही कुछ करने लगा, जो वह करता था। जल्दी ही मैं भी प्रेमपाश में बन्ध गया। यह पहला उन्माद मेरे जीवन में एक बहुत बड़े परिवर्तन का कारण बना। हां, तो मैं प्यार करने लगा।

"व्याज़ोपूरिख़ा उस समय मुझसे एक साल बड़ी थी। हम दोनों में गहरी दोस्ती थी। पर शरद् के अन्त के क़रीब मैंने देखा कि यह मुझसे शरमाने लगी है... मैं अपने पहले प्रेम की सारी की सारी दुःखद दास्तान यहां बयान नहीं करूंगा। उसे स्वयं मेरे उन्मत्त प्रेम की याद है, जिसके कारण मेरे जीवन में सबसे बड़ा परिवर्तन हुआ। चरवाहों ने खदेड़कर उसे मुझसे दूर कर दिया और मुझे बड़ी बेरहमी से पीटने लगे। एक दिन शाम को उन्होंने मुझे एक ख़ास कटघरे में बांध दिया। रात भर मैं वहां रोता रहा, मानो मुझे पहले से मालूम हो गया था कि दूसरे दिन क्या होने जा रहा है।

"सुबह सवेरे जनरल साहिब, अस्तबल का रखवाला, साईस, चरवाहा, सभी बरामदे में से होते हुए मेरे कटघरे में आये। ख़ासा शोर मचा। जनरल साहिब रखवाले पर बरसे। रखवाला अपनी सफ़ाई में कहने लगा कि उसने हुक्म दे रखा था कि मुझे बाहर न निकाला जाए, मगर साईसों ने लापरवाही की है। जनरल साहिब ने कहा कि वह एक एक को कोड़ों से पीटेंगे और हुक्म दिया कि मुझे बधिया कर दिया जाये। रखवाले ने विश्वास दिलाया कि उनके आदेश का पालन किया जायेगा। बात ख़त्म हो गई और वे लोग वहां से चले गये। मेरी समझ में कुछ नहीं आया, पर मुझे इतना भास हो गया कि वे मेरे साथ कुछ करनेवाले हैं।"

. . . .

. . . .

"दूसरे रोज से मेरा हिनहिनाना सदा के लिए बन्द हो गया। मैं वह बना दिया गया, जो कि तुम आज मुझे देखते हो। मेरे लिए दुनिया बदल गई। कोई भी चीज मेरे दिल को ख़ुश न कर पाती थी। मैं विरक्त होकर अपने में खो गया। शुरू शुरू में तो मुझे किसी चीज में भी रुचि न थी। दोस्तों के साथ खेलना-कूदना तो दूर की बात थी, मैंने खाना-पीना और घूमना तक छोड़ दिया। बाद में कभी कभी मुझे इच्छा होती कि नाचूं, कूदूं, हिनहिनाऊं, पर उसी वक़्त मैं अपने आपसे यह भयंकर प्रश्न कर बैठता: 'क्यों? किसलिए?' और मेरा सारा उत्साह ठण्डा पड़ जाता।

"एक दिन शाम का वक़्त था। घोड़े] चरागाह से वापस लाये जा रहे थे। मुझे घुमाने के लिए बाहर निकाला गया। दूर से मुझे धूल का बवण्डर उड़ता नजर आया। उसमें हमारी घोड़ियों के धूमिल आकार भी दिखाई दे रहे थे। उनके ख़ुशी से हिनहिनाने और पांव पटकने की आवाज भी मेरे कानों मे पड़ी। मैं खड़ा हो गया। साईस मेरे गले में बंधी रस्सी को जोर जोर से खींचता रहा। मेरी गर्दन छिलने तक लगी। पर मैं खड़ा रहा और आंखें फाड़ फाड़कर नजदीक आते झुण्ड को देखता रहा मानो कोई व्यक्ति उस ख़ुशी पर आंखें गड़ाये हो, जो सदा के लिए उसका साथ छोड़ गई है। जब घोड़ियां नजदीक आयीं तो मैंने एक एक को पहचान लिया—सभी मेरी पुरानी परिचित थीं। कितनी सुन्दर, गर्वीली, चिकनी और स्वस्थ थीं वे! कुछेक ने मेरी ओर आंख उठाकर देखा भी। साईस बराबर रस्सी खींचता रहा, पर अब वह दर्द दर्द ही न रहा था। मैं सब कुछ भूलकर पहले की तरह हिनहिनाया और दुलकता हुआ उनकी ओर दौड़ा। पर मेरा हिनहिनाना अवसादपूर्ण, हास्यास्पद और बेढब लग रहा था। मेरी सहेलियो में से कोई भी तो नहीं हंसी। बहुतों ने शिष्टाचारवश मेरी ओर अपनी पीठ कर ली। जाहिर था कि अब मैं उनकी नजरों में घृणित और दयनीय हो गया था, और हास्यास्पद भी, जो सबसे बुरा था। मेरी पतली मरियल सी गर्दन, मेरा बड़ा सा सिर (मेरा वजन बहुत कम हो चुका था), मेरी लम्बी, अटपटी सी टांगें और मेरी भद्दी दुलकी-चाल, जिसमें मैं पहले की तरह साईस के इर्द-गिर्द चक्कर लगा रहा था—ये सब देखकर उनकी हंसी रोके नहीं रुकती होगी। किसी ने मेरी हिनहिनाहट का जवाब तक नहीं दिया। सभी ने आंखें फेर लीं। सहसा सारी बात मेरी समझ में आ

गयी। उनकी नजरों में मैं सदा के लिए अजनबी हो गया था। मेरा दिल इतना क्षुब्ध हो उठा कि मालूम नहीं मैं घर कैसे पहुंचा।

"मेरा स्वभाव पहले ही गंभीर और चिन्ताशील था, अब तो मैं और भी संजीदा हो गया। मेरे चितकबरे रंग को देखकर लोग घृणा से नाक-भौंह सिकोड़ लेते थे। इस पर मेरा यह अप्रत्याशित दुर्भाग्य तथा नस्ली घोड़ों के बीच मेरी अनोखी स्थिति—जिसे मैं जानता तो था, पर जिसके कारण से मैं अनभिज्ञ था—इस सबसे मजबूर होकर मैं सोच में डूबा रहने लगा। मैं मन में सोचा करता कि इन्सान कितना अन्यायी है, जो मेरे चितकबरे रंग के लिए मुझे दोषी ठहराता है। मां का प्रेम कितना अस्थिर है। मैं स्त्रियों के प्रेम के बारे में सोचता रहता। उनका प्रेम केवल शारीरिक आकर्षण पर निर्भर रहता है। पर सबसे अधिक मैं उस अनोखे जीव, इन्सान के बारे में सोचा करता। हमारे जीवन में इसका बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य की सनक के कारण ही मुझे इस अनोखी स्थिति का सामना करना पड़ा था। एक दिन एक ऐसी घटना घटी, जिसने इन्सान की असलियत मेरे सामने खोलकर रख दी।

"यह सर्दी की छुट्टियों की बात है। एक बार दिन भर मुझे कुछ भी खाने-पीने को न दिया गया। बाद में मुझे मालूम हुआ कि साईस शराब पिये हुए था। उस रोज़ रखवाले ने मेरे कटघरे में झांककर देखा। यह देखते ही कि मुझे खाने को कुछ नहीं मिला, उसने साईस को पीठ पीछे बीसियों गालियां दीं और वहां से चलता बना। दूसरे रोज जब साईस और उसका दोस्त मेरे कटघरे में सूखी घास डालने आये, तो मैंने देखा कि उसका चेहरा बड़ा पीला और उदास सा लग रहा है। उसकी पीठ को देखते ही मेरा दिल भर आया। उसने, बड़े गुस्से से, घास चरनी में फेंक दी। मैं अपना सिर बाहर निकाल प्यार से उसके कन्धे पर रखना ही चाहता था कि उसने मेरी नाक पर जोर से घूंसा जमाया। मेरा सिर चकरा गया। एक लात उसने मेरे पेट पर भी जमा दी।

"'अगर यह कम्बख़्त यहां न होता, तो कुछ भी न होता,' उसने कहा।

"'क्यों?' दूसरे साईस ने पूछा।

"'काउंट के बछेड़ों की तो ख़बर तक नहीं लेता कि उन्हें चारा

मिला है या नहीं, मगर "अपने" बछेड़े को देखने के लिए दिन में दो दो बार चक्कर काटता है।'

"'क्यों, क्या चितकबरा इसे मिल गया है?' दूसरे ने पूछा।

"'भगवान जाने उन्होंने इसे दिया है या बेचा है। काउंट के बछेड़े भूखों मर जाएं, इसकी बला से। पर किसकी हिम्मत है कि "इसके" बछेड़े को चारा न दे। मुझे कहा कि जमीन पर लेट जाओ और लगा हंटर चलाने। अपने को ईसाई कहता है। जानवर इसे इन्सान से ज्यादा प्यारे हैं। इसे भगवान का भी डर नहीं। खुद गिन गिनकर कोड़े लगवाता रहा, जानवर कहीं का। जनरल साहिब ने कभी किसी को इतने हंटर नहीं लगाये होंगे। इसने मेरी चमड़ी उधेड़के रख दी। इसका दिल नहीं, पत्थर है।'

"ईसाइयत और हंटर मारने के बारे में उसने जो कुछ कहा, वह तो मैं अच्छी तरह समझ गया। मगर मेरी समझ में यह नहीं आया कि 'अपने' बछेड़े, 'उसके' बछेड़े—इन शब्दों का क्या अर्थ है। इतना तो मैं जान गया कि उसका इशारा मेरे और रखवाले के परस्पर सम्बन्ध की ओर था। उस समय मैं नहीं जानता था कि यह सम्बन्ध क्या है। इसका पता मुझे कुछ मुद्दत बाद चला, जब मैं और घोड़ों से अलग रखा जाने लगा। उस वक़्त तो मैं समझाये भी यह न समझ सकता था कि किसी इन्सान की मिल्कियत हो सकता हूं। मेरे बारे में ये शब्द: 'मेरा' घोड़ा मुझे उतने ही अजीब जान पड़ते, जितने कि 'मेरी' पृथ्वी, 'मेरी' वायु, 'मेरा' जल।

"तो भी इन शब्दों का मुझ पर गहरा प्रभाव पड़ा। मैं सारा वक़्त इन्हीं के बारे में सोचता रहता। इन शब्दों का पूरा पूरा अर्थ मेरी समझ में तब आया, जब इन्सानों के साथ मेरा तरह तरह का वास्ता पड़ा। तब इन अनोखे शब्दों का मतलब मेरी समझ में आया—मनुष्य कृत्यों का नहीं, शब्दों का अनुसरण करते हैं। उन्हें इस बात से सुख नहीं मिलता कि उन्हें किसी काम के करने या न करने का अवसर मिला है, बल्कि इससे कि वे कुछेक औपचारिक शब्दों को वस्तुओं के साथ जोड़ सकते हैं। जिन शब्दों को वे सबसे अधिक महत्व देते हैं, वे हैं, मेरा और अपना। वे इन शब्दों का प्राणियों और वस्तुओं के सम्बन्ध में प्रयोग करते हैं। यहां तक कि जमीन, जनता और घोड़ों तक के सम्बन्ध में भी। उन्होंने आपस में समझौता कर रखा है कि किसी एक चीज को 'मेरा' कह सकने का अधि-

कार एक ही आदमी को होगा। जो इस खेल में सबसे बाजी मार जाये, यानी, जो सबसे अधिक वस्तुओं को 'मेरा' कह सके, इसी को ये लोग सबसे अधिक सुखी मानते हैं। एसा क्यों है, यह मेरी समझ में अब भी नहीं आता। पर सचाई यही है। बड़ी मुद्दत तक मैं यह जानने की कोशिश करता रहा कि इस रवैये से स्पष्टतया क्या लाभ हो सकता है, पर अभी तक जान नहीं पाया।

"मिसाल के तौर पर बहुत से लोग मेरे बारे में कहा करते थे कि मैं उनकी मिल्कियत हूं, पर वे मुझ पर सवारी नहीं किया करते थे। सवारी करनेवाले कोई और ही हुआ करते। मुझे खाने-पीने को भी वे नहीं देते थे, कोई और लोग ही दिया करते थे। मेरे साथ शराफ़त का बर्ताव भी दूसरे ही करते, जैसे कोचवान, साईस इत्यादि। इस प्रकार गहरे विवेचन के बाद मैं इस परिणाम पर पहुंचा कि केवल हम घोड़ों के मामले में ही नहीं, बल्कि सभी बातों में 'मेरे' और 'अपने' की धारणा का आधार केवल यही क्षुद्र मानव-वृत्ति है, जिसे वे स्वयं स्वामित्व की भावना या अधिकार कहते हैं। कोई कहता है: 'यह मेरा घर है,' परन्तु वह उसमें रहता नहीं। वह केवल उसे बनवाता है और उसकी देख-रेख करता है। व्यापारी कहता है: 'मेरी कपड़े की दूकान,' हालांकि वह अपनी ही दूकान के सबसे बढ़िया कपड़े ख़ुद नहीं पहनता। ऐसे भी लोग हैं, जो ज़मीन के किसी टुकड़े को अपना कहते हैं, हालांकि उन्होंने उसे देखा तक नहीं होता और उस पर क़दम तक नहीं रखते। ऐसे भी लोग हैं, जो दूसरे मनुष्यों को अपनी सम्पत्ति बतलाते हैं। उन्होंने इन मनष्यों को कभी देखा तक नहीं होता। उनका सम्बन्ध इनके साथ यही होता है कि इन्हें क्लेश और यन्त्रणा पहुंचाते रहते हैं। ऐसे मनुष्य भी हैं, जो कुछ स्त्रियों को अपनी पत्नियां कहते हैं। इन स्त्रियों का दूसरों के साथ सम्बन्ध होता है। इन लोगों के जीवन का यह उद्देश्य नहीं कि जहां तक हो सके भलाई करें, बल्कि यह कि अधिक से अधिक चीजों को 'अपना' कह सकें। यही इन्सान और हैवान में अन्तर है। कम से कम मेरा यही अनुभव है कि इन्सान के कामों का निर्देश शब्दों द्वारा होता है और हमारा कृत्यों द्वारा। अन्य गुणों की तुलना न करके, इसी एक मुख्य अन्तर के आधार पर मैं कह सकता हूं कि हमारा दर्जा इन्सान से ऊंचा है। हां, तो मुझे 'अपना' घोड़ा कहने का अधिकार अस्तबल के रखवाले को दे दिया गया था। इसी लिए उसने साईस को हंटर लगवाये।

यह पता चलने पर और साथ ही यह जानकर कि मेरे रंग के कारण लोग मुझसे ऐसा व्यवहार करते हैं, मैं स्तब्ध रह गया। अपनी मां की चरित्र-हीनता के कारण तो मैं उदास रहता ही था। इन सब बातों ने मुझे और भी क्षुब्ध और चिन्तनशील बना दिया, जैसा कि आज तुम मुझे पाते हो।

"*मैं तीन प्रकार के दुर्भाग्यों का शिकार बना : एक, मैं चितकबरा* घोड़ा था। दो, बधिया कर दिया गया था। तीन, भगवान की सम्पत्ति समझा जाने या ख़ुद-मुख़्तार माना जाने के बजाय–जैसा सभी जीवधारी प्राणियों के लिए स्वाभाविक है–मुझे अस्तबल के रखवाले की सम्पत्ति मान लिया गया था।

"उनकी इस धारणा या मनोवृत्ति के अनेक कुपरिणाम मुझे भोगने पड़े। सबसे पहला तो यह कि मुझे अन्य घोड़ों से अलग रखा जाने लगा, मुझे ख़ुराक औरों से अच्छी मिलती, कसरत अधिक करवाई जाती और दूसरों से जल्दी जोता जाने लगा। मैं तीन साल का ही था, जब मुझे पहली बार गाड़ी में जोता गया। मुझे वह दिन आज भी अच्छी तरह याद है, जब वह आदमी–मुझे अपनी सम्पत्ति समझनेवाला रखवाला–बहुत से साईसों को साथ लेकर शान से मुझे जोतने आया था। उसका ख़्याल था कि मैं बिगड़ूंगा और क़ाबू में नहीं आऊंगा। उन्होंने मेरा होंठ काटा, गाड़ी के बमों के बीच धकेलकर मुझे रस्सियों से बांधा, मेरी पीठ पर चमड़े की पेटियों का सलीब की शक्लवाला बड़ा सा साज़ रखकर उसे गाड़ी के बमों के साथ जोड़ दिया। यह सब इसलिए कि मैं दुलत्ती न मार सकूं। उस वक़्त मेरे मन में केवल एक ही इच्छा थी कि मैं इन्हें दिखा दूं कि मैं काम करने के लिए कितना उत्सुक हूं और कितनी लगन के साथ काम करना चाहता हूं।

"जब मैंने एक सधे हुए घोड़े की तरह क़दम उठाये तो वे हैरान रह गये। वे मुझे जोतने लगे और मैं दुलकी-चाल में दौड़ने की मश्क़ करने लगा। मैंने ख़ूब तरक़्क़ी की। तीन ही महीने में जनरल साहिब और बहुत से अन्य लोग मेरी चाल की तारीफ़ करने लगे। तुम्हें सुनकर अचम्भा तो जरूर होगा, मगर सच यही है कि चूंकि मैं अपना स्वयं मालिक नहीं था, बल्कि रखवाला मेरा मालिक था, इसलिए मेरी चाल का उन लोगों के लिए कुछ और ही मतलब था।

"मेरे भाई घोड़े घुड़दौड़ों पर ले जाये जाते, उनको हर बात रजिस्टर में दर्ज की जाती, लोग उन्हें देखने आते, सुनहरी गाड़ियों में उन्हें जोता जाता, उनकी पीठ पर क़ीमती झूले डाली जातीं और मैं जोता जाता रखवाले के छकड़े में और उसी के काम पर चेस्मेंका और ऐसे ही क़स्बों में मुझे जाना पड़ता। यह सब इसलिए कि मैं चितकबरा था और उनके कहने के मुताबिक़ मेरा मालिक काउंट नहीं, एक रखवाला था।

"अगर हम ज़िन्दा रहे, तो कल मैं तुम्हे बतलाऊंगा कि रखवाले की इस धारणा के फलस्वरूप कि मैं उसका हूं, मुझे कैसे कैसे दुःख झेलने पड़े।"

उस पूरे दिन घोड़े मापदण्ड के साथ बड़े सम्मान का व्यवहार करते रहे। पर नेस्तेर का व्यवहार पहले जैसा ही क्रूर था। किसान का भूरा घोड़ा, घोड़ों के पास आकर हिनहिनाया और कुम्मैत घोड़ी उसके साथ फिर चुहलें करती रही।

सातवां अध्याय

तीसरी रात

अगले रोज़ जब घोड़े मामदण्ड को घेरकर बाड़े में खड़े हुए तो आकाश में नया चांद उभर आया था और उसकी मृदुल किरणें मापदण्ड पर पड़ रही थीं।

"मैं न भगवान का था, न काऊंट का, बल्कि रखवाले का। इस बात का विस्मयकारी परिणाम यह हुआ कि मेरी तेज़ चाल, जो एक घोड़े का सबसे बड़ा गुण होती है, मेरे निर्वासन का कारण बनी," चितकबरे बधिया ने अपनी कहानी जारी रखते हुए कहा। "एक दिन की बात है कि राजहंस को कसरत कराई जा रही थी। अस्तबल का रखवाला, जो उस वक़्त चेस्मेंका से लौट रहा था, मुझे घुड़दौड़ के मैदान में ले गया। राजहंस हमारे सामने से गुज़रा। वह दौड़ता तो अच्छा था, मगर दिखावा ज्यादा करता था। साथ ही उसे भागने का वह ढंग नहीं आता था, जो मैंने बड़े अभ्यास से सीखा था। जैसे ही एक पांव ज़मीन पर पड़ता, वैसे ही मेरा दूसरा पांव उठता, ताकि एक भी हरकत ज़ाया न जाए, और हर क़दम के साथ

शरीर को आगे की तरफ़ बढ़ाता। हां, तो मैंने कहा, राजहंस हमारे सामने से होकर गुज़रा। मैं घुड़दौड़ के मैदान की ओर लपका और रखवाले ने मुझे रोकने की कोशिश नहीं की।' चितकबरा अगर मुकाबला ही करना चाहता है, तो करने दो,' उसने कहा। दूसरी बार जब राजहंस हमारे सामने पहुंचा, तो रखवाले ने लगाम ढीली कर दी। राजहंस की रफ़्तार पहले से तेज़ थी, इसलिए पहले चक्कर में तो मैं पीछे रह गया। पर दूसरे चक्कर में मैं तेज होते होते उसकी गाड़ी तक जा पहुंचा, फिर साथ साथ भागता रहा और अंत में आगे निकल गया। एक बार फिर हमें दौड़ाया गया। फिर भी यही कैफ़ियत रही। मैं ज्यादा तेज दौड़ा। यह देखकर सब डर गये। फ़ैसला किया गया कि मुझे दूर ले जाकर कहीं बेच दिया जाये, जहां किसी को मेरी ख़बर तक न मिले। 'यदि काउंट तक यह बात पहुंच गयी तो बड़ा बखेड़ा उठेगा,' वे लोग कह रहे थे। मुझे घोड़ों के एक सौदागर के हाथ बेच दिया गया। मैं गाड़ी के दो घोड़ों के बीच, तीसरे घोड़े के स्थान पर जोता जाता था। सौदागर ने भी ज्यादा देर मुझे अपने पास नहीं रखा। उसने मुझे एक हुस्सार के हाथ बेच दिया, जो घुड़सेना के लिए घोड़े ख़रीदने निकला हुआ था। ख्रेनोवो की हर चीज मुझे बहुत प्यारी लगती थी, पर मेरे साथ इतना निर्मम और अन्यायपूर्ण व्यवहार किया गया था कि जब मुझे ख्रेनोवो से ले जाने लगे तो मुझे कोई दुख न हुआ। पुराने साथियों के साथ रहना अब मेरे लिए असह्य हो उठा था। उन्हें प्रेम, गौरव, स्वतन्त्रता – सभी कुछ प्राप्त था। मेरे नसीब में मृत्युपर्यन्त परिश्रम और तिरस्कार लिखा था। क्यों? यह सब क्यों? केवल इसलिए कि मैं चितकबरा था। इसी कारण मुझे किसी दूसरे की सम्पत्ति बना दिया गया था।"

उस रात मापदण्ड अपनी कहानी आगे न कह सका। एक घटना घट गयी, जिससे घोड़े उत्तेजित हो उठे। घोड़ी कुप्चीख़ा, जिसके बच्चा होनेवाला था, बड़े ध्यान से यह वार्ता सुन रही थी। पर सहसा वह घूम गयी और धीरे धीरे छप्पर की ओर चली गयी। वहां पहुंचते ही वह इतनी ऊंची आवाज़ में कराहने लगी कि सभी घोड़ों का ध्यान उसकी ओर खिंच गया। उन्होंने देखा कि वह कभी ज़मीन पर लोटती है, कभी छटपटाती हुई उठ खड़ी होती है और फिर लोटने लगती है। बूढ़ी घोड़ियां तो उसकी हालत को समझ गयीं, परन्तु युवा बछेड़े घबड़ा उठे, यहां तक कि वे बधिया को छोड़ उसके इर्द-गिर्द जा खड़े हुए। सुबह होते होते एक और बछेड़ा वहां

अपने लड़खड़ाते पांवों पर खड़ा नजर आने लगा। नेस्तेर ने रखवाले को बुलाया। वह घोड़ी और बछेड़े को अस्तबल में ले गया और स्वयं नेस्तेर बाकी घोड़ों को हांक ले गया।

आठवां अध्याय

चौथी रात

उस शाम जब फाटक बन्द हो गये और चारों ओर निस्तब्धता छा गयी तो बधिया चितकबरे ने अपनी कहानी जारी रखते हुए कहा:

"ज्यों ज्यों मैं एक हाथ से दूसरे हाथ बिकता गया, इन्सान और घोड़ों के बारे में मेरी जानकारी बढ़ती गयी। मेरे दो मालिक ऐसे थे, जिनके पास मैं सबसे ज्यादा देर तक रहा। एक राजकुमार था, जो हुस्सार घुड़सेना में अफसर था और दूसरी एक वृद्ध महिला थी, जो चमत्कारी सन्त निकोलस के गिरजे के पास रहा करती थी।

"जिन्दगी के सबसे अच्छे दिन मैंने उस हुस्सार के साथ बिताये।

"यह ठीक है कि उसी के हाथों मेरा जीवन बरबाद हुआ। यह भी ठीक है कि जीवन भर उसने न कभी किसी मनुष्य से प्रेम किया था और न ही किसी और चीज से। पर मैं उससे प्यार करता था। वह सुन्दर, धनी और प्रसन्नचित्त व्यक्ति था। इसी लिए वह किसी से प्यार नहीं करता था। इसी लिए मैं उससे प्यार करता था। तुम इस भावना को समझ सकते हो। यह हम घोड़ों की श्रेष्ठतम भावना है: उसकी मेरे प्रति उपेक्षा तथा निर्दयता और मेरी उस पर निर्भरता, यह मेरे प्रेम को एक विशेष दृढ़ता प्रदान कर रही थी। मुझे मारो, ख़ूब मारो, मारते मारते मार डालो। इससे मैं और भी ख़ुश हूंगा। उन अच्छे दिनों में मैं इस तरह सोचा करता था।

"घोड़ों के जिस व्यापारी के हाथ रखवाले ने मुझे बेचा था, उससे हुस्सार ने मुझे आठ सौ रूबल में ख़रीदा। उसने मुझे इसलिए ख़रीदा कि किसी के पास भी चितकबरे घोड़े नहीं थे। मेरे जीवन के वे सबसे अच्छे दिन थे। उसकी एक रखैल थी। यह मुझे इसलिए मालूम था कि मैं हर रोज इसे उसके पास ले जाया करता था और कभी कभी वह उसे

साथ लेकर गाड़ी पर हवाख़ोरी के लिए भी निकला करता था। उसकी रखैल सुन्दर थी। वह स्वयं भी सुन्दर था। उसका कोचवान भी सुन्दर था, इसी कारण मैं उनसे प्रेम करता था। मेरी ख़ुशी का पारावार न था। उन दिनों मेरा दैनिक कार्यक्रम इस प्रकार था: प्रातःकाल साईस मेरी देखभाल करने आता, कोचवान ख़ुद नहीं, बल्कि साईस। वह एक जिन्दादिल किसान लड़का था। वह किवाड़ खोल देता ताकि गन्दी हवा निकल जाये, लीद बाहर फेंकता, फिर झूल उतारता और मेरी पीठ को खरहरे से साफ़ करता। मुरचन लकड़ी के फ़र्श पर गिर गिरकर सफ़ेद रेखाएं बनाने लगती। मेरे खुरों से फ़र्श के तख़्तों पर खरोंचें पड़ गयी थीं और जगह जगह गड्ढे बन गये थे। खेल खेल में मैं पांव पटकता और उसका बाज़ू अपने दांतों तले दबा लेता। मेरी बारी आने पर वह मुझे ठण्डे पानी की नांद के पास ले जाता, वहां मेरे सुडौल बदन को सराहता और अपनी देख-रेख की भी तारीफ़ करता। उसी की टहल का नतीजा था कि मेरा बदन ख़ूब निखर आया था। वह मेरे शरीर का अंग अंग निहारता। मेरी टांगें तीर की तरह सीधी सतर थीं, खुर चौड़े थे। पीठ और पुट्ठा इतने मुलायम और चिकने थे कि उन पर से हाथ फिसलता था। इसके बाद ऊंचे ऊंचे सीखचों में से मेरे लिए सूखी घास डाली जाती और लकड़ी की नांद में जई। अन्त में बड़ा कोचवान फ़ेओफ़ान अन्दर आता।

"कोचवान और मालिक में बड़ी समानता थी। दोनों न किसी से डरते थे और न ही किसी से प्यार करते थे। इसी कारण सब उन्हें प्यार करते थे। फ़ेओफ़ान लाल रंग की क़मीज़, मख़मली पतलून और रूसी कोट पहने होता। छुट्टी के दिन जब वह कोट पहने और बालों पर तेल चुपड़े हुए अस्तबल में आता, तो मुझे बड़ा अच्छा लगता। आते ही वह कहता: 'मुझे भूल गये क्या, जंगली?' और कांटे की मूठ मेरे कूल्हे पर दे मारता। ज़ोर से नहीं, यों ही हंसी हंसी में। मैं जानता था कि यह ठिठोली है। मैं अपने कान पीछे बिठा लेता और दांत किचकिचाने लगता।

"हमारे यहां एक मुश्की घोड़ा हुआ करता था, जो जोड़ी में जोता जाता था। रात के वक़्त मुझे उसके साथ जोता करते थे। वह, जिसका नाम पोल्कान था, हंसना तो जैसे जानता ही न था। सदा घृणा से भरा रहता था। हमारे कटघरे साथ साथ थे और कभी कभी हम सीखचों में से एक दूसरे को काटा करते—इसमें ठिठोली की भावना ज़रा भी न होती।

फ़्रोफ़ान उससे ज़रा भी नहीं डरता था। वह सीधा उसके पास जा पहुंचता और इतने ज़ोर से चिल्लाता, मानो उसे मार ही डालेगा। मगर नहीं, वह केवल उसके पास से गुज़र जाता और फिर रस्सी उठाये लौट आता। एक बार पोल्कान और मैं कुज़नेत्स्की रोड पर सरपट भागने लगे। मालिक और कोचवान दोनों में से कोई भी नहीं डरा। वे सारा वक़्त हंसते रहे और पुकार पुकारकर लोगों को सड़क पर से हटाते रहे। वे हमारी लगामें कसे रहे और इस चतुराई से उन्होंने हमें हांका कि किसी को चोट नहीं पहुंची।

"मैंने अपना आधा जीवन और अपने सर्वश्रेष्ठ गुण उनके अर्पण कर दिये। उन्होंने मुझे पानी पीने की खुली छूट्टी दे रखी थी और इसी लिये मेरी टांगें बर्बाद हो गयीं। फिर भी, वे मेरे जीवन के सबसे अच्छे दिन थे। बारह बजे वे मुझे जोतने के लिए आते। मेरे खुरों पर तेल चुपड़ते, मेरे अयाल और माथे के बालों को भिगोते और मुझे गाड़ी के बमों के बीच जोत देते।

"हमारी गाड़ी बेंत की लकड़ी की बनी थी और अन्दर मख़मल लगी थी। साज पर चांदी के छोटे छोटे बकलस लगे थे, जाली और लगामें रेशम की थीं। साज ऐसा कि जब सब तस्मे और पेटियां अपनी अपनी जगह कस दी जातीं, तो कोई नहीं कह सकता था कि घोड़े पर साज लगा है। अक्सर मुझे ओसारे के नीचे गाड़ी में जोता जाता। तब फ़्रोफ़ान, जिसके चूतड़ कन्धों से ज्यादा चौड़े थे, बगलों में कमरबन्द बांधे चला आता, रकाब में पांव रखता, एकाध मज़ाक करता और चाबुक उठा लेता – पर केवल दिखावे के लिए। उसने मुझे कभी नहीं मारा था। वह कहता, 'चल बेटा!' और मैं शान से उचकता फाटक में से निकलता। बाहर बावर्चिन जूठन का बर्तन उठाए ले जा रही होती, मुझे देखकर दरवाज़े में ही रुक जाती। किसान लोग ईंधन उठाये आंगन में आ रहे होते, मुझे देखकर मुंह बाये वहीं के वहीं खड़े रह जाते। फाटक के बाहर थोड़ी दूर चलने के बाद हम रुक जाते। फिर अन्य कोचवान और टहलुए हमारे इर्द-गिर्द खड़े हो जाते और गप्पें हांकने लगते। यहां फाटक पर हम इन्तज़ार करते। कई बार तीन तीन घण्टे तक इन्तज़ार करते रहते। इस दौरान छोटी-मोटी दौड़ लगा लेते और फिर लौटकर इन्तज़ार करने लगते।

"आख़िर फाटक पर शोर सुनाई देता और तीख़ोन भागा आता – सफ़ेद बालों और मोटी तोंद वाला तीख़ोन, फ़ाक कोट पहने, चिल्लाता हुआ आता : 'ले चलो!' उन दिनों 'आगे बढ़ो!' कहने का बेढब रिवाज नहीं था – मानो मुझे मालूम ही न हो कि मझे आगे बढ़ना है या पीछे जाना है! फ़ेग्रोफ़ान जबान से टिटकारता। हम चलने लगते। राजकुमार बड़ा कोट पहने, सिर पर हैल्मेट लगाये, बीवर की फ़र का कालर ऊंचा उठाये, बड़ी मस्ती से लम्बे लम्बे डग भरता हुआ आता, मानो स्लेज, घोड़ों और फ़ेग्रोफ़ान में उसे कोई विशेषता नजर न आती हो। राजकुमार की काली भौंहें और सुन्दर, स्वस्थ चेहरा कालर के पीछे छिप जाता था। मैं नहीं चाहता था कि उसका चेहरा छिपे। फ़ेग्रोफान की पीठ उस समय कमान की तरह झुकी होती, हाथ आगे को फैले होते। मैं सोचता कि इस मुद्रा में वह ज्यादा देर तक खड़ा नहीं रह सकेगा। राजकुमार चलता तो उसकी एड़ें और तलवार बज उठती। क़ालीन पर से वह इस तरह चलकर आता, मानो जल्दी में हो। सब लोग मझे और फ़ेग्रोफ़ान को आश्चर्यचकित नेत्रों से निहार रहे होते। पर राजकुमार हमारी ओर आंख उठाकर भी न देखता। फ़ेग्रोफान फिर टिटकारता। मैं रास्ते पर आ जाता और ठुमककर सवारी के चबूतरे के पास जा खड़ा होता। वहां मैं एक बार कनखियों से राजकुमार को देखता और अपना शानदार सिर ऊपर को झटकता, जिससे माथे पर के मुलायम बाल नाच उठते। यदि राजकुमार ख़ुश होता, तो वह फ़ेग्रोफ़ान से कोई मजाक की बात कहता। फ़ेग्रोफ़ान जवाब देते वक़्त अपना ख़ूबसूरत सिर एक तरफ़ को थोड़ा टेढ़ा कर लेता। बाज़ू नीचा किये बिना ही लगाम में एक हल्का सा कम्पन होता, जिसे मैं झट समझ जाता और चल पड़ता। टप! टप!! टप!!! मेरे कदम बोल उठते, हर क़दम पर मेरी रफ़्तार बढ़ने लगती, मेरे शरीर की प्रत्येक मांसपेशी थिरकने लगती और बर्फ़ और कीच के छींटे उड़ उड़कर कोच रोकनेवाले पटरे पर पड़ने लगते। उन दिनों एक और वाहियात रिवाज भी न था – 'ओ!' कहने का – जैसे कोचवान के पेट में शूल उठा हो। उन दिनों वे केवल 'होशियार!' शब्द ही पुकारते और लोग एक तरफ़ को हट जाते, गर्दन आगे को बढ़ाये, ख़ूबसूरत बधिया घोड़े, बांके कोचवान और सुन्दर राजकुमार को एकटक देखने लगते।

"दुलकी-चाल से दौड़नेवाले किसी भी घोड़े को मात देने में मुझे

मज़ा प्राता था। अगर मुझे और फ़ेग्रोफ़ान को स्लेज में जुता कोई ऐसा घोड़ा नज़र आ जाता, जिससे होड़ लेना हमारी शान के ख़िलाफ़ न होता, तो मैं उसके पीछे हवा हो जाता। देखते ही देखते मैं उसके पास जा पहुंचता। मेरे पैरों से उड़ते हुए कीच के छींटे उसकी स्लेज पर पड़ने लगते। मैं आगे बढ़ता हुआ सवारी के पास जा पहुंचता और उसके सिर पर फुंकार छोड़ता। दो क़दम और... और मैं घोड़े के जुए के सामने जा पहुंचता। फिर क्या था, तीर की तरह आगे निकल जाता। प्रतिद्वन्द्वी आंखों से ओझल हो जाता, धीरे धीरे उसकी आवाज़ धीमी पड़ती जाती और अन्त में सुनाई देना बन्द हो जाती। राजकुमार, फ़ेग्रोफान और मैं—हममें से कोई भी मुंह न खोलता। हम तीनों ऐसा मुंह बना लेते, जैसे हमारा सारा ध्यान अपने काम में लगा हो और हर राह जाते निकम्मे घोड़े की ओर देखने को हमें फ़ुरसत न हो। दूसरे घोड़ों से आगे निकलना मुझे अच्छा लगता था। पर साथ ही मुझे अच्छे घोड़े देखने का भी बड़ा शौक था। जब कभी कोई बढ़िया घोड़ा सरपट दौड़ता हुआ सामने से आ रहा होता, तो मेरी आंखें उस पर गड़ जातीं। बस, क्षण भर का मामला होता। [एक आवाज़, घोड़े की एक झलक और यह गया] वह गया। और फिर हम अपनी दिशा में उड़कर जाने लगते।"

फाटक चरमराया और नेस्तेर और वास्का की आवाज़ आयी।

पांचवीं रात

मौसम बदल रहा था। सुबह से आसमान पर बादल छाये हुए थे, ओस नहीं पड़ी थी। हवा गरम थी और मच्छर काट रहे थे। ज्यों ही झुण्ड बाड़े में वापस आया, घोड़े बधिया को घेरकर खड़े हो गये और उसने अपनी कहानी सुनाना शुरू कर दिया। यह उसकी कहानी का अन्तिम भाग था।

"इसके फ़ौरन ही बाद मेरे सुख के दिनों का अन्त हो गया। ऐसे दिन केवल दो बरस तक रहे थे। दूसरी सर्दियों के अन्त में मैंने अपार सुख का अनुभव किया और तुरंत उसके बाद घोरतम क्लेश का। एक दिन मैं राजकुमार को घुड़दौड़ पर ले गया। उन दिनों श्रवटाइड का पर्व चल रहा था। अतलास्नी और बिचोक दौड़ रहे थे। मैं नहीं जानता कि दांव लगानेवाले

कमरे में मालिक की क्या बातें हुईं, पर बाहर आते ही उसने फ़ेओफ़ान को हुक्म दिया कि मुझे घुड़दौड़ के मैदान में ले जाये। वहां मुझे अत्लास्नी के विरुद्ध दौड़ाया गया। अत्लास्नी छोटी गाड़ी खींच रहा था और मैं शहरी स्लेज। मोड़ पर मैं उससे आगे निकल गया। लोग ख़ूब हंसे और तालियां बजायीं।

"जब मुझे बाहर ले जाने लगे तो लोगों का हुजूम मेरे पीछे हो लिया। कम से कम पांच शौक़ीनों ने मुझे ख़रीदने के लिए राजकुमार को हज़ारों रूबल देने की बात कही। पर वह केवल हंसता रहा और उसके सफ़ेद दांत चमकते रहे।

"'नहीं जी,' वह बोला, 'यह घोड़ा नहीं, मेरा दोस्त है। पैसे तो क्या, कोई सोने का पहाड़ भी मुझे ला दे तो भी इसे नहीं बेचूंगा। ख़ुदा हाफ़िज़ मेहरबान!' और वह स्लेज का दरवाज़ा खोलकर अन्दर आ बैठा।

"'ग्रोस्तोझेंका सड़क पर चलो!' वहां उसकी रखेल का घर था। हम उस ओर बढ़ चले। वही मेरे सुख का अन्तिम दिन था।

"हम उसके घर पहुंचे। यह उसे 'अपनी' कहता था। मगर वह किसी दूसरे को प्यार करती थी और उसके साथ कहीं निकल गयी थी। यह ख़बर इसे तब मिली, जब यह उसके घर पहुंचा। उस समय पांच बज रहे थे। बिना मेरा साज खोले यह उसका पीछा करने के लिए निकल पड़ा। तब मेरे साथ एक ऐसी बात हुई, जो पहले कभी न हुई थी। मुझ पर चाबुक पड़ने लगे और मुझे ज़बरदस्ती सरपट दौड़ाया गया। पहली बार मेरा पांव थोड़ा उखड़ गया। मैं लज्जित हो उठा और पूरी कोशिश करने लगा कि मेरी प्रतिष्ठा बनी रहे। पर सहसा राजकुमार चिल्ला उठा: 'दौड़, शैतान के बच्चे!' चाबुक हवा में सनसनाता हुआ आया और मेरी पीठ पर पड़ा। मैं सरपट दौड़ने लगा। मेरे उछलते पांव पीछे लगे लोहे के पटरे से टकराने लगे। क़रीब सोलह मील का फ़ासला तय करके हमने उसे जा पकड़ा। मैं राजकुमार को घर वापस ले आया, पर रात भर मेरा बदन कांपता रहा और मैं कुछ भी नहीं खा सका। सुबह मुझे कुछ पानी पीने को दिया गया। मैंने पिया। बस, उसी वक़्त से मैं वह पहलेवाला घोड़ा नहीं रहा। मैं बीमार पड़ गया, मुझे बहुत सताया गया। जैसा कि लोग कहते हैं, मेरे तरह तरह के इलाज होते रहे। मेरे खुर उतर आये,

सारे शरीर पर फुंसियां निकल आयीं, सातें टेढ़ी हो गयीं, छाती अन्दर को धंस गयी। मेरा मन क्लान्त हो उठा और एक एक अंग शिथिल पड़ गया। उसने मुझे घोड़ों के एक व्यापारी के हाथ बेच दिया। व्यापारी मुझे गाजरें और ऐसी ही कुछ और चीज़ें खिलाता रहा। अनजान लोगों को धोखा देने के लिए मुझे वह इस तरह तैयार करके दिखाता कि मैं स्वस्थ और बलिष्ठ हूं। पर न मेरे शरीर में ताक़त रही थी और न चाल में तेज़ी। घोड़ों के व्यापारी ने मुझ पर और भी ज़ुल्म ढाए। जब कभी कोई ग्राहक आता, तो व्यापारी मेरे कटघरे में आकर मुझे हंटर मारने लगता। मैं डर से पागल हो उठता। तब वह मेरी पीठ पर से हंटरों के निशान पोंछकर मुझे बाहर ले जाता। आख़िर, एक बुढ़िया ने मुझे ख़रीद लिया। वह मुझे जोतकर सदा चमत्कारी सन्त निकोलस के गिरजे को ले जाती। वह महिला अपने कोचवान को हंटर मारा करती थी। कोचवान मेरे कटघरे में आता और रोता। तभी मुझे मालूम हुआ कि आंसुओं का स्वाद ज़ायके से प्रिय खारा होता है, मगर बुरा नहीं होता। फिर जब वह बुढ़िया मर गयी, तो उसके कारिन्दे ने मुझे एक दूकानदार के हाथ बेच दिया। उस दूकानदार ने मुझे बहुत गेहूं खिलाया, जिससे मेरे रोग और भी बढ़ गये। तब उसने मुझे एक किसान के हाथ बेच दिया। मैं उसका हल खींचता। वहां खाने को मुझे लगभग कुछ भी न मिलता और हल से मेरी टांग कट गयी। मैं दोबारा बीमार पड़ गया। वहां से मैं अदला-बदली में एक ख़ानाबदोश के यहां पहुंच गया। उसने मेरे साथ बहुत बुरा सुलूक किया और आख़िर मुझे इस कारिन्दे के हाथ बेच दिया, जहां मैं अब हूं।"

कोई कुछ नहीं बोला। पानी बरसने लगा।

नौवां अध्याय

अगली शाम को जब सब घोड़े घर वापस लाये जा रहे थे, तो उन्होने अपने मालिक को देखा। उसके साथ उसका कोई मेहमान खड़ा था। सबसे पहले ज़ुल्दीबा ने उन्हें देखा था। उस समय वह घर के पास पहुंच चुकी थी। दो आदमी खड़े थे, उनमें से एक था उनका युवा मालिक, सिर पर सींकों की टोपी पहने हुए; दूसरा ऊंचे क़द का मोटा आदमी फ़ौजी

वर्दी पहने था। बुढ़िया घोड़ी ने कुतूहल भरी नज़र से उन्हें देखा और आड़े होकर उनके पास से गुज़र गयी। उम्र में छोटे होने के कारण अन्य घोड़े लजा रहे थे और झेंप महसूस कर रहे थे। उस वक़्त तो उन्हें ख़ास तौर पर बड़ी शर्म मालूम हुई, जब उनका युवा मालिक अपने मेहमान को साथ लिये सीधा उनके बीच चला आया और दोनों उनके बारे में आपस में बातें करने लगे।

"वह घोड़ी देखते हो? वह धूसर रंग की चितीदार घोड़ी—मैंने वोयेइकोव से ख़रीदी थी," मालिक ने कहा।

"और वह छोटी काली घोड़ी किससे ली, वह जिसकी टांगें नीचे से सफ़ेद हैं। बड़ी ख़ूबसूरत है," मेहमान बोला। उन्होंने कई घोड़ों को देखा-परखा। वे उनको दौड़ाते और फिर एकदम खड़ा कर देते। उनकी नज़र कुम्मैत घोड़ी पर पड़ी।

"वह ख्रेनोवो नस्ल की सवारी की घोड़ी है," मालिक ने कहा।

वे सभी घोड़ों की अलग अलग जांच तो नहीं कर सकते थे। मालिक ने नेस्तेर को बुलाया। बूढ़े ने ज़ोर से चितकबरे बधिया के कूल्हों में एड़ लगायी और दुलकी चाल पर उसे उनके पास ले गया। बधिया ने दौड़ने की पूरी कोशिश की, हालांकि उसकी एक टांग लंगड़ा रही थी। स्पष्ट था कि अगर उसे एक ही लात पर तेज़ से तेज़ रफ़्तार से दुनिया के दूसरे छोर तक दौड़ने का हुक्म दिया जाता, तो भी वह शिकायत न करता। वह बड़े शौक़ से सरपट दौड़ना चाहता था और अपनी तन्दुरुस्त टांग के सहारे दौड़ने की कोशिश भी कर रहा था।

"इससे अच्छी घोड़ी तुम्हें रूस भर में नहीं मिलेगी, यक़ीन मानो," एक घोड़ी की ओर इशारा करते हुए मालिक ने कहा। मेहमान ने भी दो-एक शब्द उसकी सराहना में कहे। मालिक बड़े उत्साह से, कभी इधर और कभी उधर भागता हुआ अपने घोड़े दिखा रहा था। एक एक की वंशावली और इतिहास बताता जाता। मेहमान ऊब उठा था। परन्तु यह दिखाने के लिए कि उसे इन बातों में दिलचस्पी है, नये नये सवाल गढ़ रहा था।

"अच्छा? ओह!" वह अनमने ढंग से कहता।

मालिक को इस बात का तनिक भी ख़याल नहीं था कि मेहमान ऊब उठा है। वह अपनी ही रट लगाये जा रहा था। "ज़रा इधर देखो, अजी

इसकी टांगें तो देखो। इसके लिए बड़ी रक़म देनी पड़ी थी। इसी का तीसरा बछेड़ा अभी से दौड़ता है।"

"अच्छा दौड़ता है?" मेहमान ने पूछा।

इसी तरह एक के बाद दूसरे घोड़े की चर्चा करते गये। यहां तक कि उन्होंने सभी घोड़ों की नसलें गिन डालीं और कहने को कुछ बाक़ी न रह गया। कुछ देर के लिए दोनों चुप हो गये।

"तो क्या, चलें?"

"हां, चलो।"

दोनों फाटक से बाहर निकले। मेहमान ने चैन की सांस ली कि आख़िर यह प्रदर्शन समाप्त हुआ। अब तो वे घर के अन्दर ले चलेंगे, जहां बैठकर कुछ खायेंगे-पियेंगे, सिगरेट के कश लगाएंगे। अब वह कुछ ख़ुश भी नज़र आने लगा। जब वे चलते हुए बधिया घोड़े के पास से गुज़रे, जिस पर बैठा नेस्तेर किसी और हुक्म का इन्तज़ार कर रहा था, तो मेहमान ने अपनी गुदगुदी हथेली से बधिया की पीठ थपथपायी।

"वाह, कैसा रंग-बिरंगा घोड़ा है!" उसने कहा, "किसी ज़माने में मेरे पास भी चितकबरा घोड़ा हुआ करता था, तुम्हें याद होगा मैंने तुमसे उसका ज़िक्र भी किया था।"

क्योंकि इस टिप्पणी का सम्बन्ध मालिक के अपने किसी घोड़े के साथ नहीं था, इसलिए मालिक ने उस ओर कोई ध्यान नहीं दिया और घोड़ों के झुंड की तरफ़ देखता रहा।

सहसा वह चौंक पड़ा। एक कमज़ोर, मरियल, बेढब सी आवाज़ उसके कानों में पड़ी। जैसे कोई घोड़ा हिनहिनाने की कोशिश कर रहा हो। बधिया घोड़े ने हिनहिनाना शुरू किया, पर वह सकपकाकर बीच ही मे चुप हो गया। न मेहमान ने और न ही मालिक ने उसकी ओर ध्यान दिया और दोनों बढ़ते हुए घर की ओर चले गये। मापदण्ड ने पहचान लिया था। यह मोटा आदमी वही उसका प्यारा मालिक था, वही सेर्पुख़ोव्स्कोई, जो किसी ज़माने में धनी और रूपवान राजकुमार हुआ करता था।

दसवां अध्याय

. . . .

. . . .

हल्की हल्की बूंदाबांदी चल रही थी। बाड़े का वातावरण उदास था, पर घर में यह बात न थी। अन्दर शानदार बैठक में बढ़िया ज़ियाफ़त चल रही थी। मालिक, मालकिन तथा मेहमान, तीनों मेज़ पर बैठे थे।

मालकिन समावार के पास सीधी तनकर बैठी थी। उसके बैठने के ढंग, उसके मोटापे और विशेषकर उसकी बड़ी बड़ी आंखों से स्पष्ट था कि वह गर्भवती है। उसकी आंखों से विनम्रता और गंभीरता टपक रही थी। चेहरे के भाव से लगता था कि वह अपने में खोई हुई है, बाहर की दुनिया से बेख़बर है।

मालिक के हाथ में एक डिब्बा था, जिसमें बढ़िया क़िस्म के दस बरस पुराने सिगार भरे थे। वह बार बार कह रहा था कि ऐसे सिगार और किसी के पास नहीं मिल सकते। मालिक ख़ूबसूरत जवान था, उम्र २५ वर्ष की होगी, चेहरे से ताज़गी टपकती थी, बाल ख़ूब संवरे हुए, चुस्त, शानदार पोशाक पहने था। घर में ढीला-ढाला सूट पहने रहता, जो लन्दन से सिलवाया गया था। घड़ी की चेन से सोने के भारी लोलक लटक रहे थे। सोने के ही मोटे मोटे कफ़-बटन थे, जिनमें फ़िरोज़ा जड़ा था। दाढ़ी नेपोलियन तृतीय के फ़ैशन के अनुसार तराशी हुई, होंठों के दोनों तरफ चूहे की दुम जैसी पतली पतली मूंछें लटक रही थीं, जिन्हें बड़ी सफ़ाई से चुपड़ा और ऐंठा गया था। जान पड़ता था कि पेरिस में तराशी गयी है। मालकिन जालीदार, रेशमी गाउन पहने थी, जिस पर फूलों के गुच्छे बने थे। उसके घने, सुनहरे बालों में सोने के बड़े बड़े, घुमावदार पिन लगे थे। बाल बड़े सुन्दर थे, भले ही सारे के सारे उसके अपने न हों। कलाइयों पर चूड़ियां और हाथों में बड़ी बड़ी क़ीमती अंगूठियां पहने थी। समावार चांदी का था। प्लेट-प्याले बढ़िया चीनी मिट्टी के। चिड़िया की दुमवाला बढ़िया फ़्राक कोट और सफ़ेद वास्कट पहने तथा गुलूबन्द लगाये एक चोबदार दरवाज़े के साथ बुत की तरह खड़ा हुक्म का इन्तज़ार कर रहा था। मेज़-कुर्सियां शानदार लकड़ी की बनी थीं और उन पर नक़्क़ाशी का बढ़िया काम था। दीवारों पर गहरे रंग का फूलदार काग़ज़ लगा था। मेज़ के पास

बढ़िया नस्ल का कुत्ता लेटा हुआ था, जिसके गले में चांदी की जंजीर पड़ी थी। उसकी हर करवट पर जंजीर खनक उठती थी। मालकिन ने कुत्ते को एक अजीब सा अंग्रेज़ी नाम दे रखा था। इसका उच्चारण न मालिक और न मालकिन ही कर सकती थी। दोनों अंग्रेज़ी नहीं जानते थे। एक कोने में पौधों के बीच एक बड़ा प्यानो रखा था, जिस पर पच्चीकारी का काम था। कमरे की सारी सजावट बिल्कुल नई, विरली और अमीराना ढंग की थी। हर चीज़ पर विलास और आडम्बर का रंग था। किसी भी चीज़ से सुरुचि का परिचय नहीं मिल रहा था।

मालिक को घुड़दौड़ के घोड़ों का जनून था। वह एक तगड़ा, स्वस्थ और उत्साही पुरुष था, एक ऐसे स्वभाव का आदमी, जिसका उत्साह कभी ठण्डा नहीं पड़ता। वह उन आदमियों में से था, जो सेबल फ़र के कोट पहनते हैं, अभिनेत्रियों को सबसे क़ीमती फूलों के गुच्छे भेंट करते हैं, शानदार होटलों में सबसे बढ़िया नयी नयी क़िस्म की शराबें पीते हैं, अपने नाम पर लोगों को पुरस्कार दिलवाते हैं और सबसे ख़र्चीली औरतों को अपनी रखेल बनाकर रखते हैं।

मेहमान की उम्र चालीस से ऊपर रही होगी, लम्बा क़द, मोटा बदन, चांद निकली हुई, बड़े बड़े गलमुच्छे और मूंछें। जवानी में वह ज़रूर सुन्दर रहा होगा, पर अब देखने पर जान पड़ता कि शारीरिक, नैतिक और आर्थिक, तीनों तरह से उसका पतन हो चुका है।

उस पर इतना ज़्यादा क़र्ज़ चढ़ चुका था कि जेल से बचने के लिए उसे सरकारी नौकरी की शरण लेनी पड़ी थी। इस समय वह किसी छोटे नगर की ओर जा रहा था, जहां उसे घोड़ों के फ़ार्म के मैनेजर के पद पर नियुक्त किया गया था। अगर उसके प्रतिष्ठित सम्बन्धी इसके लिए कोशिश न करते, तो यह नौकरी भी उसके हाथ न आती। वह फ़ौजी कोट और नीला पतलून पहने था। कोट और पतलून दोनों ही अमीराना ठाठ के थे। इसी तरह अन्दर के कपड़े और ऐसे ही उसकी घड़ी भी। बूटों के तलवे एक इंच मोटे थे।

जब निकीता सेर्पुख़ोव्स्कोई ने जवानी में क़दम रखा, तो उसके पास पूरे बीस लाख रूबल थे और आज उसके सिर पर एक लाख बीस हज़ार रूबल का क़र्ज़ था। जिस आदमी के पास इतनी धन-सम्पदा रही हो उसका एक अपना नाम होता है और उसकी बदौलत वह जहां से चाहे क़र्ज़ उठा

सकता है और इस तरह कम से कम दस साल और ऐश की जिन्दगी गुज़ार सकता है। पर ये दस साल भी बीत चुके थे और नामवरी ख़त्म हो चुकी थी। निकीता के लिए ज़िन्दगी अब बोझ बन गयी थी। वह शराब पीने लगा था—मतलब कि शराब पीकर मदहोश हो जाता था। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। जहां तक पीने का सवाल है, न कभी उसने पीना शुरू किया था और न ही ख़त्म। जिस बेचैनी से वह इधर-उधर देखता (अब उसकी नज़र एक जगह पर टिक नहीं पाती थी, भटकती रहती थी), उसकी आवाज़ और भाव-भंगिमा में जो एक प्रकार का संकोच आ गया था, उससे उसके पतन का अच्छी तरह पता चल जाता था। इस तरह की बेचैनी उसके स्वभाव में पहले कभी न रही थी। इस कारण वह और भी विचित्र लगती थी। पहले वह कभी भी किसी से डरता न था, न इन्सान से और न दुनिया की किसी और चीज से। और आज भाग्य के उलट-फेर के कारण उसके स्वभाव में घबराहट और व्यग्रता आ गयी थी। मालिक और मालकिन, दोनों ने इस चीज़ को भांप लिया था। दोनों की नज़रें मिलीं, जिसका मतलब था कि हम दोनों एक-दूसरे के मन की बात समझते हैं, पर इस वक़्त इस आदमी की चर्चा नहीं करेंगे। चर्चा करेंगे तो बिस्तर में, जब दोनों अकेले होंगे। इस वक़्त तो ज्यों-त्यों निकीता के साथ बैठे रहना होगा, बल्कि आतिथ्य भाव भी दिखाना होगा। निकीता अपने मेज़बान को यों ख़ुशहाल देखकर तिरस्कृत महसूस कर रहा था, उसे अपने बीते दिन याद आ रहे थे, जो फिर लौटकर नहीं आयेंगे और उसका मन ईर्ष्या से भर उठा था।

"हम सिगार सुलगा लें? तुम्हें कोई एतराज़ तो नहीं, मारी?" उसने मालकिन से एक विशेष रहस्यपूर्ण लहजे में पूछा। इसमें शिष्टता और मैत्री का भाव तो था, परन्तु आदर-भाव बहुत कम था। इस लहजे में फ़ैशनेबुल सोसाइटी के लोग अपने मित्रों की रखैलों को सम्बोधित करते हैं, उनकी पत्नियों को नहीं। इसलिए नहीं कि वह उसे नाराज़ करना चाहता था—इसके विपरीत वह उसका और मालिक दोनों का कृपापात्र बनना चाहता था (भले ही वह अपने मन में इसे स्वीकार न करता हो)। वह केवल इस तरह की स्त्रियों के साथ ऐसा लहजा बरतने का आदी हो चुका था। वह जानता था कि यदि वह उसे उस भांति सम्बोधित करेगा, जैसा कि भद्र महिलाओं को किया जाता है, तो वह स्वयं हैरान हो जायेगी,

बल्कि नाराज़ तक होगी। इसके अलावा, वह अपने शिष्टाचार को मानो बचाये रखना चाहता था, कि कभी ज़रूरत पड़ने पर वह इसका प्रयोग अपने किसी साथी की असल पत्नी के साथ करेगा। वह ऐसी औरतों को सदा शिष्टता से सम्बोधित करता। इस कारण नहीं कि उसके भी विचार वैसे ही थे, जैसे कि पत्रिकाओं में छपते रहते हैं–हर प्राणी के साथ उसके गुणानुसार आदर से व्यवहार करना चाहिए, समाज में उसके पद का विचार नहीं करना चाहिए, ब्याह बिल्कुल ढकोसला है इत्यादि (वह इस तरह की फ़ुज़ूल बातें नहीं पढ़ा करता था)–परन्तु इसलिए कि सभी शिष्ट पुरुष उनसे इसी तरह पेश आते हैं। अपनी शराफ़त पर उसे नाज़ था, भले ही उसका पतन हो चुका हो।

उसने एक सिगार उठाया। मालिक ने बिना सोचे मुट्ठी भर सिगार उठाकर उसके सामने रख दिये।

"लो, पीकर देखो, कितने अच्छे हैं।"

निकीता ने सिगार परे हटा दिये और उसकी आंखों में अपमान और क्षोभ का भाव झलक उठा।

"धन्यवाद," उसने अपना सिगार-केस निकाला "लो, ये मेरे सिगार पीकर देखो।"

मालकिन अधिक अनुभूतिशील थी। स्थिति को भांपकर उसने झट से कहा:

"मुझे सिगार बेहद अच्छे लगते हैं। पर मैं सोचती हूं कि मैं कभी नहीं पीऊंगी, क्योंकि घर में सभी लोग हर वक़्त पीते रहते हैं।"

और उसके होंठों पर एक स्निग्ध कोमल मुस्कान खेल गयी। जवाब में वह भी कुछ कुछ मुस्कराया–उसके दो दांत गायब थे।

पर मालिक की भावनाएं कोमल नहीं थीं। उसने अपनी बात जारी रखते हुए कहा:

"नहीं नहीं, यह पियो। दूसरे सिगार इतने तेज़ नहीं। फ़िट्ज़, bringen Sie noch eine Kasten, dort zwei."*

जर्मन चोबदार सिगारों का एक नया डिब्बा उठा लाया।

---

*एक और डिब्बा ले आओ, वहां दो रखे हैं (जर्मन)।

"तुम्हें कौनसे ज्यादा पसन्द हैं? तेज़ सिगार? ये बहुत बढ़िया हैं। लो, सबके सब ले लो," वह ज़ोर देता रहा। उसे यह जताने में मज़ा आ रहा था कि उसके पास बड़ी विरल और बढ़िया चीज़ें हैं। उसे और किसी बात की सुध-बुध ही न थी। सेर्पुखोव्स्कोई ने सिगार सुलगाया और जल्दी से वार्त्तालाप की टूटी कड़ी जोड़कर आगे कहना शुरू कर दिया:

"तुम क्या कह रहे थे, कितनी रकम तुम्हें अत्लास्नी के लिए देनी पड़ी थी?"

"बहुत पैसे देने पड़े थे। कम से कम पांच हज़ार। पर ऐसे घोड़े के लिए यह रकम ज्यादा नहीं है। इसके बछेड़ों को ज़रा देखो!"

"घुड़दौड़ के हैं?"

"हां, सबके सब। इस साल उसके बछेड़े ने तीन इनाम मारे, तूला, मास्को और सेंट पीटर्सबर्ग में। वोयेइकोव के घोड़े वोरोनोई के मुकाबले में दौड़ा था। अगर वह शैतान जॉकी एक के बाद दूसरी चार ग़लतियां न करता तो यह उसे कहीं पीछे छोड़ गया होता।"

"यह अभी इतना सधा नहीं। मेरे ख़्याल में इसमें डच ख़ून ज़रूरत से ज्यादा है," सेर्पुखोव्स्कोई ने कहा।

"*और घोड़ियां कैसी हैं? कल मैं तुम्हें वे भी दिखाऊंगा। मैंने तीन* हज़ार रूबल दोब्रोन्या के लिए और दो हज़ार लास्कोवाया के लिए दिये थे।"

मालिक फिर अपनी अमीरी की शान बघारने लगा। मालकिन देख रही थी कि यह वार्ता सेर्पुखोव्स्कोई के लिए असह्य हो उठी है और उसको वह बड़े अनमने भाव से सुन रहा है।

"और चाय डालूं?" उसने पूछा।

"नहीं," मालिक ने कहा और फिर बातों में लग गया। वह जाने के लिए उठ खड़ी हुई। लेकिन मालिक ने उसे रोक लिया और बांहों में भरकर उसका मुंह चूम लिया।

उन्हें देखकर सेर्पुखोव्स्कोई के मुंह पर एक कृत्रिम सी मुस्कान आ गयी। मालिक उठा और मालकिन की कमर में हाथ डाले उसे दरवाज़े तक छोड़ने गया। यह देखकर निकीता के चेहरे का भाव सहसा बदल गया। उसने एक ठण्डी सांस ली और उसके फूले हुए चेहरे पर निराशा का भाव, यहां तक कि क्रोध का भाव छा गया।

ग्यारहवां अध्याय

मालिक लौट आया और मुस्कराते हुए निकीता के ऐन सामने बैठ गया। कुछ देर तक दोनों मौन रहे।

"तुम कह रहे थे कि तुमने घोड़ा वोयेइकोव से ख़रीदा?" सेर्पुख़ोव्स्कोई ने यों ही पूछ लिया।

"हां, अत्लास्नी को उसी से लिया। दुबोवीत्स्की से मैं एक घोड़ी ख़रीदना चाहता था, पर उसके पास कोई काम का घोड़ा था ही नहीं।"

"वह तो बर्बाद हो गया है," सेर्पुख़ोव्स्कोई बोला। फिर सहसा रुक गया और इधर-उधर देखने लगा। उसे याद आया कि इसी "बर्बाद हुए" आदमी को उसे बीस हज़ार रूबल देने थे। अगर लोग दुबोवीत्स्की के बारे में यह कहते हैं कि वह तबाह हो चुका है, तो उसके बारे में क्या कहते होंगे? वह चुप हो गया।

फिर बड़ी देर तक कोई नहीं बोला। मालिक अपनी ज़मीन-जायदाद की एक एक चीज़ के बारे में सोचने लगा कि वह मेहमान के सामने किस किसकी डींग मार सकता है। सेर्पुख़ोव्स्कोई मन ही मन सोच रहा था कि क्या कहे, जिससे ज़ाहिर हो कि उसकी हालत इतनी पतली नहीं है। पर सिगारों के सरूर के बावजूद दोनों के मन बड़े सुस्त हो रहे थे। "यह पीने को कब कहेगा?" सेर्पुख़ोव्स्कोई ने मन ही मन कहा। "कुछ पीना चाहिए, वरना मैं तो ऊब के मारे मर जाऊंगा," मालिक भी सोच रहा था।

"क्या यहां ज़्यादा देर रुकने का इरादा है?" सेर्पुख़ोव्स्कोई ने पूछा।

"महीना भर और ठहरूंगा। क्या ख़्याल है, कुछ खाया न जाये? फ़्रिट्ज़, खाना तैयार है?"

दोनों खानेवाले कमरे में चले। झाड़-फ़ानूस के नीचे मेज़ सजी थी। मेज़ पर शमादान और तरह तरह की बढ़िया चीज़ें रखी थीं – शीशे के ख़मदार सिफ़ोन, ऐसी बोतलें, जिनके मुंह में छोटी छोटी गुड़ियां खोंसी हुई थीं, सुराहियां, जिनमें तरह तरह की बढ़िया शराबें थीं और तश्तरियों-प्लेटों में स्वादिष्ट भोजन। दोनों ने पहले शराब पी, फिर खाने लगे। फिर शराब पी, फिर खाया और आख़िरकार बातें करने लगे। सेर्पुख़ोव्स्कोई का चेहरा लाल हो गया। उसकी ज़बान खुलने लगी।

9—1857

औरतों की चर्चा छिड़ी। जिन जिन औरतों को अपनी रखेल रख चुके थे, उनका जिक्र हुआ–जिप्सी औरतें, फ़्रांसीसी औरतें, नर्तकियां।

"तो फिर तुमने मत्ये को छोड़ दिया?" मालिक ने पूछा। मत्ये ही वह स्त्री थी, जो सेर्पुखोव्स्कोई के विनाश का कारण बनी थी।

"नहीं, मैंने उसे नहीं छोड़ा, वही मुझे छोड़ गयी। उफ़! आदमी को कैसे कैसे दिन देखने पड़ते हैं। आजकल यदि एक हज़ार रूबल भी मेरे हाथ लग जायें, तो मैं अपने को ख़ुशकिस्मत समझूं। जी चाहता है कि दुनिया से भागकर कहीं निकल जाऊं। मास्को में अब एक दिन भी नहीं रहना चाहता। पर, जब मैं उन दिनों को सोचता हूं..."

सेर्पुख़ोव्स्कोई की बातों से मालिक ऊब उठा था। वह अपनी बातें करना चाहता था, डींग मारना चाहता था और सेर्पुख़ोव्स्कोई अपना दुखड़ा रोना चाहता था, अपने शानदार अतीत की चर्चा करना चाहता था। मालिक ने उसके गिलास में शराब ढाली और इन्तज़ार करने लगा कि कब वह अपनी बात ख़त्म करे ताकि उसे अपने नस्ली घोड़ों के अस्तबल के बारे में कुछ कहने का मौक़ा मिले। उसका अस्तबल कैसा सुव्यवस्थित है, शायद ऐसा किसी का न होगा। मारी उसे सचमुच प्यार करती है। दौलत की ख़ातिर नहीं, बल्कि सच्चे दिल से चाहती है।

"मैं तुम्हें बता रहा था कि मैंने अपने फ़ार्म में..." उसने कहना शुरू किया, मगर सेर्पुख़ोव्स्कोई ने बीच ही में बात काट दी।

"सच मानो, एक ज़माना था, जब मुझे जीवन से मोह था और मैं जीने का ढंग भी जानता था," उसने कहा। "तुम अपनी घुड़सवारी की बात कह रहे थे। अच्छा यह बताओ, तुम्हारा सबसे तेज़ घोड़ा कौनसा है?"

मालिक को मौका मिल गया कि वह भी अपने नस्ली घोड़ों के बारे में कुछ बता सके। उसने कुछ कहना शुरू ही किया था कि सेर्पुख़ोव्स्कोई ने फिर बात काट दी:

"तुम लोग जो फ़ार्मों के मालिक हो, बस केवल नाम पैदा करना चाहते हो, जीवन का आनन्द लेना, लुत्फ़ उठाना तो तुम लोग जानते ही नहीं। मैंने अपना जीवन और ही तरह से बिताया है। याद है, मैंने तुमसे कहा था कि मेरे पास भी एक चितकबरा घोड़ा हुआ करता था, उस पर भी बिल्कुल वैसे ही धब्बे थे, जैसे कि तुम्हारे चरवाहे के घोड़े पर हैं। तुम मानोगे नहीं, मगर वह भी घोड़ों में एक घोड़ा था। यह बहुत पहले

की बात है, सन् ४२ की। तब मैं मास्को में आया ही था। मैं घोड़ों के एक सौदागर के पास गया। उसके पास एक चितकबरा घोड़ा था। सब लक्षण अच्छे थे। मैंने क़ीमत पूछी। बोला—एक हज़ार। मुझे घोड़ा पसन्द आया, मैंने तुरंत ख़रीद लिया और उसे जोतने लगा। उसके बराबर का घोड़ा न मेरे पास और न तुम्हारे पास और न किसी और के पास कभी रहा है और न कभी होगा। न रफ़्तार में, न ताक़त में और न ख़ूबसूरती में। तुम तो उस वक़्त बहुत छोटे थे, उसे कहां जानते होगे, पर तुमने उसका नाम ज़रूर सुना होगा। सारा मास्को उसे जानता था।

"हां, याद आता है मैंने उसका नाम तो सुना था," मालिक ने उपेक्षा से कहा, "पर मैं तुम्हें अपने..."

"ज़रूर सुना होगा। और मैंने उसे यों, चुटकी में ख़रीद लिया, न उसके काग़ज़ देखे, न नस्ल पूछी, न किसी से पूछ-ताछ की। वोयेइकोव और मैंने इसके वंश की जांच की। उसका नाम मापदण्ड था और वह दयालु प्रथम का बेटा था। इतने इतने लम्बे तो वह डग भरता था। ख्रेनोवो फ़ार्मवालों ने उसे अस्तबल के रखवाले के हाथ बेच दिया, क्योंकि वह चितकबरा था। उस फ़ार्म में केवल नस्ली घोड़े रखे जाते थे। रखवाले ने उसे बधिया कर दिया और घोड़ों के एक व्यापारी को बेच दिया। उस जैसा घोड़ा किसी ने नहीं देखा होगा। वाह, क्या दिन थे वे! 'हाय, जवानी! गई जवानी!'" उसने ठण्डी सांस लेते हुए एक जिप्सी गीत की पंक्ति दोहराई। उसे नशा चढ़ने लगा था। "मेरी उम्र तब पचीस साल की रही होगी। अस्सी हज़ार सालाना की मेरी आमदनी थी। एक भी बाल सफ़ेद नहीं हुआ था, एक भी दांत नहीं टूटा था। सब दांत मोतियों की तरह चमकते थे। जिस चीज़ पर हाथ रखता, सोना हो जाती थी। और अब—सब खेल ख़त्म हो गया है!"

"उन दिनों घोड़ों की वह रफ़्तार नहीं हुआ करती थी, जो आज है," मालिक ने विराम का फ़ायदा उठाते हुए फ़ौरन बीच में फ़िक़रा जड़ दिया। "क्या बताऊं, मेरे पहले घोड़ों ने जब दौड़ना शुरू किया तो बिना..."

"तुम्हारे घोड़ों ने? वाह, उन दिनों घोड़े इनसे कहीं ज्यादा तेज़ हुआ करते थे।"

"क्या मतलब तुम्हारा, ज्यादा तेज़ होते थे?"

"हां, हां, कहीं ज्यादा तेज़। मुझे वह दिन याद है जब मैं मापदण्ड

को मास्को में घुड़दौड़ पर ले गया था। मेरे अपने घोड़े कभी घुड़दौड़ में शामिल नहीं होते थे। मुझे घुड़दौड़वाले घोड़े पसन्द भी नहीं थे। मैं तो केवल नस्ली घोड़े रखा करता था – जनरल, शोले, मुहम्मद। मैं चितकबरे को जोतकर वहां पहुंचा। मेरे पास एक शानदार कोचवान भी हुआ करता था। मुझे वह बड़ा पसन्द था। शराब ने उसे चौपट कर दिया। ख़ैर, तो मैं घुड़दौड़ के मैदान में पहुंचा। 'तुम कब घुड़दौड़ के घोड़े ख़रीदोगे, सेर्पुख़ोव्स्कोई?' लोग मुझसे पूछने लगे। 'मुझे तुम्हारे निकम्मे घोड़ों की क्या जरूरत है? मेरा चितकबरा तुम्हारे सभी घोड़ों को मात दे सकता है,' मैंने कहा। 'क्या मज़ाक करते हो! यह कैसे हो सकता है?' वे बोले। मैंने कहा: 'तो लगाते हो शर्त? रही एक एक हज़ार रूबल की शर्त।' शर्त लग गयी। हमने हाथ मिलाये। घुड़दौड़ शुरू हुई। मेरा घोड़ा पूरे पांच सेकण्ड पहले पहुंचा। मैंने एक हज़ार रूबल जीत लिये। मगर यह तो मामूली बात थी। एक बार मैंने गाड़ी में तीन नस्ली घोड़े जोतकर एक सौ वेर्स्ता का फ़ासिला तीन घण्टे में तय किया। सारे मास्को में सनसनी फैल गयी।"

सेर्पुख़ोव्स्कोई इस सफ़ाई और इतमीनान से झूठ बोले जा रहा था कि मालिक को एक शब्द भी कहने का मौका नहीं मिल रहा था। उसका चेहरा लटक गया। उसके सामने बैठा वह जाम पर जाम भरता गया – इसके सिवा वह और क्या करता?

पौ फटने लगी। फिर भी शराब के दौर चलते रहे। ऊब के मारे मालिक का बुरा हाल हो रहा था। आख़िर वह उठ खड़ा हुआ।

"मेरे ख़्याल में अब सोना चाहिए," सेर्पुख़ोव्स्कोई बोला और बड़ी मुश्किल से कुर्सी पर से उठकर, हांफता-लड़खड़ाता हुआ अपने कमरे की ओर चल दिया।

मालिक बिस्तर में अपनी रखैल के साथ बातें कर रहा था।

"इस आदमी के साथ तो बात करते हुए भी घिन आती थी। बहुत पी गया और सारा वक़्त झूठ बकता रहा।"

"और वह मुझसे भी चुहलबाज़ी करने में न चूका।"

"मेरा ख़्याल है कि यह मुझसे पैसे मांगेगा।"

सेर्पुख़ोव्स्कोई अपने पूरे कपड़े पहने बिस्तर पर दराज़, ऊंची ऊंची सांस लिये जा रहा था।

"जान पड़ता है मैं आज बहुत झूठ बोलता रहा हूं," उसने सोचा, "मगर क्या हुआ? शराब अच्छी थी, पर वह निरा सुअर का बच्चा है। निपट बनिया। मैं भी सुअर का बच्चा हूं," उसने अपने आपसे कहा और ठहाका मारकर हंस पड़ा। "पहले मैं औरतों की परवरिश किया करता था। अब वे मेरी परवरिश करती हैं। वह विंक्लर राण्ड मुझे रखे हुए है—मैं उससे पैसे लेता हूं। जैसी करनी वैसी भरनी—अब बेटा भुगतो, मुझे क्या! अच्छा, मुझे कपड़े उतारकर सोना चाहिए, क्यों? अरे, ये नामुराद बूट नहीं उतरते!"

"अरे कोई है?" उसने पुकारा। पर जो टहलुआ उसका काम करता था, वह कब का जाकर सो चुका था।

वह उठा, उसने एक एक करके अपना कोट, वास्कट, यहां तक कि किसी तरह पतलून भी उतार फेंका, मगर वह बूट न उतार सका। उसकी थलथल तोंद बीच में रुकावट डालती थी। आख़िर एक बूट उतरा, पर हज़ार खींचने-झोंकने के बावजूद दूसरा बूट पांव में ही फंसा रहा। वह उसे पहने हुए ही बिस्तर पर पड़ रहा और ख़र्राटे भरने लगा। कमरे में तम्बाकू, शराब और बुढ़ापे की घिनौनी गन्ध फैल रही थी।

बारहवां अध्याय

उस रात मापदण्ड बहुत कुछ सुना सकता था, मगर वास्का उसकी पीठ पर झूल डालकर उसे सरपट दौड़ा ले गया और रात भर एक सायबान के बाहर बांधे रखा। उसकी बगल में ही किसी गरीब किसान का घोड़ा भी बंधा था। दोनों घोड़े एक दूसरे को चूमते-चाटते रहे। सुबह वे घर लौटकर आये, तो मापदण्ड के बदन में खुजली होने लगी।

"मुझे इतनी खुजली क्यों हो रही है?" उसने मन ही मन सोचा।

पांच दिन बीत गये। सलोतरी को बुलाया गया।

"इसे तो खुजली हो गयी है," सलोतरी ने हंसते हुए कहा, "इसे जिप्सियों के हाथ बेच दो।"

"किसलिए? इसे चाहे मारो या जो करो, मगर यहां से इसी वक़्त ले जाओ।"

सुबह का शान्त और सुहाना वक़्त था। घोड़े चरागाह को जा चुके थे। मापदण्ड पीछे अकेला रह गया था। एक घिनौना सा आदमी उसके पास आया – पतला, काला, गन्दा सा। उसके कोट पर जगह जगह काले काले धब्बे थे। वह खाल उतारनेवाला था। आंख उठाकर मापदण्ड को देखे बिना, उसने बाग पकड़ी और उसे हांक ले गया। मापदण्ड घुमकर पीछे देखे बिना, अपनी टांगों को घसीटता हुआ चुपचाप चलता रहा। पिछली टांगें बार बार पुआल में उलझतीं और ठोकरें खाती रहीं। जब वे फाटक से बाहर निकले तो बधिया कुएं की तरफ़ मुड़ा, मगर खाल उतारनेवाले ने उसे पीछे खींच लिया: "उधर जाके अब क्या करोगे?"

वास्का पीछे पीछे चल रहा था। खाल उतारनेवाला और वास्का दोनों उसे ईंटों के ओसारे के पीछे एक खड्ड में ले गये और वहां जाकर ख़ामोश खड़े हो गये, मानो यहां कोई विलक्षण घटना घटनेवाली हो। खाल उतारनेवाले ने लगाम वास्का के हाथ में दी और ख़ुद अपना कोट उतारा। फिर उसने आस्तीनें चढ़ाईं, छुरे और सिल्ली को निकाला, जिन्हें उसने अपने ऊंचे बूटों में खोंस रखा था और छुरे को तेज़ करने लगा। बधिया ने कोशिश की कि गर्दन आगे बढ़ाकर लगाम की रस्सी मुंह में ले और वक़्त गुज़ारने के लिए उसे चबाता जाये, परन्तु वह बहुत दूर थी। उसने ठण्डी सांस ली और आंखें बन्द कर लीं। उसका होंठ लटक गया, जिससे पीले दांतों के ठूंठ नज़र आने लगे। छुरा तेज किया जा रहा था। वह उसी की लय में ऊंघने लगा। उसकी एक टांग में बार बार दर्द उठने लगा, जिसने उसे परेशान कर दिया। ज़ख़्म के कारण टांग पर सूजन हो रही थी। सहसा उसे महसूस हुआ जैसे किसी ने जबड़ा पकड़कर झटके से उसका सिर ऊपर उठाया है। उसने आंखें खोलीं। देखा, दो कुत्ते ऐन सामने खड़े थे। एक हवा सूंघ रहा था। दूसरा ज़मीन पर बैठा बधिया की ओर देखे जा रहा था, मानो इससे कुछ मिलने की आशा हो। बधिया ने कुत्तों की तरफ़ देखा और उसी बाज़ू के साथ मुंह रगड़ने लगा, जो उसे थामे हुए था।

"यह मेरा इलाज करने आये हैं," उसने सोचा। "ठीक है, करें।"

सचमुच उसे महसूस हुआ, जैसे वे लोग उसके गले पर कुछ चला रहे हैं। सहसा एक तीखा सा दर्द उठा। वह चौंका, लातें पटकने लगा, फिर रुक गया और देखने लगा कि वे आगे क्या करते हैं। कोई गरम गरम तरल सी चीज़ उसके गले और छाती पर बहने लगी। उसने गहरी सांस ली,

इतनी गहरी कि उसके कूल्हे उभर आये और उसी क्षण वह बेहतर महसूस करने लगा। उसके जीवन का सारा बोझ उस पर से मानो उतरने लगा। उसने आंखें बन्द कर लीं और सिर को ढीला छोड़ दिया। सिर लुढ़क गया। किसी ने उसे पकड़कर ऊंचा नहीं किया। उसने गर्दन ढीली छोड़ दी, उसकी टांगें कांपने लगीं और सारा शरीर लड़खड़ाने लगा। वह इतना डर नहीं रहा था, जितना कि हैरान हो रहा था। उसे लगा कि हर एक चीज बदल रही है। इसी हैरानी में उसने आगे छलांग लगाने की कोशिश की, उछलने की कोशिश की, मगर उसकी टांगें ऐंठने लगीं और वह एक ओर को लुढ़क गया। अपने को खड़ा रखने की कोशिश में वह बाईं ओर को ढह गया। जब तक शरीर की ऐंठन समाप्त नहीं हो गई, खाल उतारनेवाला कुत्तों को परे हटाये रहा। फिर नजदीक आकर उसने घोड़े को एक टांग से पकड़ा और पीठ के बल लिटा दिया। फिर वास्का को उसे पकड़े रहने को कहा और स्वयं उसकी खाल खींचने लगा।

"एक जमाने में यह अच्छा घोड़ा था," वास्का बोला।

"अगर थोड़ा गोश्त-वोश्त इसमें और होता तो खाल भी अच्छी होती," खाल उतारनेवाले ने कहा।

शाम के समय ढलान चढ़ते हुए घोड़ों का झुण्ड घर लौटा। जो घोड़े बाएं हाथ चल रहे थे, उन्होंने देखा कि कोई लाल सा लोथड़ा जमीन पर पड़ा है। कुत्ते उस पर चढ़े हुए हैं और ऊपर कौवे और चीलें मण्डरा रही हैं। एक कुत्ते ने अपने दोनों पंजों से इसे पकड़ा हुआ है और दांतों से खींच रहा है। जब तक टुकड़ा कटकर अलग नहीं हो गया और उसके दांतों के नीचे से कटर कटर की आवाज नहीं आने लगी, वह उसे झंझोड़ता ही रहा। कुम्मैत घोड़ी हठात खड़ी हो गई और अपनी गर्दन आगे को बढ़ाये बड़ी देर तक हवा को सूंघती रही। बड़ी मुश्किल से उसे वहां से खींचकर ले जा पाये।

जो खड्डु पुराने जंगल को काटता हुआ सा जा रहा है, वहां सुबह के वक्त घनी झाड़ी के नीचे भेड़िये के कुछेक पिल्ले विहुंक रहे थे। कुल पांच पिल्ले थे, जिनमें से चार का क़द-बुत तो एक जैसा था, मगर पांचवां

कद में छोटा था, पर उसका सिर धड़ से बड़ा था। एक कृश-काय मादा भेड़िया झाड़ी में से निकली और अपने फूले हुए पेट को घसीटती आई और अपने पिल्लों के सामने बैठ गई। उसके थन लगभग ज़मीन को छू रहे थे। पिल्ले उसके पास चन्द्राकार में खड़े थे। वह अपने सबसे छोटे पिल्ले के पास गई, अगली टांगें झुकाईं, सिर नीचा किया, जबड़े खोले, अपने पेट को कुछ देर तक जोर से हिलाया और घोड़े के मांस का बड़ा सा टुकड़ा मुंह में से बाहर निकाला। बड़े पिल्ले उसकी ओर झपटे, मगर मां ने उन्हें परे हटा दिया और सारे का सारा टुकड़ा छोटे पिल्ले को दे दिया। छोटा गर्राया, मानो क्रुद्ध हो उठा हो, टुकड़े पर झपटा और उसे दोनों पंजों में दबा, दांतों से काटने लगा। इसी तरह मां ने एक दूसरा टुकड़ा फेंका, फिर तीसरा और जब तक पांचों को भोजन नहीं मिल गया, यही क्रम जारी रहा। उसके बाद वह उनके पास लेटकर सुस्ताने लगी।

एक ही सप्ताह के अन्दर बड़ी सी खोपड़ी और जांघों की हड्डियों के सिवा ईंटों के ओसारे के पिछवाड़े में पड़ी लाश का कुछ भी नहीं बचा। एक किसान दूसरे साल गरमियों में हड्डियां बटोर रहा था। खोपड़ी और जांघ की हड्डियों को देखा तो उठाकर ले गया और अपनी ज़रूरत के मुताबिक़ उन्हें काम में लाया।

परन्तु सेर्पुख़ोव्स्कोई का मृत शरीर बहुत दिनों के बाद धरती को सौंपा गया। सेर्पुख़ोव्स्कोई शराब और स्वादिष्ट भोजन से पेट को ठूंसता रहा था। लेकिन उसकी चमड़ी, मांस और हड्डियों से किसी को कोई लाभ नहीं पहुंचा। बीस साल तक उसकी चलती-फिरती "ज़िन्दा लाश" धरती का बोझ बनी रही थी। उन लोगों के लिए भी वह बोझ ही बना, जिन पर उसे दफ़नाने की ज़िम्मेदारी आ पड़ी थी। वह किसी के काम न आ सका। लेकिन उन 'ज़िन्दा लाशों' ने, जो दूसरी लाशों को दफ़नाते हैं, इसकी मोटी, सड़ती, भद्दी और बदबूदार देह को बढ़िया वर्दी और चमचमाते बूट पहनाना ज़रूरी समझा। एक शानदार, नये ताबूत में उसे लिटाया गया। ताबूत के चारों ओर फुंदने लटक रहे थे। इस नये ताबूत को एक दूसरे, सीसे के ताबूत में रखा गया और मास्को ले जाकर उसी स्थान पर दफ़नाया गया, जहां इससे पहले कई इन्सानों की हड्डियां दबी पड़ी थीं।

इवान इल्यीच की मृत्यु

(१)

अदालत के विशाल भवन में मेलवीन्स्की वाले मक़द्दमे की सुनवाई हो रही थी। बीच में जब थोड़ी देर के लिए विश्राम की छुट्टी हुई तो न्याय परिषद के सदस्य और पब्लिक प्रोसेक्यूटर इवान येगोरोविच शेबेक के दफ़्तर में जा बैठे। क्रासोव वाले प्रसिद्ध मुक़द्दमे के बारे में बातचीत चल पड़ी। फ़्योदोर वसील्येविच यह साबित करने के लिए ख़ूब गर्म हुआ जा रहा था कि यह मुक़द्दमा अदालत के अधिकार-क्षेत्र से बाहर है, परन्तु इवान येगोरोविच अपनी बात पर अड़ा हुआ था। प्योत्र इवानोविच ने इस बहस में शुरू से ही कोई भाग न लिया था और बैठा हुआ ताज़ा अख़बार देख रहा था।

"दोस्तो!" उसने कहा, "इवान इल्यीच तो चल बसा।"

"सच?"

"लो, पढ़ लो," उसने फ़्योदोर वसील्येविच के हाथ में छापेख़ाने की गन्ध वाला ताज़ा अख़बार देते हुए कहा।

एक काले हाशिये में लिखा था: "प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना गोलोवीना अपने सम्बन्धियों तथा मित्रों को यह दुःखद समाचार देती हैं कि उनके प्रिय पति, न्यायालय के सदस्य इवान इल्यीच गोलोवीन गत ४ फ़रवरी, १८८२ को स्वर्ग सिधार गये। अन्त्येष्टि क्रिया शुक्रवार को दिन के एक बजे होगी।"

इवान इल्यीच इन्हीं सज्जनों के साथ काम करता था और सभी उसे प्यार करते थे। वह कई हफ़्तों से बीमार था और सुनने में आता था कि उसकी बीमारी का कोई इलाज नहीं। उसकी नौकरी तो सुरक्षित थी, पर अफ़वाह थी कि यदि उसका देहान्त हो गया तो उसके स्थान पर

अलेक्सेयेव और अलेक्सेयेव के स्थान पर या तो विन्निकोव या शतावेत नियुक्त किया जायेगा। इसलिए इवान इल्योच की मृत्यु की ख़बर सुनते ही पहला विचार जो दफ़्तर में बैठे प्रत्येक सज्जन के मन में आया, यह था कि इस मौत से उनकी या उनके परिचितों की नौकरी में क्या तबदीली या तरक़्क़ी हो सकती है।

फ़्योदोर वसील्येविच सोच रहा था, "अब तो ज़रूर ही मुझे शतावेत या विन्निकोव के स्थान पर लगाया जायेगा। मुद्दत से मुझे इसका वचन भी दिया जा चुका है। अगर यह नौकरी मुझे मिल गयी तो तनख़्वाह ८०० रूबल बढ़ जायेगा और इसके अलावा दफ़्तरी ख़र्च भी मिलेगा।"

प्योत्र इवानोविच सोच रहा था, "मुझे फ़ौरन अर्ज़ी दे देनी चाहिए कि मेरे साले को कालूगा से तबदील करके यहां लाया जाये। पत्नी ख़ुश हो जायेगी। फिर यह शिकायत तो न किया करेगी कि मैंने उसके परिवार के लिए कुछ नहीं किया।"

"बड़े अफ़सोस की बात है। मैं जानता था कि यह बीमारी उसे लेकर रहेगी," प्योत्र इवानोविच ने कहा।

"आख़िर उसे बीमारी क्या थी?"

"डाक्टर किसी निश्चय पर नहीं पहुंच सके। सब ने अलग अलग तशख़ीस की। आख़िरी बार जब मैं उससे मिला था, तो मुझे उसकी सेहत पहले से बेहतर लगी थी।"

"छुट्टियों के बाद मैं उसे देखने नहीं जा सका। जाने की सोचता ही रहा।"

"पैसा तो था उसके पास?"

"उसकी पत्नी के पास थोड़ा बहुत था, पर जान पड़ता है कि बहुत कम।"

"हां तो, उनके पास जाना ही पड़ेगा। रहते बहुत दूर हैं।"

"यूं कहो कि तुम्हारे यहां से दूर है। तुम्हारे यहां से तो सभी कुछ दूर है।"

"शेबेक मुझे कभी इसके लिए माफ़ नहीं करता कि मेरा घर नदी के पार है," प्योत्र इवानोविच ने शेबेक की ओर देखकर मुस्कराते हुए कहा। इसके बाद शहर के लम्बे लम्बे फ़ासलों की चर्चा होने लगी और फिर वे सब उठकर अदालत के कमरे में चले गये।

मृत्यु-समाचार के बाद तरह तरह के अनुमान तो लगाये ही गये कि किस किसको तरक्की मिलेगी और क्या क्या तबदीलियां होंगी। पर साथ ही एक सुपरिचित व्यक्ति की मौत से, जैसा कि हमेशा होता है, सभी को मन ही मन यह ख़ुशी भी हुई कि मौत उसके मित्र की हुई है, उसकी अपनी नहीं हुई।

"ज़रा ख़्याल तो करो, वह मर गया है, पर मैं वैसे का वैसा हूं," हरेक के मन में यही विचार उठ रहा था। साथ ही इवान इल्यीच के घनिष्ठ परिचित, उसके तथाकथित दोस्त, अनचाहे ही यह भी सोच रहे थे कि अब एक ऊब भरा फ़र्ज़ भी निभाना पड़ेगा—शिष्टाचार के नाते, अन्त्येष्टि क्रिया पर भी जाना पड़ेगा और विधवा के पास जाकर संवेदना भी प्रकट करनी पड़ेगी।

फ़्योदोर वसील्येविच और प्योत्र इवानोविच, इवान इल्यीच के सब से बड़े दोस्त थे।

प्योत्र इवानोविच और इवान इल्यीच दोनों कालेज में एक साथ पढ़े थे, इसके अलावा प्योत्र इवानोविच पर अपने मित्र के कई एहसान भी थे।

शाम को भोजन करते समय उसने अपनी पत्नी को इवान इल्यीच की मृत्यु की ख़बर सुनाई और कहा कि अब उम्मीद बंधती है कि तुम्हारा भाई तब्दील होकर इस हलके में आ जायेगा। इसके बाद रोज़ की तरह आराम करने के बजाय उसने अपना फ़्राक-कोट पहना और इवान इल्यीच के घर की ओर चल पड़ा।

वहां पहुंचा तो फाटक पर एक बग्घी और दो किराये की गाड़ियां खड़ी थीं। नीचे, ड्योढ़ी में, कपड़े टांगने की खूंटियों के पास, ताबूत का ढक्कन दीवार के साथ रखा था। ढक्कन फुंदियों और चमकते सुनहरे गोटे से सजा था। काले वस्त्र पहने दो स्त्रियां अपने कोट उतार रही थीं। उनमें से एक को वह जानता था। वह इवान इल्यीच की बहिन थी। दूसरी स्त्री से वह बिल्कुल परिचित नहीं था। उसी समय प्योत्र इवानोविच का एक मित्र सीढ़ियों पर से उतरता नज़र आया। उसका नाम श्वार्ज़ था। प्योत्र इवानोविच को देखते ही वह रुक गया और इस तरह आंख का इशारा किया मानो कह रहा हो, "देखा? इवान इल्यीच तो चल बसा। लेकिन हम-तुम सही-सलामत हैं।"

सदा की भांति आज भी श्वार्ज में एक विशेष बांकपन और संजीदगी थी। अंग्रेज़ी काट के गलमुच्छे, छरहरे बदन पर फ़ाक-कोट। यह संजीदगी उसकी स्वाभाविक चंचलता से बिल्कुल मेल न खाती थी, पर इस मौके पर विशेष रूप से आकर्षक लग रही थी। कम से कम प्योत्र इवानोविच को तो ऐसा ही लगा।

प्योत्र इवानोविच एक तरफ़ हटकर खड़ा हो गया, ताकि स्त्रियां पहले जा सकें और फिर उनके पीछे पीछे सीढ़ियां चढ़ने लगा। श्वार्ज वहीं खड़ा हुआ उसका इन्तज़ार कर रहा था। प्योत्र इवानोविच इसका अर्थ समझ गया: वह ज़रूर यह फ़ैसला करने के लिए रुक गया है कि आज शाम को कहां बैठकर ताश खेला जाये। स्त्रियां विधवा से मिलने अन्दर चली गयीं। श्वार्ज के होंठ गंभीरता से भिंचे हुए थे और आंखों में चंचलता खेल रही थी। उसने अपनी भौंहों के इशारे से प्योत्र इवानोविच को समझा दिया कि शव कहां पर है। जैसा कि ऐसे मौक़ों पर हुआ करता है, प्योत्र इवानोविच अन्दर जाते वक़्त समझ नहीं पा रहा था कि उसे क्या करना होगा। वह जानता था कि ऐसे मौक़ों पर छाती पर क्रास का चिन्ह बनाया जाता है। उसे यह पक्का मालूम नहीं था कि सिर भी झुकाना चाहिए या नहीं। इसलिए उसने बीच का रास्ता अपनाया। कमरे में प्रवेश करते ही उसने क्रास का चिन्ह बनाया और ज़रा सा सिर भी झुका दिया। इस दौरान उसने, जहां तक बन पड़ा, कमरे में चारों ओर नज़र भी दौड़ाई। दो युवक, जो शायद इवान इल्यीच के भतीजे थे और जिनमें से एक विद्यार्थी था, बाहर जाने से पहले क्रास का चिन्ह बना रहे थे। एक बुढ़िया बिल्कुल चुपचाप, मूर्तिवत् खड़ी थी। उसके पास एक दूसरी स्त्री, अनोखे ढंग से भौंहें चढ़ाये उसके कानों में कुछ फुसफुसा रही थी। फ़ाक-कोट पहने, एक दृढ़ संकल्पी और उत्साही पादरी ऊंचे स्वर में पाठ किये जा रहा था। उसके लहजे से ज़ाहिर होता था कि वह किसी का भी विरोध बरदाश्त नहीं करेगा। भण्डारे का सेवक गेरासिम दबे पांव फ़र्श पर कुछ छिड़कते हुए प्योत्र इवानोविच के सामने से गुज़रा। उसे देखते ही फ़ौरन प्योत्र इवानोविच को भास हुआ जैसे देह सड़ने की हल्की हल्की बू आ रही हो। आख़िरी बार जब वह इवान इल्यीच से मिलने आया था तो इस आदमी को उसने उसके कमरे में देखा था। वह उसका टहलुआ था और उसे बहुत अच्छा लगता था। प्योत्र इवानोविच बार बार क्रास का चिन्ह बनाता और ताबूत, पादरी

श्रौर कोने में मेज़ पर रखी देव-प्रतिमाओं की दिशा में बार बार थोड़ा थोड़ा सिर भी झुका लेता। कुछ देर बाद जब उसे ऐसा लगा कि वह ज़रूरत से ज्यादा क्रास के चिन्ह बना चुका है, तो वह रुककर मृत व्यक्ति के चेहरे को एकटक देखने लगा।

सभी मृतकों की तरह यह भी ताबूत में रखे तकियों के बीच धंसा हुश्रा बड़ा बोझल लग रहा था। अवयव अकड़े हुए थे, सिर जैसे स्थायी तौर पर आगे की श्रोर झुका हुआ था, माथा पीले मोम का बना जान पड़ता था, धंसी हुई कनपटियां चमक रही थीं, आगे को निकली हुई नाक ऊपर वाले होंठ को दबाती-सी जान पड़ती थी। इवान इल्यीच में बड़ा परिवर्तन आ गया था। आख़िरी बार जब प्योत्र इवानोविच उससे मिला था तो वह इतना दुबला नहीं लग रहा था। फिर भी सभी मृत व्यक्तियों की तरह उसका चेहरा अधिक सुन्दर, या यों कहें अधिक महत्वपूर्ण लगने लगा था। ऐसा वह जीवन में कभी न लगा था। चेहरे पर ऐसा भाव जान पड़ता था मानो इवान इल्यीच कह रहा हो: जो कुछ मुझे करना था, मैं कर चुका और जो कुछ किया, अच्छा ही किया। इसके अतिरिक्त ऐसा जान पड़ता था मानो वह जीवित लोगों की भर्त्सना कर रहा हो या उन्हें चेतावनी दे रहा हो। प्योत्र इवानोविच को चेतावनी का भाव असंगत सा लग रहा था। कम से कम अपने साथ तो उसे इसका कोई सम्बन्ध नहीं जान पड़ता था। वह बेचैनी सी महसूस करने लगा और इसलिए उसने बहुत जल्दी से छाती पर क्रास का चिन्ह बनाया श्रौर कमरे से बाहर निकल आया। उसे स्वयं भी अपनी जल्दबाज़ी बड़ी अशिष्ट लग रही थी। साथ वाले कमरे में पहुंचकर उसने देखा कि श्वार्ज़ उसका इन्तज़ार कर रहा है। वह टांगें चौड़ी किये खड़ा था और टोप हाथ में लिए हुए था। पीठ के पीछे उसके दोनों हाथ टोप से खिलवाड़ कर रहे थे। इस चुस्त, बांके, बने-संवरे आदमी को एक नज़र देखते ही प्योत्र इवानोविच में फिर से ताज़गी लौट आई। प्योत्र इवानोविच ने समझ लिया कि श्वार्ज़ इन सब बातों से ऊपर है और अपने को कभी भी उदास नहीं होने देता। उसकी सारी भाव-भंगिमा यह कहती जान पड़ती थी कि इवान इल्यीच का अन्त्येष्टि संस्कार इतनी बड़ी घटना नहीं है कि उसके लिए हम अपनी रोज़ की बैठक स्थगित कर दें। आज भी शाम को नियमानुसार बैठक जमेगी, ताश की नयी गड्डी खोली जायेगी और उस समय कमरे में चोबदार चार मोमबत्तियां रखेगा।

इसलिए यह समझने का कोई कारण नहीं कि इस बात को लेकर हम आज शाम को अपना मनबहलाव छोड़ दें। कमरे में से निकलते समय श्वार्ज़ ने प्योत्र इवानोविच के कान मे यह बात सचमुच कही और यह प्रस्ताव भी रखा कि फ्योदोर वसील्येविच के यहां मिलेंगे और ताश खेलेंगे। पर प्योत्र इवानोविच के भाग्य मे उस शाम को ताश खेलना नहीं बदा था। प्रस्कोव्या फ्योदोरोव्ना ठीक उसी समय अपने एकान्त कक्ष से कुछ और स्त्रियों के साथ निकली। वह नाटे कद की मोटी औरत थी, कन्धे संकरे और नीचे का हिस्सा उनसे ज्यादा चौड़ा था, हालांकि उसने इसका उल्टा परिणाम पाने की भरसक कोशिश की होगी। वह काले कपड़े पहने थी और सिर पर जालीदार रूमाल बांधे थी। उसकी त्योरियां ताबूत के पास खड़ी स्त्री की त्योरियों की तरह अनोखे ढंग से चढ़ी हुई थीं। वह साथ की स्त्रियों को शववाले कमरे के दरवाजे तक ले आयी और बोली : "कृपया अन्दर चलिए, मृतक के लिए प्रार्थना की जायेगी।"

श्वार्ज़ हल्के से झुककर वहीं रुक गया। निमन्त्रण को उसने न तो स्वीकार किया और न ही ठुकराया। परन्तु प्योत्र इवानोविच पर नज़र पड़ते ही प्रस्कोव्या फ्योदोरोव्ना ने उसे पहचान लिया, आह भरते हुए सीधे उसके पास चली आयी और उसका हाथ पकड़कर बोली, "आप तो इवान इल्यीच के सच्चे दोस्त थे... मैं जानती हूं।" यह कहकर वह उसकी ओर इस आशा से देखने लगी कि वह इसका कोई उचित जवाब देगा। और जिस भांति प्योत्र इवानोविच जानता था कि अन्दर कमरे में उसे छाती पर *क्रास का चिन्ह बनाना था, उसी तरह वह यह भी समझता था* कि इस मौके पर उसे उसका हाथ अपने हाथ में लेकर दबाना है और ठण्डी सांस भरकर कहना है कि "मैं आपको यकीन दिलाता हूं..." ऐसा ही उसने किया भी, और कर चुकने के बाद देखा कि इसका वांछित असर भी हुआ है। उसका दिल भर आया, और उसी तरह महिला का भी।

"प्रार्थना शुरू होने से पहले मझे आपसे कुछ कहना है," विधवा ने कहा, "आप अन्दर चलिए। मुझे अपने बाज़ू का सहारा दीजिये।"

प्योत्र इवानोविच ने उसे अपने बाज़ू का सहारा दिया और दोनों अन्दर वाले कमरों की ओर चले गये। जब वे श्वार्ज़ के पास से गुज़रे तो श्वार्ज़ ने प्योत्र इवानोविच को आखों से इशारा किया, मानो अपनी निराशा जता रहा हो : "लो, खेल लो अब ताश! बुरा नहीं मानना यदि अब

हम तुम्हारी जगह किसी दूसरे आदमी को ढूंढ़ लें। जब यहां से छुट्टी मिले तो बेशक चले आना, खेल में पांचवें की जगह पर बैठ जाना।"

प्योत्र इवानोविच ने और भी गहरी और शोकपूर्ण आह भरी, जिस पर प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना ने कृतज्ञता से उसकी उंगलियों को दबाया। बैठक में पहुंचकर दोनों एक मेज़ के पास जा बैठे। कमरे की दीवारों पर गुलाबी रंग का छींटदार कपड़ा लगा था और एक मद्धिम सा लैम्प जल रहा था। विधवा सोफ़े पर बैठ गयी और प्योत्र इवानोविच एक स्टूल पर, जिस पर स्प्रिंगदार गद्दा लगा था। गद्दे के स्प्रिंग टूटे हुए थे, इसलिए जब वह उस पर बैठा तो गद्दा एक तरफ़ को झुक गया। प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना चाहती तो थी कि उसे पहले से सावधान कर दे और वहां बैठने से रोक दे पर स्थिति को देखते हुए उसने कहना मुनासिब नहीं समझा। स्टूल पर बैठते हुए प्योत्र इवानोविच को याद आया कि जब इवान इल्यीच इस बैठक को सजा रहा था तो उसने इसकी राय पूछी थी कि हरे फूलों वाली गुलाबी छींट का कपड़ा लगाना चाहिए या कोई और। स्वयं बैठने के लिए सोफ़े की ओर जाते हुए विधवा जब मेज़ के पास से गुज़री तो उसका जालीदार रूमाल मेज के साथ अटक गया (बैठक मेज़-कुर्सियों और तरह तरह के सामान से ठसाठस भरी थी)। उसे छुड़ाने के लिए प्योत्र इवानोविच अपनी जगह से तनिक उठा। स्प्रिंगों पर से बोझ हटते ही उसे धचका लगा। विधवा स्वयं ही जाली छुड़ाने लगी और प्योत्र इवानोविच विद्रोही स्प्रिंगों को दबाते हुए एक बार फिर बैठ गया। पर अभी विधवा अपनी जाली पूरी तरह छुड़ा नहीं पाई थी, इसलिए प्योत्र इवानोविच फिर एक बार थोड़ा सा उठा, जिस पर फिर स्प्रिंग उछले और उसे झटका लगा। जब जाली छूट गयी तो विधवा ने एक सफ़ेद रेशमी रूमाल निकाला और रोने लगी। जाली छुड़ाने की घटना से और स्टूल के स्प्रिंगों से जूझने के कारण प्योत्र इवानोविच का उत्साह ठण्डा पड़ चुका था, इसलिए वह केवल नाक-भौंह सिकोड़े बैठा रहा। पर जब इवान इल्यीच के नौकर सोकोलोव ने अन्दर प्रवेश किया और ख़बर दी कि क़ब्रिस्तान में जो स्थान प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना ने चुना है उसके लिए दो सौ रूबल देने होंगे तो स्थिति का तनाव कुछ ढीला पड़ा। उसने रोना बन्द कर दिया और प्योत्र इवानोविच की ओर शहीदों की सी नज़र से देखा। फिर फ़्रांसीसी भाषा में कहने लगी कि उसे अनगिनत कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। प्योत्र इवानोविच ने मुंह से कुछ

न कहकर ऐसा संकेत किया, जिसका निश्चित रूप से यह मतलब था कि सो तो है ही।

"आप सिगरेट पीना चाहते हैं, तो पियें," उसने दुःखी किन्तु उदार स्वर में कहा और घूमकर सोकोलोव के साथ क़ब्र की लागत के बारे में बात करने लगी। प्योत्र इवानोविच ने सिगरेट सुलगा ली। उसने देखा कि विधवा बड़ी तफ़सील से पूछ रही है कि क़ब्र के लिए कहां कहां स्थान मिल सकता है और क्या क्या दूसरी लागत आयेगी। जो जगह उसने चुनी उससे उसकी व्यवहार-कुशलता का बोध हो रहा था। जब स्थान का फ़ैसला हो गया तो उसने भाड़े पर लाये जाने वाले भजनीकों के बारे में भी बात तय की। इसके बाद सोकोलोव बाहर चला गया।

"मुझे हरेक बात का ख़ुद ध्यान रखना पड़ता है," वह बोली और मेज़ पर पड़े अलबमों को एक तरफ़ हटा दिया। फिर प्योत्र इवानोविच की *सिगरेट पर नज़र पड़ते ही वह झट से उठी और एक राखदानी ले आयी।* उसे डर था कि राख मेज़ पर न पड़ जाये। "अगर मैं कहूं कि अपने दुःख के कारण मैं अपने व्यावहारिक कामों की ओर ध्यान नहीं दे सकती, तो यह तो महज़ ढोंग होगा। यदि कोई चीज़ मुझे... सान्त्वना दे सकती है, कम से कम मेरा ध्यान दूसरी तरफ़ हटा सकती है तो यही कि उसकी ख़ातिर मैं यह सब काम कर रही हूं।" उसने फिर रूमाल निकाल लिया, मानो रोना चाहती हो, और फिर मानो कोशिश करके उसने अपने को क़ाबू में कर लिया और हल्के से सिर झटककर बड़ी स्थिरता से बातें करने लगी।

"एक मामले में मुझे आपसे सलाह लेनी है।"

प्योत्र इवानोविच धीरे से झुका, पर बड़ी सावधानी के साथ ताकि स्प्रिंग फिर ऊधम न मचाने लगें।

"पिछले कुछ दिन उन्होंने बड़ी तकलीफ़ में काटे।"

"बड़ी तकलीफ रही क्या?" प्योत्र इवानोविच ने पूछा।

"बहुत ही। सारा वक़्त दर्द से कराहते रहते थे। पूरे तीन दिन तक एक मिनट के लिए भी उन्हें चैन नहीं मिला। मैं बयान नहीं कर सकती, मैं हैरान हूं कि मैं यह सब बर्दाश्त कैसे कर पाई, तीन कमरे दूर तक उनकी आवाज़ सुनाई देती थी। आप अन्दाज़ नहीं लगा सकते कि मुझपर क्या गुज़री।"

"तो क्या वह अन्त तक होश में रहा?" प्योत्र इवानोविच ने पूछा।

"हां," वह धीमे से फुसफुसाई, "आख़िरी घड़ी तक। मरने से केवल पन्द्रह मिनट पहले उन्होने हमसे विदा ली और कहा कि वोलोद्या को सामने से ले जाओ।"

प्योत्र इवानोविच को यह बात जरूर खटक रही थी कि दोनों पाखंड रच रहे हैं: फिर भी यह जानकर उसे बड़ा दुःख हुआ कि उस आदमी को इतना कष्ट भोगना पड़ा, जिसे वह इतनी घनिष्ठता से जानता था, पहले एक चंचल और लापरवाह विद्यार्थी के नाते, फिर एक प्रौढ़ व्यक्ति के नाते और बाद में सहकारी के नाते। उसकी आंखों के सामने फिर इवान इल्यीच का शव घूम गया—वही माथा, वही ऊपर वाले होंठ को दबाती हुई नाक। उसे अपने बारे में भय होने लगा।

"तीन दिन की घोर यन्त्रणा और उसके बाद मौत। ऐसा तो किसी भी वक़्त मेरे साथ भी हो सकता है!" उसने सोचा और क्षण भर के लिए उसे भय ने जकड़ लिया। फिर सहसा—और इसका कारण वह स्वयं नहीं जानता था—इस विचार ने उसे फिर ढाढ़स बंधाया कि मौत तो इवान इल्यीच की हुई है, उसकी तो नहीं हुई। उसकी तो मौत हो भी नहीं सकती, न ही होनी चाहिए। ऐसी चिन्ताओं से तो केवल मन उदास हो उठता है और ऐसा कभी नहीं होने देना चाहिए। श्वार्त्स के चेहरे से ही यह बात बड़ी सजीवता से प्रकट हो रही थी। इस प्रकार के तर्क से उसका मन फिर शान्त हो गया, यहां तक कि इवान इल्यीच की मृत्यु किन हालात में हुई इसकी तफ़सील उसने सचमुच ध्यान से सुनी, मानो मृत्यु एक ऐसी दुर्घटना हो, जो केवल इवान इल्यीच के साथ ही हो सकती थी—उसके साथ कभी नहीं।

इवान इल्यीच को कैसी घोर शारीरिक यन्त्रणा भोगनी पड़ी (प्योत्र इवानोविच को इवान इल्यीच की यन्त्रणा का पता केवल इसी चीज़ से लगा कि प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना पर उसका असर कैसा हुआ था), इसका पूरा ब्योरा देने के बाद ही विधवा काम की बात पर आई।

"उफ़, प्योत्र इवानोविच, क्या बीत रही है मेरे दिल पर, क्या बीत रही है, कैसी भारी बीत रही है!" और वह फिर रोने लगी।

प्योत्र इवानोविच ने फिर ठण्डी सांस ली और इन्तज़ार करने लगा कि विधवा नाक साफ़ कर ले। जब विधवा ने नाक साफ़ कर ली तो वह

बोला, "मैं आपको यकीन दिलाता हूं..." वह फिर बात करने लगी और तब उसने वह चर्चा छेड़ी, जिसके बारे में वह इससे परामर्श करना चाहती थी। उसने पूछा कि अपने पति की मृत्यु के सम्बन्ध में वह किस भांति सरकार से अनुदान प्राप्त कर सकती है। उसने ज़ाहिर तो यह किया कि वह उससे पेंशन के बारे में सलाह ले रही है, पर वह देख रहा था कि वास्तव में उस स्त्री को ऐसी ऐसी बातें मालूम हैं, जिन्हें वह ख़ुद भी नहीं जानता था। वह मामूली से मामूली तफ़सील तक जानती थी। उसे पूरी तरह मालूम था कि इस मृत्यु के कारण उसे कितनी रकम मिल सकती है। पर वह इस समय यह जानना चाहती थी कि कोई ऐसा भी तरीक़ा हो सकता है, जिससे यह रक़म बढ़ाई जा सके। प्योत्र इवानोविच सोचता रहा कि यह कैसे किया जा सकता है। कुछ देर तक विचार करने के बाद, अपनी संवेदना दिखाने के लिए उसने सरकार को कृपण कहकर कोसा और फिर सिर हिलाकर कहा कि इससे अधिक रक़म पाने का कोई रास्ता नहीं। इस पर उस स्त्री ने गहरी सांस ली। ऐसा जान पड़ा जैसे वह सोचने लगी है कि अब इस भेंट को कैसे समाप्त किया जाये। वह भांप गया, उसने सिगरेट बुझा दी, उठा और हाथ मिलाकर बाहर हॉल में चला आया।

खाने वाले कमरे में दीवार पर घड़ी टंगी थी। इसे इवान इल्योच ने बड़ी ख़ुशी ख़ुशी ख़रीदकर अपने संग्रह में जोड़ा था। यहां प्योत्र इवानोविच की भेंट पादरी और कुछेक अन्य परिचित व्यक्तियों से हुई, जो अन्त्येष्टि संस्कार के लिए आये थे। यहीं पर उसने इवान इल्योच की सुन्दर बेटी को भी देखा। वह भी सिर से पैर तक काले कपड़े पहने थी, जिससे उसकी पतली कमर और भी पतली नज़र आती थी। उसके चेहरे पर विषाद, संकल्प और लगभग क्रोध का सा भाव था। वह प्योत्र इवानोविच के सामने इस तरह झुकी मानो प्योत्र इवानोविच ने कोई अपराध किया हो। उसके पीछे एक युवक खड़ा था, जो उतना ही असन्तुष्ट नज़र आता था जितनी कि यह लड़की। प्योत्र इवानोविच उसे जानता था। वह एक अमीरज़ादा था, जांच-मैजिस्ट्रेट था, और लोग कहते थे कि वह इस लड़की का मंगेतर है। जवाब में प्योत्र इवानोविच भी उदासीन मन से झुका, और लौटकर शव वाले कमरे में जाना ही चाहता था, जब उसने देखा कि इवान इल्योच का बेटा, जो जिम्नेज़ियम का विद्यार्थी था और शक्ल-सूरत में अपने

बाप से बहुत मिलता था, सीढ़ियां उतरकर नीचे आ रहा है। प्योत्र इवानोविच को याद आया कि जब इसका पिता क़ानून का विद्यार्थी था तो उसकी शक्ल-सूरत भी हू-ब-हू ऐसी ही थी। बहुत रोने के कारण उसकी आंखें लाल हो गयी थीं और तेरह-चौदह बरस के बिगड़े हुए लड़कों की सी लगती थीं। प्योत्र इवानोविच को देखते ही वह लजीले ढंग से भौंहें चढ़ाये उसे घूरने लगा। प्योत्र इवानोविच ने उसकी ओर सिर हिलाया और शव वाले कमरे में चला गया। प्रार्थना शुरू हुई। मोमबत्तियां, रोना-धोना, धूप-दीप, आंसू, सिसकियां। प्योत्र इवानोविच तनी भौंहों से अपने सामने खड़े लोगों के पैरों की ओर एकटक देखता रहा। उसने एक बार भी आंख उठाकर मृत देह की ओर या ऐसी किसी चीज़ की ओर नहीं देखा, जिससे उसका मन उदास हो उठे। वह कमरे में से भी सब से पहले निकल गया। ड्योढ़ी में उस वक़्त कोई नहीं था। भण्डारे का नौकर गेरासिम भागकर नीचे आया और कपड़ों के अम्बार में से अपने मज़बूत हाथों से प्योत्र इवानोविच का कोट ढूंढ़कर निकाला और उसे पहनाने लगा।

"कहो गेरासिम, तुम्हें तो ज़रूर बहुत दुःख हुआ होगा?" कुछ कहने के ख़्याल से प्योत्र इवानोविच बोला।

"भगवान की मर्ज़ी, हुज़ूर। हम सबको एक न एक दिन चले जाना है," गेरासिम ने अपनी बत्तीसी दिखाते हुए जवाब दिया। उसके दांत सफ़ेद और किसानों के दांतों की तरह मज़बूत थे। फिर बड़े व्यस्त आदमी की तरह उसने दरवाज़ा खोला, चिल्लाकर कोचवान को बुलाया, प्योत्र इवानोविच को गाड़ी में बिठाया और कूदकर फिर सीढ़ियों पर आ गया, मानों जल्दी से जल्दी कोई दूसरा काम करना चाहता हो।

धूप-दीप, मृत देह तथा कार्बालिक एसिड की गन्ध के बाद प्योत्र इवानोविच को बाहर आकर ताज़ी हवा में सांस लेना बहुत ही अच्छा लगा।

"कहां चलें?" कोचवान ने पूछा।

"अभी तो कोई ख़ास देर नहीं हुई। थोड़ी देर के लिए मैं फ़्योदोर वसील्येविच के घर रुकूंगा।"

और उसी ओर वह चल दिया। वहां अभी उन्होंने पहली बाज़ी ही समाप्त की थी, इसलिए अगली बाज़ी में वह बड़े आराम से पांचवें आदमी के स्थान पर जा बैठा।

इवान इल्यीच के जीवन की कहानी बहुत ही सरल और साधारण और बहुत ही भयंकर है।

इवान इल्यीच की मृत्यु ४५ वर्ष की अवस्था में हुई। वह न्याय परिषद का सदस्य था। वह एक ऐसे सरकारी अधिकारी का बेटा था, जिसने भिन्न भिन्न मन्त्रालयों तथा महकमों में काम करने के बाद अपने लिए एक अच्छा स्थान बना लिया था। इस ढंग के आदमी आख़िर ऐसे पद पर पहुंच जाते हैं, जहां से उन्हें कोई हटा नहीं सकता, हालांकि यह बिल्कुल स्पष्ट होता है कि उनसे किसी भी महत्वपूर्ण काम को पूरा करने की आशा नहीं की जा सकती। नौकरी की लम्बी अवधी और ऊंचे पद के कारण उन्हें निकाला नहीं जा सकता। जिन पदों पर वे टिके रहते हैं वे केवल नाम के पद होते हैं, मगर जो तनख़्वाह उन्हें मिलती है वह नाम मात्र नहीं होती। वे बुढ़ापे तक छः से दस हज़ार रूबल सालाना तक पाते रहते हैं।

ऐसा ही था प्रिवी कौंसलर इल्या येफ़ीमोविच गोलोवीन, बहुत सी अनावश्यक संस्थाओं का अनावश्यक सदस्य।

उसके तीन बेटे थे, जिनमें इवान इल्यीच दूसरा था। सबसे बड़े लड़के ने अपने बाप की ही तरह उन्नति की थी, हां, वह किसी दूसरे मन्त्रालय में काम करता था। शीघ्र ही उसकी भी नौकरी की अवधि उस सीमा तक जा पहुंचेगी, जब अपने आप ही तनख़ाह मिलती है। तीसरे बेटे का कुछ नहीं बन पाया। उसने भिन्न भिन्न पदों पर कई जगह काम किया, कहीं सफलता नहीं पाई और अब वह रेल के महकमे में कहीं काम कर रहा था। उसका पिता और उसके भाई, विशेषकर उनकी पत्नियां, उससे मिलने-जुलने से कतराते थे और यथासम्भव उसके अस्तित्व को ही भुलाये रहते थे। उसकी बहिन की शादी बैरन ग्रेफ के साथ हुई थी, जो अपने ससुर की ही तरह सेंट पीटर्सबर्ग में एक ऊंचा सरकारी अफ़सर था। इवान इल्यीच को लोग *le phenix de la famille** कहा करते थे। वह अपने बड़े भाई की तरह रूखा और नपा-तुला नहीं था, न ही अपने छोटे

*परिवार का गौरव (फ्रेंच)।

भाई की तरह लापरवाह् था। यह इन दोनों के बीच में था – चतुर, सजीव, आकर्षक और ढंग का व्यक्ति। वह और उसका छोटा भाई, दोनों क़ानून के कालेज में पढ़े थे। छोटा अपना कोर्स समाप्त नहीं कर पाया, पांचवें वर्ष तक पहुंचने से पहले ही उसे विद्यालय से निकाल दिया गया। इवान इल्यीच ने बड़े अच्छे नम्बर पाकर कोर्स समाप्त किया। जिन दिनों वह क़ानून का विद्यार्थी था तब भी उसका चरित्र वैसा ही था जैसा कि बाद में सारी उम्र रहा: योग्य, प्रसन्नचित्त, मिलनसार, नम्र-स्वभाव और कर्त्तव्य-निष्ठ। वह हर उस बात को अपना कर्त्तव्य समझता था, जिसे ऊंचे पदाधिकारी कर्तव्य समझते हैं। जीहुज़ूरी उसने कभी किसी की नहीं की थी, न तो बचपन में और न बाद में ही, जब वह बड़ी उम्र का हो गया था। पर छोटी उम्र से ही वह अपने से ऊंचे पद वालों की ओर उसी तरह खिंचता रहा था, जिस तरह पतंगा दीप-शिखा की ओर खिंचता है। उसने उन्हीं का रहन-सहन और उन्हीं के विचार अपना रखे थे और उन्हीं के साथ उठता-बैठता था। बचपन और जवानी के सब जोश ठण्डे पड़ गये, उनका नाम-निशान तक बाक़ी न रहा था। किसी ज़माने में उसमें कुछ झूठा अभिमान और वासना रही थी और कालेज के अन्तिम सालों में वह कुछ देर के लिए उदारवादी भी रह चुका था। पर इन सभी बातों में उसने अपनी सहजबुद्धि के सहारे औचित्य की सीमा का उल्लंघन नहीं किया था।

पढ़ाई के ज़माने में उसने ऐसे ऐसे काम किये थे, जो उस समय उसे अत्यन्त घृणित लगे थे और उसे अपने से नफ़रत होने लगी थी। पर बाद में जब उसने देखा कि वही काम बड़े बड़े आदमी बिना किसी दुविधा के कर रहे हैं, तो उसे वे सब भूल गये। उन्हें अच्छा तो वह अब भी न समझता था, पर उन्हें याद करके उसे पछतावा भी नहीं होता था।

इवान इल्यीच ने क़ानून की पढ़ाई समाप्त की तो उसके पिता ने उसे अपने लिए आवश्यक सामान ख़रीदने के लिए पैसे दिये। इनसे उसने शार्मर की दूकान से कुछ नये सूट बनवाये, घड़ी की चेन में एक बिल्ला लटका लिया, जिस पर respice finem* खुदा था, विद्यालय के अध्यक्ष से विदा ली, बड़ी शान से अपने दोस्तों के साथ डानन होटल में खाना खाया और उसके बाद नई तरज़ का नया बैग, नये फ़ैशन के कपड़े और

*अन्त को पहले से भांपो (लैटिन)।

शेव तथा नहाने-धोने का सामान सबसे बढ़िया दुकानों से ख़रीदा। फिर वह एक प्रान्तीय नगर की ओर रवाना हो गया, जहां उसके पिता ने उसे गवर्नर के दफ़्तर में विशेष सेक्रेटरी के पद पर नियुक्त करवा दिया था।

अपने विद्यार्थी जीवन की भांति प्रान्तीय नगर में भी जल्दी ही इवान इल्यीच ने अपना जीवन आरामदेह और सुखी बना लिया। वह अपना काम करता, अपनी तरक़्क़ी का भी ख़्याल रखता और साथ ही शिष्ट रुचि के अनुरूप आमोद-प्रमोद का भी रस लेता। कभी कभी वह ज़िले में अपने चीफ़ द्वारा दिये गये काम के सिलसिले में दौरे पर जाता, जहां अपने से नीचे और ऊपर वाले दोनों प्रकार के अधिकारियों के सामने आत्मसम्मान के साथ पेश आता था। अपना काम ईमानदारी से करता, जिससे उसे सच्चे गर्व की अनुभूति होती। यहां उसका काम "पुराने धर्म" के सम्प्रदाय वालों से निबटना होता था।

सरकारी काम के सम्बन्ध में अपनी तरुणावस्था और आमोदप्रियता के बावजूद वह बेहद गुप-चुप और औपचारिक रहता, यहां तक कि कठोर भी हो जाता। पर दोस्तों के बीच वह हंसमुख और हाजिरजवाब होता और मेल-मिलाप से रहता। उसका चीफ़ और चीफ़ की पत्नी, जिनके घर वह अक्सर आया जाया करता था, उसे bon enfant* कहा करते थे।

यहां उसका एक स्त्री के साथ सम्बन्ध भी हो गया। यह उन स्त्रियों में से थी, जो इस बांके युवा वकील पर फ़िदा हो गयी थीं। इसके अलावा एक दूसरी स्त्री भी थी, जो स्त्रियों की टोपियां बनाने का काम करती थी। जो अफ़सर लोग शहर में आते उनके साथ पीने-पिलाने की पार्टियां भी होतीं, और रात के भोजन के बाद दूर की एक गली में कोठों पर भी आना-जाना होता। अपने चीफ़ और अपने चीफ़ की पत्नी को ख़ुश करने के लिए डालियां भी पहुंचाई जातीं। पर यह सब काम शिष्टता के इतने ऊंचे स्तर पर किये जाते कि इन्हें किसी बुरे नाम से नहीं पुकारा जा सकता था। फ़्रांसीसी कहावत के अनुसार il faut que jeunesse se passe* सब माफ़ था। जो कुछ भी किया जाता, साफ़-सुथरे हाथों से, साफ़-सुथरे कपड़े पहनकर, फ़्रांसीसी भाषा बोलकर और सबसे बड़ी बात यह कि ऊंची

---

*भला आदमी (फ़्रेंच)।

**जवानी कुछ दीवानी होनी चाहिये (फ़्रेंच)।

सोसाइटी में किया जाता, जिसका अर्थ है कि इसमें ऊंचे पदाधिकारियों की अनुमति होती।

इस तरह पांच साल तक इवान इल्यीच काम करता रहा। तभी क़ानून में कुछ तबदीली हुई। नई अदालतें बनाई गयीं और उनके लिए नये अधिकारियों की ज़रूरत पड़ी।

इन नये अधिकारियों में इवान इल्यीच भी था।

उसके सामने जांच-मैजिस्ट्रेट की नौकरी का प्रस्ताव रखा गया और वह उसने मंज़ूर कर लिया, हालांकि इससे उसे दूसरे इलाके में जाना पड़ता था, अपने मौजूदा सम्बन्ध तोड़ने और वहां जाकर नये सम्बन्ध बनाने पड़ते थे। इवान इल्यीच को विदाई पार्टी दी गयी, उसके दोस्तों ने उसके साथ मिलकर फ़ोटो खिंचवाया, जाते वक़्त उन्होंने उसे चांदी का सिगरेट-केस भेंट किया। इस तरह वह अपने नये काम पर रवाना हुआ।

जांच-मैजिस्ट्रेट के पद पर भी इवान इल्यीच उतना ही comme il faut* था, उतने ही सलीके से रहा और उतनी ही योग्यता से उसने सरकारी और निजी कामों को अलग अलग रखा और उसी तरह सबके आदर का पात्र बना, जिस तरह उन दिनों, जब वह गवर्नर के विशेष सेक्रेटरी का काम किया करता था। पहली नौकरी की तुलना में उसे मैजिस्ट्रेट का काम बहुत अधिक रोचक और प्रिय लगा। इसमें शक नहीं कि पहली नौकरी का भी अपना मज़ा था। जब शार्मर की दूकान की बनी चुस्त वर्दी पहने वह वेटिंग-रूम में बैठे, ईर्ष्याभरी नज़रों से उसे देखनेवाले मुवक्किलों और अदालत के क्लर्कों के सामने से बड़े रोब से चलता हुआ अपने चीफ़ के दफ़्तर में जाकर उसके साथ चाय पीता और सिगरेट के कश लगाता, तो उसके दिल में अजीब गुदगुदी होती। पर वहां वह जिन लोगों का भाग्य-विधाता हो सकता था, उनकी संख्या बहुत कम थी। केवल ज़िले का पुलिस-कप्तान और "पुराने धर्म" के समर्थक, जिनके साथ सरकारी काम के सिलसिले में उसे वास्ता पड़ता था। पर इनके साथ वह सज्जनता का, यहां तक कि दोस्तों का सा व्यवहार करता, उन्हें यह महसूस कराता कि यों तो तुम मेरी मुट्ठी में बन्द हो, फिर भी मेरा व्यवहार तुम्हारे साथ कितना मैत्रीपूर्ण और विनम्र है। इससे उसे अतीव सुख मिलता। पर उस

---

* यथोचित (फ़्रेंच)।

जितना कि पहले शहर में रहा था। गवर्नर का विरोध करनेवाला दल बड़ा मिलनसार और दिलचस्प साबित हुआ। उसकी तनख़्वाह पहले से ज्यादा थी, उसने ह्विस्ट खेलना सीख लिया, जिससे उसके जीवन में एक और दिलचस्पी शामिल हो गयी। सामान्यतया वह बड़े उत्साह से ताश खेलता, बड़ी चतुर और बारीक चालें भी चल जाता, जिससे अक्सर उसकी जीत होती।

इस शहर में दो वर्ष बिताने के बाद अपनी भावी पत्नी से उसकी भेंट हुई। जिन लोगों में उसका बैठना-उठना था, उनमें प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना मिख़ेल ही सबसे चतुर, कुशाग्र-बुद्धि और आकर्षक युवती थी। इस तरह जांच-मैजिस्ट्रेट के उत्तरदायित्व निभाते हुए उसे ख़ाली वक़्त में मनबहलाव तथा आमोद-प्रमोद का एक और साधन मिल गया। इवान इल्यीच ने प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना के साथ हल्की हल्की चुहलबाजी शुरू कर दी।

जिन दिनों इवान इल्यीच विशेष सेक्रेटरी हुआ करता था उन दिनों वह नियमित रूप से नाचों में शरीक होता था, पर जांच-मैजिस्ट्रेट बन जाने पर वह केवल कभी कभी नाचता। और जब नाचता भी तो यह दिखाने के लिए कि नये ज़ाब्ता-क़ानून का परिचालक और पांचवीं श्रेणी का ऊंचा वकील होने के बावजूद वह नाचने के क्षेत्र में भी सामान्य लोगों से ऊपर है। इस तरह कभी कभी, शाम की पार्टी के अंत में वह प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना के साथ नाचता। इन्हीं नाचों में उसने उसका दिल जीत लिया। वह उससे प्रेम करने लगी। इवान इल्यीच का शादी करने का कोई इरादा न था, पर जब यह लड़की उससे प्रेम करने लगी तो उसके मन में विचार उठा: "मैं शादी ही क्यों न कर लूं?"

प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना अच्छे कुलीन घर की लड़की थी, ख़ूबसूरत थी और पास में कुछ पैसा भी था। इवान इल्यीच को इससे अच्छी पत्नी मिल सकती थी, पर यह भी बुरी नहीं थी। इवान इल्यीच को अच्छी तनख़ाह मिलती थी। उधर उस स्त्री की अपनी आय थी, जो इवान इल्यीच का ख़्याल था उसकी अपनी तनख़ाह के बराबर ही होगी। इस तरह उसे अच्छी ससुराल मिल जाएगी। लड़की प्यारी, सुन्दर और सुशील थी। यह कहना कि इवान इल्यीच ने उसके साथ इसलिए शादी की कि उसे उससे प्रेम हो गया था और उनके जीवन-दृष्टिकोणों में समानता थी उतना ही गलत

होगा, जितना यह कहना कि उसने इसलिए शादी की कि उसकी मित्र-मण्डली को यह जोड़ी पसन्द थी। इवान इल्योच ने इन दोनों ही बातों का ख्याल रखकर शादी की थी। इस शादी में सुख भी था और औचित्य भी-इस जोड़ी को बड़े लोग भी उचित समझते थे।

इवान इल्योच ने शादी कर ली।

विवाह की रस्में और विवाह के बाद पहले कुछ दिन बहुत अच्छे गुजरे—प्रेम-क्रीड़ा, नये साज-सामान, नये बर्तन, नये कपड़े। वक्त खूब आनन्द में कटने लगा। इवान इल्योच सोचता कि शादी से पहले की तरह अब भी उसकी जिन्दगी शिष्ट, उल्लासपूर्ण, आरामदेह और आमोदपूर्ण बनी रहेगी, इस शादी से उसमें कोई बाधा नहीं आयेगी, बल्कि और भी रंग आ जाएगा। कुछ ही महीनों बाद उसकी पत्नी गर्भवती हुई। तब उसे एक नयी, अप्रत्याशित स्थिति का सामना करना पड़ा, जो बड़ी अप्रिय, अनुचित और असह्य साबित हुई। उसे इस बात का अनुमान तक नहीं हो सकता था कि जिन्दगी यह करवट लेगी। इससे छुटकारा पाना भी असम्भव था।

अकारण ही, या उसे de gaité de coeur* कह लो, उसकी पत्नी जिन्दगी के सुख और शिष्टता को भंग करने लगी। वह इसके अकारण ही ईर्ष्या करने लगी और तकाजे करती कि वह उसकी अधिक टहल-सेवा करे। पति की हर बात में मीन-मेख निकालती और बड़े अनुचित और भद्दे ढंग से झगड़ती।

इस अप्रिय स्थिति से छुटकारा पाने के लिए पहले तो इवान इल्योच ने यह सोचा कि जीवन को पहले की तरह उसी शिष्ट आरामदेह ढंग से ही बिताना चाहिए। इसी से वह जिन्दगी में कामयाब हुआ था। उसने कोशिश की कि वह अपनी पत्नी के चिड़चिड़ेपन की कोई परवाह न करे और पहले की तरह सुख और चैन से रहता चले। वह अपने दोस्तों को ताश खेलने के लिए आमन्त्रित करता और स्वयं क्लब या मित्रों के घर जाता। परन्तु एक बार उसकी पत्नी ने उसे इतने भद्दे ढंग से फटकारा कि वह बेचैन हो उठा। इसके बाद जब कभी वह उसकी इच्छा के विरुद्ध आचरण करता तो वह उसे फटकारती। जान पड़ता था कि उसने दृढ़ निश्चय

---

*सनक के कारण (फ्रेंच)।

कर लिया है कि वह तब तक दम न लेगी, जब तक उसे पूरी तरह् अपने क़ाबू में न कर ले। और क़ाबू में करने का अर्थ था कि वह भी सारा वक़्त, मुंह बाये, उसी की तरह घर पर बैठा रहे। उसने समझ लिया कि विवाह से, और विशेषकर ऐसी स्त्री के साथ विवाह से, जीवन में सुख और शिष्टता बढ़ेगी नहीं, बल्कि डर था कि ख़त्म ही हो जायेगी। इसलिए उसने इस ख़तरे से अपने को बचाना ज़रूरी समझा। इवान इल्यीच इसके लिए उपाय सोचने लगा। प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना को केवल एक ही बात प्रभावित करती थी, वह थी इवान इल्यीच की नौकरी। अतः इवान इल्यीच ने अपनी पत्नी के विरुद्ध लड़ने तथा अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखने के लिए अपने काम और उस काम की ज़िम्मेदारियों को साधन बनाया।

बच्चा पैदा हुआ। परेशानियां और भी बढ़ने लगीं। कभी बच्चे को दूध पिलाने की समस्या, कभी मां अथवा बच्चे को बुख़ार—झूठा या सच्चा। उसके लिए इस घरेलू वातावरण से दूर रहकर अपनी एक अलग दुनिया बना लेना और भी आवश्यक हो गया। आशा तो यह की जाती थी कि इवान इल्यीच शिशु-पालन की इन तकलीफ़ों के प्रति सहानुभूति प्रकट करेगा, पर वह इनको समझता तक न था।

ज्यों ज्यों उसकी पत्नी का स्वभाव अधिक चिड़चिड़ा होता जाता और जितना अधिक वह अपने पति को तंग करती, उतना ही अधिक वह जान-बूझकर अपने दफ़्तर को अपने जीवन का आकर्षण केन्द्र बनाता जाता। वह पहले कभी भी इतना महत्वाकांक्षी न रहा था, न ही उसे अपने काम के साथ इतना गहरा अनुराग कभी हुआ था, जितना अब होने लगा था।

शीघ्र ही, शादी के साल भर के अन्दर ही, इवान इल्यीच को पता चल गया कि विवाहित जीवन में कुछ आराम तो ज़रूर है, पर वास्तव में विवाह एक बड़ी जटिल और कठिन समस्या है। और इस सम्बन्ध में मनुष्य को चाहिए कि वह कुछेक स्पष्ट नियम बना ले, जिस तरह उसे अपने व्यवसाय के बारे में बनाने पड़ते हैं, और उनके अनुसार अपना कर्त्तव्य निभाता चला जाये। यहां कर्त्तव्य निभाने का यही अर्थ है कि दाम्पत्य जीवन ऊपर से शिष्ट बना रहे ताकि समाज में उस पर कोई उंगली न उठा सके।

और इवान इल्यीच ने अपने नियम बना लिये। विवाहित जीवन से उसने इतने भर की मांग की कि घर में खाना मिलता रहे, गृहिणी हो,

विस्तर हो और सबसे जरूरी बात कि लोगों की नज़रों में गार्हस्थ्य जीवन की औपचारिक शिष्टता बनी रहे, जिसके आधार पर समाज का अनुमोदन प्राप्त हो सकता था। जीवन के बाक़ी पहलुओं से वह चाहता था कि उसे ख़ुशी मिले। यदि उसे कुछ ख़ुशी मिलती तो वह कृतज्ञता अनुभव करता और यदि फटकार, शिकायतें और भर्त्सना मिलती, तो वह फ़ौरन अपनी काम-धन्धे की दुनिया में खिसक जाता। वहां वह सुखी रहता था।

बड़ी तत्परता से काम करने के कारण उसकी प्रशंसा हुई और तीन ही साल के अन्दर उसे एसीस्टेंट पब्लिक प्रोसेक्यूटर के पद पर नियुक्त कर दिया गया। यह काम उसे और भी आकर्षक लगा। उसमें नये नये महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व थे, उसे किसी पर भी मुकदमा चलाने और उसे क़ैद की सज़ा देने का अधिकार था, वह लोगों के सामने अपनी वाक्पटुता का सफल प्रदर्शन कर सकता था, इत्यादि।

परिवार बढ़ने लगा, और बच्चे हुए। उसकी पत्नी और भी झगड़ालू और चिड़चिड़ी हो गयी, पर गार्हस्थ्य जीवन के नियम पालन करते जाने से उस पर इस चिड़चिड़ेपन का कोई असर न होता था।

सात साल तक इस शहर में काम करने के बाद इवान इल्यीच को किसी दूसरे प्रदेश में पब्लिक प्रोसेक्यूटर के पद पर नियुक्त कर दिया गया। वह और उसका परिवार दूसरे नगर में चले गये, पर वहां उन्हें पैसे की तंगी महसूस होने लगी। उसकी पत्नी को यह नया शहर बिल्कुल पसन्द नहीं आया। यहां तनख़ाह तो पहले से अधिक थी, पर रहन-सहन का ख़र्च भी अधिक था। इसके अलावा, उनके दो बच्चों की मृत्यु हो गयी, जिससे इवान इल्यीच के लिए गार्हस्थ्य जीवन और भी अप्रिय हो उठा।

नये शहर में जो भी मुसीबत आती, उसके लिए प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना अपने पति को दोषी ठहराती। पति-पत्नी के बीच वार्तालाप के प्रत्येक विषय पर, विशेषकर बच्चों के पालन के बारे में, कई बार झगड़ा हो चुका था और इन झगड़ों के फिर से शुरू हो जाने का हर वक़्त डर लगा रहता था। कभी कभार ऐसे दिन भी आ जाते, जब दोनों में प्रेमालाप होता, पर ये कभी भी अधिक देर तक नहीं टिक पाते। वे मानों द्वीप थे, जिन पर थोड़ी देर *विश्राम* करने के *बाद* वे दोनों *छिपी शत्रुता* के समुद्र पर फिर अपनी यात्रा जारी कर देते। और यह छिपी शत्रुता उपेक्षा में व्यक्त होती थी। यदि इवान इल्यीच इस उपेक्षा को बुरा समझता होता तो जरूर

उसके मन को ठेस पहुंचती। पर यह उसे न केवल सामान्य, किन्तु वांछित भी मानने लगा था। ऐसा सम्बन्ध वह जान-बूझकर स्थापित करना चाहता था। उसने यह लक्ष्य बना लिया था कि घर के झगड़ों से वह अपने को अधिकाधिक दूर रखेगा और साथ ही उन्हें अहित तथा अशिष्टता की सीमा तक भी न पहुंचने देगा। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वह ज्यादा से ज्यादा समय घर से बाहर बिताने लगा। जब उसे घर में रहना पड़ता तो वह अमन-चैन क़ायम रखने की ख़ातिर कुछ मित्रों को आमन्त्रित कर लेता। अपने जीवन में वह सबसे अधिक महत्त्व अपने काम को देता था। सरकारी काम में ही वास्तव में उसकी रुचि थी और इसमें वह तन-मन से लगा हुआ था। और ख़ुशी भी उसे इसी से मिलती। उसे अपनी शक्ति का भास होता और इस अधिकार का भी कि वह जिसे चाहे तबाह कर सकता है। उसे अपने बाहरी रोब-दाब का एहसास था। वह अदालत में दाख़िल होता तो अपने नीचे काम करनेवाले लोगों के साथ एक ख़ास ढंग से बातें करता। बड़े अफ़सर और छोटे कर्मचारी सभी उसे चाहते थे। मुक़द्दमों की जांच बड़ी योग्यता से करता और इससे उसका मन आत्म-श्लाघा से भर उठता। इन सब बातों से उसे बड़ी प्रसन्नता होती। इसके अलावा सह-कर्मियों से गप्प-शप्प चलती, डिनर-पार्टियां होतीं और व्हिस्ट खेली जाती। इनसे उसका जीवन काफ़ी भरा रहता। इसलिए कुल मिलाकर इवान इल्यीच का जीवन वांछित ढंग से ही चल रहा था, मतलब कि उसमें सलीक़ा भी था और आमोद प्रमोद भी।

सात साल और बीत गये। उसकी बेटी सोलह वर्ष की हुई। एक और बच्चे की मृत्यु हो चुकी थी। अब केवल एक लड़का रह गया था, जो स्कूल में पढ़ता था। उसके कारण घर में बहुत कलह उठता था। इवान इल्यीच चाहता था कि वह क़ानून पढ़े और प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना ने, केवल वैमनस्य के कारण, उसे जिम्नेज़ियम में भेज दिया था। लड़की घर पर पढ़ती थी और अच्छी तरक़्क़ी कर रही थी। लड़का भी पढ़ाई में अच्छा था।

३

इसी ढर्रे पर इवान इल्यीच ने विवाहित जीवन के सत्रह वर्ष बिताये। अब वह एक अनुभवी पब्लिक प्रोसेक्यूटर था। इस नौकरी से अच्छी कई

और नौकरियों की पेशकश हुई, मगर उसने इस उम्मीद पर उन्हें नामंज़ूर किया कि उनसे भी बेहतर कोई नौकरी मिलेगी। और अब एक ऐसी घटना घटी, जिससे उसका समस्त जीवन विक्षुब्ध हो उठा। इवान इल्यीच तो किसी यूनिवर्सिटी वाले नगर में प्रधान न्यायाधीश का पद पाने की आशा लगाये बैठा था। पर गोप्पे नामक व्यक्ति ने किसी भांति बाज़ी मार ली और यह जगह हासिल कर ली। इवान इल्यीच बहुत बिगड़ा और गोप्पे तथा अपने से ऐन ऊपर वाले अफ़सरों पर आरोप लगाये, उन्हें भला-बुरा कहा। परिणाम यह हुआ कि अधिकारियों ने इवान इल्यीच की ओर से मुंह फेर लिया। इसके बाद जब और जगहें ख़ाली हुईं तो उसे फिर नज़रन्दाज़ कर दिया गया।

यह १८८० की बात है। यह साल इवान इल्यीच के जीवन का सबसे बुरा साल साबित हुआ। एक तरफ़ तो उसकी आय कम थी। उसमें उसके परिवार का गुज़र न हो पाता था। दूसरी तरफ़ उसकी हेठी की जा रही थी। जहां अपने प्रति किये गये इस व्यवहार को वह क्रूर, द्वेषपूर्ण तथा अनुचित समझता था, वहां और लोगों को यह बड़ी साधारण बात जान पड़ती थी। यहां तक कि उसके पिता ने भी उसकी सहायता करने की आवश्यकता नहीं समझी। इवान इल्यीच को लगा कि सभी लोगों ने उसकी ३,५०० रूबल सालाना तनख़्वाह को देखते हुए उसकी स्थिति को सामान्य, बल्कि उसे भाग्यवान समझते हुए उसे उसके हाल पर छोड़ दिया। पर केवल वही जानता था कि उसके साथ हुए अन्यायों, उसकी पत्नी की रात-दिन की चख-चख और आमदनी से ज्यादा ख़र्च के कारण सिर पर चढ़े क़र्ज़ों को ध्यान में रखते हुए उसकी स्थिति सामान्य नहीं थी।

उस साल गर्मी की छुट्टियों में कुछ क़िफ़ायत करने के लिए वह पत्नी के साथ उसके भाई के पास रहने के लिए गांव चला गया।

देहात में कोई काम-काज न होने के कारण इवान इल्यीच ऊब उठा। जीवन में उसे कभी इस तरह निठल्ले नहीं बैठना पड़ा था। वह इस क़दर परेशान हुआ कि उसने कुछ न कुछ करने का, कोई निर्णयात्मक क़दम उठाने का पक्का इरादा कर लिया।

एक रात उसे बिल्कुल नींद नहीं आई और वह सारा वक़्त बरामदे में टहलता रहा। उसी रात उसने निश्चय किया कि वह सीधे सेंट पीटर्सबर्ग जाएगा, वहां जाकर किसी दूसरे मन्त्रालय में अपनी तबदीली करवा लेगा

ग्रौर इस तरह उन लोगों को नीचा दिखायेगा, जो उसके काम की यथोचित प्रशंसा नहीं कर पाये थे।

दूसरे दिन वह सेंट पीटर्सबर्ग के लिए रवाना हो गया। उसकी पत्नी ग्रौर साले ने उसे रोकने की बहुत कोशिश की पर उसने एक न मानी।

उसके सामने एक ही लक्ष्य था कि वहां पांच हज़ार रूबल तनख़ाह वाली कोई नौकरी ढूंढ़ ले। किस मन्त्रलय या महकमे में काम मिले, या काम किस ढंग का हो, उसे इस बात की परवाह न थी। उसे तो पांच हज़ार की नौकरी दरकार थी, भले ही वह किसी प्रशासकीय विभाग में हो, किसी बैंक में, रेलवे में, ऐम्प्रेंस मरीया की किसी संस्था में, यहां तक कि बेशक चुंगीघर में ही हो। ज़रूरी यही था कि तनख़ाह पांच हज़ार हो ताकि उसे उस मन्त्रालय में काम न करना पड़े, जिसने उसके काम की क़द्र नहीं की थी।

इस दौरे में उसे ग्रप्रत्याशित ग्रौर ग्राश्चर्यजनक सफलता मिली। जब उसकी गाड़ी कुर्स्क पहुंची तो उसी दर्जे के डिब्बे में ग्रचानक उसका एक मित्र, फ़० स० इल्यीन, ग्रा बैठा। इसने उसे बताया कि कुर्स्क के गवर्नर को ग्रभी ग्रभी इस ग्राशय का एक तार मिला है कि मन्त्रालय में एक महत्वपूर्ण तबादला होनेवाला है, प्योत्र इवानोविच के स्थान पर इवान सेम्योनोविच की नियुक्ति होगी।

इस प्रस्तावित तबादले का महत्व रूस के लिए तो था ही, इसका विशेष महत्व इवान इल्यीच के लिए भी था। प्योत्र पेत्रोविच नया ग्रादमी था। उसे तरक़्क़ी मिल जाने से ज़ाहिर था कि उसके मित्र ज़ख़ार इवानोविच को भी तरक़्क़ी मिलेगी। इस तरह परिस्थितियां ग्रपने ग्राप इवान इल्यीच के ग्रनुकूल बन रही थीं। ज़ख़ार इवानोविच इवान इल्यीच का मित्र था, दोनों सहपाठी रह चुके थे।

मास्को में इस ख़बर की पुष्टि हुई। जब इवान इल्यीच सेंट पीटर्सबर्ग पहुंचा तो वह ज़ख़ार इवानोविच से मिलने गया, उसने इसे वचन दिया कि वह ज़रूर उसी *न्याय-मन्त्रलाय* में उसे नौकरी लेकर देगा, जिसमें वह काम करता था।

एक सप्ताह बाद उसने ग्रपनी पत्नी को यह तार भेजा:

"मिलर के स्थान पर ज़ख़ार नियुक्त हुग्रा है। पहली रिपोर्ट के बाद मेरी नियुक्ति होगी।"

यह तबादला बड़ा लाभदायक सिद्ध हुआ। अचानक इवान इल्यीच को अपने ही मन्त्रालय में एक ऐसी जगह मिल गयी, जिससे वह अपने सहकारियों से दो दर्जे ऊपर हो गया। पांच हज़ार तनख़ाह, इसके अलावा साढ़े तीन हज़ार रूबल घर के साज-सामान तथा सफ़र-ख़र्च के लिए। अपने विरोधियों तथा मन्त्रालय के ख़िलाफ़ उसका सारा ग़ुस्सा ठण्डा पड़ गया। अब वह बिल्कुल ख़ुश था।

इवान इल्यीच गांव लौटा। उसका चित्त बेहद प्रसन्न और सन्तुष्ट था। एक अरसे से ऐसा नहीं हुआ था। प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना का भी उत्साह बढ़ गया और कुछ देर के लिए घर में शान्ति आ गयी। इवान इल्यीच ने अपनी यात्रा का ब्योरा दिया, बतलाया कि सेंट पीटर्सबर्ग में उसकी बड़ी आवभगत हुई, उसके सभी विरोधियों को मुंह की खानी पड़ी, इस नौकरी के मिलने पर वे उसके तलवे चाटने लगे, उससे डाह करने लगे और इस बात का तो उसने ख़ास ज़िक्र किया कि सेंट पीटर्सबर्ग में सभी उसे बहुत चाहते हैं।

प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना बड़े ध्यान से उसकी बातें सुनती रही, बीच में एक बार भी नहीं बोली। यही दिखाने की कोशिश करती रही कि उसे इवान इल्यीच की बात पर विश्वास है। उसका सारा ध्यान अब नये शहर की ओर लगा था। वह यही सोच रही थी कि वहां पर किस ढंग से रहेंगे। इवान इल्यीच को यह जानकर ख़ुशी हुई कि इसमें उसके इरादे उसकी पत्नी के इरादों से बिल्कुल मिलते थे, कि दोनों एक दूसरे से सहमत थे। पहले जो थोड़े से काल के लिए उसके जीवन में बाधा आयी थी, वह दूर हो जायेगी और उसका जीवन फिर से सुखमय और सुरुचिपूर्ण हो पायेगा। यही उसे स्वाभाविक जान पड़ता था।

इवान इल्यीच गांव में थोड़े ही दिन ठहरा। दस सितम्बर को उसे अपना नया काम संभालना था। इसके अलावा नये शहर में जाकर निवास-स्थान का प्रबन्ध करना, प्रान्तीय नगर से, जहां पर वह पहले था, अपना सारा सामान ले जाना, बहुत सी नयी चीज़ें ख़रीदना, कई चीज़ों के लिए आर्डर देना—ये सब काम उसे करने थे। संक्षेप में कहें तो जिस जीवन की रूप-रेखा उसने अपने मन में बना रखी थी, उसे नये शहर में जाकर क्रियान्वित करना था। जीवन की ऐसी ही रूप-रेखा प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना की सभी कल्पनाओं तथा महत्वाकांक्षाओं का केन्द्र बनी हुई थी।

हर बात बड़ी अनुकूलता से सुलझी थी, पति-पत्नी के विचार भी मेल खा गये थे और वे दोनों एक दूसरे से मिलते भी कम थे, अतः उनके सम्बन्ध इतने मैत्रीपूर्ण हो उठे थे, जितने कि शादी के पहले दिनों के बाद आज तक कभी न हो पाये थे। पहले तो इवान इल्यीच ने सोचा कि वह अपने परिवार को भी साथ ले जायेगा, परन्तु अपने साले और उसकी पत्नी के आग्रह पर, जो सहसा उसके और उसके परिवार के प्रति बड़े स्नेहपूर्ण और विनम्र हो उठे थे, उसने अकेले ही जाने का निश्चय किया।

इवान इल्यीच रवाना हो गया। उसका मन ख़ुश था। एक तो सफलता मिली थी, दूसरे पत्नी के साथ पटरी बैठ गयी थी। एक चीज़ दूसरी की पूर्ति कर रही थी। सफ़र के दौरान सारा वक़्त उसकी मनःस्थिति ऐसी ही रही। रहने के लिए उसे एक बहुत अच्छा फ़्लैट मिल गया, बिल्कुल वैसा ही जैसा कि वह और उसकी पत्नी चाहते थे। बड़े बड़े, ऊंची छत वाले, पुराने ढंग के कमरे, एक खुला, आरामदेह पढ़ने-लिखने का कमरा, पत्नी और बेटी के लिए अलग कमरे, बेटे के लिए एक कमरा, जहां उसका अध्यापक उसे पढ़ा सके – ऐसा मालूम हुआ, जैसे ठीक उन्हीं की ज़रूरतों को देखकर घर बनाया गया हो। उसके लिए साज-सामान ख़रीदने, सजाने और ठीक-ठाक करने का सब काम स्वयं इवान इल्यीच ने अपने हाथ में लिया। दीवारों के लिए काग़ज़, परदे, पुराने चलन की मेज़-कुर्सियां उसे विशेषकर Comme il faut लगती थीं। वह इन्हें ख़रीदता रहा और धीरे धीरे घर में रौनक़ आने लगी, और उसका भावी निवास-गृह उस आदर्श नमूने के अनुकूल ढलने लगा, जो उसने अपने मन में बना रखा था। जब आधा काम हो चुका तो घर का रूप देखकर वह दंग रह गया। फ़्लैट उसकी उम्मीदों से कहीं बढ़कर निखरने लगा था। वह अभी से इस बात की कल्पना कर सकता था कि तैयार हो जाने पर फ़्लैट की साज-सज्जा कितनी सुन्दर, कितनी यथोचित होगी। गंवारपन का लेशमात्र भी उसमें नहीं होगा। रात को सोते समय उसकी आंखों के सामने उस सजे-सजाये कमरे का चित्र होता, जिसमें भेंट करनेवाले लोग आकर बैठा करेंगे। वह बैठक में झांककर देखता – वह अभी तक तैयार नहीं हो पाई थी – तो उसे अंगीठी, अंगीठी के सामने का पर्दा, अलमारियां, जहां-तहां बिना किसी क्रम के रखी हुई कुर्सियां, दीवारों पर बढ़िया चीनी मिट्टी की

प्लेटें, अपनी अपनी जगह पर सजी हुई कांसे की मूर्तियां इत्यादि नज़र आतीं। उसे यह सोचकर बेहद ख़ुशी होती कि जब उसकी पत्नी और बेटी यहां आयेंगी और उन्हें वह एक एक चीज़ दिखायेगा तो वे कितनी ख़ुश होंगी। उन्हें भी इन चीज़ों में रुचि थी। वे सोच भी नहीं सकती थीं कि उन्हें क्या क्या देखने को मिलेगा। सौभाग्य से उसे पुराना फ़र्नीचर सस्ते दामों मिल गया था, जिससे घर की सजावट में एक विशेष कमनीयता आ गयी थी। अपनी चिट्ठियों में वह हर चीज़ का ब्योरा कुछ घटाकर देता था, ताकि जब वे आयें तो घर देखकर दंग रह जायें। इन कामों में वह इतना व्यस्त रहता कि अपने नये सरकारी काम की ओर वह यथोचित ध्यान न दे पाता। उसे ख़्याल नहीं था कि कभी ऐसी स्थिति आयेगी। उसे यह काम सबसे ज़्यादा पसन्द था। जब अदालत की कार्यवाही चल रही होती तो कभी-कभी उसका ध्यान उचट जाता, मन उड़ानें भरने लगता कि परदों के ऊपर का भाग खुला रहने दिया जाये या ढक दिया जाये। वह इस काम में इतना खो गया था कि अक्सर स्वयं कारीगरों का हाथ बंटाने लगता, मेज़-कुर्सियां इधर से उधर रखता, दरवाज़ों पर पर्दे टांगता। एक दिन जब वह सीढ़ी पर चढ़कर कारीगर को यह समझा रहा था कि वह किस तरह पर्दे लगाये, तो उसका पांव फिसल गया और वह गिरते गिरते बचा। वह बड़ा मज़बूत और फुर्तीला आदमी था, फ़ौरन संभल गया, केवल गिरते वक़्त उसकी कमर खिड़की के हत्थे से टकरा गयी, जिससे उसे कुछ चोट आ गयी। उसकी कमर में कुछ देर तक दर्द होता रहा, पर वह जल्दी ही दूर हो गया। इन दिनों इवान इल्यीच विशेषकर स्वस्थ और प्रसन्नचित्त रहा। उसने लिखा: "मैं यों महसूस करता हूं, जैसे पन्द्रह बरस छोटा हो गया हूं।" उसका ख़्याल था कि सब काम सितम्बर के अन्त तक पूरा हो जाएगा, पर वह अक्तूबर के मध्य तक घिसटता चला गया। पर परिणाम जो निकला वह विस्मयजनक था। यह केवल उसी का ख़्याल नहीं था, और लोग भी जो उस फ़्लैट को देखने आते थे, यही कहते थे।

पर सच तो यह है कि वह भी अपना घर कुछ वैसा ही बना पाया था जैसा कि उस जैसे सभी लोग बना पाते हैं, जो स्वयं अमीर न होते हुए अमीरों जैसे बनना चाहते हैं और अन्त में केवल एक दूसरे के समान ही बनकर रह जाते हैं। पर्दे, आबनूसी फ़र्नीचर, फूल, क़ालीन, कांसे की

मूर्त्तियां, हरेक चीज गहरे रंग की ग्रौर भड़कीली – बिल्कुल वैसी ही जैसी इस वर्ग के लोग इकट्ठी करते हैं ग्रौर ग्रपने वर्ग के ग्रन्य लोगों के समान बन जाते हैं। उसका फ़्लैट भी ग्रौर लोगों के फ़्लैटों जैसा ही था, इसलिए उसका कोई प्रभाव न पड़ता था। पर वह उसे शानदार ग्रौर बेजोड़ समझता था। वह स्टेशन पर ग्रपने परिवार को लेने गया, फिर सब के सब रोशनी से जगमगाते फ़्लैट में दाख़िल हुए। सफ़ेद नेकटाई लगाये एक चोबदार ने ड्योढ़ी का दरवाज़ा खोला। ड्योढ़ी फूलों से सजी हुई थी। यहां से वे बैठक में गये, फिर उसके पढ़ने वाले कमरे में। परिवार के लोग दंग रह गये। इवान इल्यीच की ख़ुशी का ठिकाना न था। उसने उन्हें सारा घर दिखाया। उनके मुंह से प्रशंसा के शब्द सुन कर वह स्वयं ग्रभिभूत हो रहा था। ग्रात्मसन्तोष से उसका चेहरा दमकने लगा। उसी दिन शाम को जब वे चाय पीने बैठे तो प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना ने उससे पूछा कि वह गिरा कैसे, तो वह हंसने लगा। नाटकीय ग्रन्दाज़ में बताने लगा कि वह कैसे गिरा था ग्रौर किस भांति जब वह गिरा तो एक कारीगर का दिल दहल गया था। यह सारा विवरण बड़ा रोचक रहा।

"ग्रच्छा हुग्रा कि मैं बचपन से कसरत करने का ग्रादी हूं। मेरी जगह कोई ग्रौर होता तो बुरी तरह चोट खा जाता। मुझे केवल एक तरफ़ को मामूली सी सूजन हुई है, इससे ज्यादा कुछ नहीं। जब हाथ लगाऊं तो वहां ग्रब भी थोड़ा दर्द होता है, मगर धीरे धीरे कम हो रहा है। मामूली चोट थी, इससे ज्यादा कुछ नहीं।"

वे नये घर में रहने लगे। जब ग्रच्छी तरह से घर में जम गये तो, जैसा कि सदा होता है, एक कमरे की कमी महसूस हुई ग्रौर यह भी लगा कि तनख़ाह ग्रगर थोड़ी सी ग्रौर ज्यादा होती, केवल पांच सौ रूबल, तो परिवार की सब ज़रूरतें पूरी हो जातीं। पर सब मिलाकर हर चीज यथोचित थी, ख़ास तौर पर शुरू शुरू में, जब फ़्लैट की साज-सज्जा ग्रभी पूरी नहीं हो पाई थी, कई चीज़ों के ख़रीदने, मरम्मत करवाने, एक जगह से हटाकर दूसरी जगह रखने इत्यादि का काम बाक़ी रहता था। कुछ छोटे-मोटे मत-भेद भी हो जाते, पर पति-पत्नी इतने ख़ुश ग्रौर ग्रपने काम में इतने व्यस्त थे कि शीघ्र ही ये मत-भेद दूर हो जाते ग्रौर झगड़े पैदा होने की नौबत न ग्राती थी। ग्राख़िर जब फ़्लैट का काम पूरा हो गया, तो जीवन में थोड़ी नीरसता ग्रा गयी ग्रौर कुछ कमी महसूस होने लगी। पर

इसी समय नये नये लोगों से परिचय हो गया, नये ढंग के जीवन के अभ्यस्त होने लगे और जिन्दगी भरी-पूरी लगने लगी।

इवान इल्यीच सुबह का वक़्त कचहरी में बिताता और भोजन के समय घर आ जाता। शुरू शुरू में तो उसमें ख़ूब उत्साह था, हालांकि फ़्लैट के कारण वह क्षुब्ध भी हो उठता था। (अगर पर्दों या मेज़पोश पर कहीं एक भी दाग होता, पर्दों में कहीं कोई रस्सी ढीली होती, तो वह खीझ उठता। उसने उन सभी चीज़ों को सजाने-संवारने में इतनी अधिक मेहनत की थी और इसलिए किसी भी चीज़ के ख़राब होने से वह खीझ उठता।) पर कुल मिलाकर इवान इलीच का जीवन वैसा ही था जैसा कि वह बनाना चाहता था: आरामदेह, ख़ुशगवार और शिष्ट-सभ्य। वह प्रातः ६ बजे उठता, कॉफ़ी पीता, अख़बार पढ़ता और अपनी सरकारी पोशाक पहनकर कचहरी चला जाता। वहां उसके दैनिक काम का सांचा पहले से ही तैयार हो चुका होता और वह बड़ी आसानी से उसमें फिट हो जाता। वहां दरख़ास्तें पेश होते, वह पूछ-ताछ के पत्रों से निबटता, दफ़्तर का काम निपटाता। मुकद्दमों की पेशियां होतीं—खुली तथा प्रारम्भिक। मनुष्य में इतनी योग्यता होनी चाहिए कि वह अपना काम छांट सके और उसमें से ऐसे सब तत्वों को निकाल सके, जो सरकारी काम में रुकावट डालते हों, भले ही वे दिलचस्प और जानदार हों। लोगों के साथ सरकारी सम्बन्ध के अलावा कोई और सम्बन्ध नहीं होना चाहिए। इन सम्बन्धों का मूलाधार ही सरकारी काम होना चाहिए। यों भी ये सम्बन्ध केवल सरकारी स्तर पर ही रहने चाहिए। मिसाल के तौर पर एक आदमी कुछ पूछने के लिए कचहरी में आता है। यह मुमकिन नहीं कि इवान इल्यीच अपने सरकारी पद को भूलकर उसके साथ साधारण व्यक्ति की भांति बातें करने लगे। पर यदि यह आदमी न्यायालय के सदस्य के नाते उसके पास आता है तो इस सम्बन्ध के घेरे के अन्दर (जिसका उल्लेख सरकारी शब्दावली में सरकारी कागज़ पर हो सके) इवान इल्यीच उसके लिए सब कुछ करता, सचमुच यथाशक्ति सब कुछ करता, यहां तक कि उसके साथ बड़े आदर से पेश आता और उसका व्यवहार प्रत्यक्षतः मानवीय, यहां तक कि मैत्रीपूर्ण होता। पर ज्यों ही सरकारी सम्बन्ध समाप्त हों, उसी क्षण बाकी सभी सम्बन्ध भी समाप्त हो जाने चाहिए। इवान इल्यीच में सरकारी सम्बन्धों को अलग रखने की असाधारण योग्यता थी। वह उन्हें यथार्थ जीवन

से बिल्कुल अलग रखता था। और यह गुण उसकी योग्यता और अनुभव के कारण पनपकर कला के स्तर तक जा पहुंचा था। वह कभी कभी, मानों मज़ाक़ के लिए ही अपने को इतनी छूट दे देता कि कुछ देर के लिए मानवीय और सरकारी सम्बन्ध घुल-मिल जाते। उसमें यह क्षमता थी कि इच्छा होते ही अपने दृढ़ संकल्प से सरकारी या मानवीय रिश्ते को अलग कर देता। इवान इल्यीच यह सब बड़ी सुगमता, बड़े मधुर ढंग तथा शिष्टता से करता था। ख़ाली समय में वह सिगरेट के कश लगाता, चाय पीता, थोड़ी बहुत राजनीति की चर्चा करता, काम-धन्धे की बातें होतीं, कुछ ताश की बाज़ियों के बारे में और बहुत कुछ नई नियुक्तियों के बारे में। आख़िर थककर वह घर लौटता, लेकिन उसका मन संतुष्ट होता, उसी भांति जिस भांति अच्छा वादन करने के बाद किसी आर्केस्ट्रा के प्रधान वादक का मन सन्तुष्ट होता है। घर पहुंचकर देखता कि उसकी पत्नी और बेटी या तो कहीं बाहर जाने को तैयार हैं या मेहमानों की देख-रेख में व्यस्त हैं। उसका बेटा स्कूल गया होता, या अपने अध्यापक के साथ बैठा सबक़ याद कर रहा होता। जो कुछ भी वह जिम्नेज़ियम में पढ़कर आता, उसे वह बड़ी मेहनत से याद करता। सब बात बहुत बढ़िया ढंग से चल रही थी। भोजन के बाद यदि कोई अतिथि न आये होते तो इवान इल्यीच बैठकर कोई पुस्तक पढ़ता—कोई नयी पुस्तक, जिसकी बहुत चर्चा हो रही होती। उसके बाद वह बैठकर दस्तावेज़ों की जांच करता, क़ानून देखता, गवाहों के बयान ध्यान से पढ़ता, उन पर क़ानून की धाराएं लगाता। यह काम उसे न तो रुचिकर लगता, न नीरस। अगर इसके लिए ताश की बाज़ी छोड़नी पड़ती तो यह काम नीरस हो जाता, पर यदि ताश न चलता होता, तो अकेले बैठने या पत्नी के साथ बैठने से यही बेहतर होता था। समाज के सम्मानित पदाधिकारियों तथा उनकी पत्नियों को अपने घर बुलाकर छोटी छोटी पार्टियां करने में इवान इल्यीच को सबसे ज़्यादा ख़ुशी होती थी। इन पार्टियों में भी वही कुछ होता, जो इन लोगों के अपने घरों में होता था, शाम उसी ढंग से बीतती, जिस ढंग से ये लोग उसे बिताने के आदी थे। उसके घर की बैठक भी वैसी ही थी, जैसी कि इन लोगों के घरों की बैठकें।

एक बार उन्होंने एक नाच-पार्टी का आयोजन किया। पार्टी ख़ूब कामयाब रही। इवान इल्यीच बेहद ख़ुश था। केवल मिठाइयों और पेस्ट्रियों

के सवाल पर पति-पत्नी का आपस में बहुत भद्दा सा झगड़ा उठ खड़ा हुआ। प्रस्कोव्या फ्योदोरोव्ना ने खाने-पीने की चीज़ों के बारे में कुछ अलग निश्चय कर रखा था, परन्तु इवान इल्यीच ने ज़िद्द की कि चीज़ें सबसे बढ़िया दूकान से मंगवायी जायें। उसने बहुत सी पेस्ट्रियां मंगवा लीं, नतीजा यह हुआ कि बहुत सा सामान बच गया और बिल पैंतालीस रूबल का आ गया। पति-पत्नी में तकरार होने लगी। यह झगड़ा कितना गंभीर और अप्रिय रहा होगा, इसका अन्दाज़ इसी से लगाया जा सकता है कि प्रस्कोव्या फ्योदोरोव्ना ने उसे "गधा और नामर्द" कहा। इवान इल्यीच ने अपना सिर थाम लिया और आवेश में तलाक लेने के बारे में चिल्लाया। पर पार्टी बहुत ख़ुशगवार रही थी। बड़े बड़े लोग आये थे। इवान इल्यीच राजकुमारी त्रुफ़ोनोवा के साथ नाचा था। यह उस त्रुफ़ोनोवा की बहिन थी, जिसने "मेरा बोझ अपने कन्धों पर लो" नाम वाले समाज की नींव रखी थी। अपने सरकारी काम से इवान इल्यीच को एक प्रकार की ख़ुशी मिलती थी। इससे उसकी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति होती थी। एक दूसरे प्रकार की ख़ुशी उसे अपने सामाजिक जीवन से मिलती थी। उससे उसके अहं की तुष्टि होती थी। पर सच्चा आनंद उसे मिलता था ताश खेलने में। कुछ भी हो जाये, जीवन कितना ही निराश क्यों न हो उठे, यह आनंद छोटे से दीपक की तरह उसके जीवन को आलोकित किये रहता था। जब चार दोस्त – चारों अच्छे खिलाड़ी – ताश की बाज़ी लगाते तो मन खिल उठता। हां, अगर साथी झगड़ालू निकल आते तो मज़ा किरकिरा हो जाता था। (इस चौकड़ी में पांचवा बनने में कुछ मज़ा न था। आप मुंह बाये देखे जा रहे हैं और ऊपर से दिखावा भी किये जा रहे हैं कि आपको मज़ा आ रहा है।) इसके बाद रात का भोजन और एक गिलास हल्की सी अंगूरी शराब। जब कभी इवान इल्यीच को इस तरह ताश खेलने का मौका मिलता, विशेषकर जब वह कुछ पैसे जीत लेता, तो वह सोने के वक़्त बड़ा प्रसन्नचित्त होता (बहुत पैसे जीतने से उसका मन कुछ बेचैन सा हो उठता था)।

इस ढर्रे पर उनका जीवन चल रहा था। वे सबसे ऊंचे हल्क़ों में उठते-बैठते, उनके घर में प्रतिष्ठित तथा युवा लोगों का आना-जाना रहता।

पति, पत्नी और बेटी तीनों इस बारे में एक दूसरे से पूर्णतया सहमत थे कि किन लोगों के साथ उन्हें मेल-जोल बढ़ाना चाहिए। और बिना

एक दूसरे से पूछे वे बड़ी कुशलता से ऐसे परिचितों तथा संबंधियों से पीछा छुड़ा लेते थे, जिनका अपने यहां आना उन्हें खटकता था और जिन्हें वे अपने से निम्न स्तर के समझते थे। ऐसे लोग बड़े आग्रह से उनसे मिलने आते और अपना सम्मान प्रकट करते, उस बैठक में बैठने का दुःसाहस करते, जिसकी दीवारों पर जापानी प्लेटें लगी थीं। पर शीघ्र ही वे टल जाते। अन्त में समाज के सबसे प्रतिष्ठित लोग ही गोलोवीन परिवार के मित्रों में रहते जाते। लीज़ा के चाहनेवाले युवकों का भविष्य बड़ा आशापूर्ण था। उनमें से एक द्मोत्री इवानोविच पेत्रीश्चेव का बेटा था। यह लड़का जांच-मैजिस्ट्रेट और अपने बाप की सारी ज़मीन-जायदाद का एकमात्र वारिस था। एक दिन इवान इल्यीच ने प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना से इसका ज़िक्र किया और प्रस्ताव रखा कि उनके लिए स्लेज पर सैर-सपाटे या कोई खेल-तमाशा देखने का प्रबन्ध किया जाये। ऐसा था उनका जीवन। बिना किसी परिवर्तन के एक दिन के बाद दूसरा बीत रहा था और सब कुछ ख़ूब मजे में चल रहा था।

(४)

सब का स्वास्थ्य अच्छा था। कभी कभी इवान इल्यीच यह शिकायत करता कि उसके मुंह का स्वाद अजीब सा हो रहा है, या उसे कमर में बाईं ओर कुछ बोझ सा महसूस होता है, परन्तु यह कोई बीमारी नहीं थी।

मगर यह बोझ बढ़ने लगा। इसे दर्द तो नहीं कहा जा सकता था, पर एक दबाव सा महसूस होता रहता, जिसके कारण वह सारा वक़्त उदास रहने लगा। यह उदासी और भी गहरी होने लगी और उस ख़ुशगवार और शिष्ट जीवन में बाधक बनने लगी, जिसे गोलोवीन परिवार ने फिर से स्थापित किया था। पति-पत्नी में भी अब कलह बढ़ने लगा। शीघ्र ही घर का सुख-चैन जाता रहा। घर की शिष्टता बनाये रखना कठिन हो गया। झगड़े बार बार उठ खड़े होते। पारिवारिक जीवन में द्वेष का विष घुलने लगा। ऐसे दिन बहुत कम होते जब पति-पत्नी में कलह न उठता हो।

प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना कहती कि उसका पति चिड़चिड़े मिज़ाज का आदमी है। उसका यह कहना किसी हद तक जायज़ भी था। लेकिन बात को बढ़ा-चढ़ाकर कहने की उसकी आदत थी। इसलिए वह अब अक्सर कहती कि उसके पति का स्वभाव शुरू से ही ऐसा रहा है और अगर उसने

बीस साल उसके साथ निभा दिये तो उसके अपने सहनशील स्वभाव के कारण। यह ठीक था कि अब जो भी बहस छिड़ती उसे शुरू करनेवाला वही होता। ज्यों ही परिवार खाना खाने बैठता और शोरवा सामने आता, तो वह मीन-मेख निकालने लगता। या तो कोई बर्तन टूट गया होता, या खाना बुरा होता, या उसका बेटा मेज़ पर कोहनी टिकाये बैठा होता, या बेटी ने बालों में ठीक तरह से कंघी नहीं की होती। हर बात के लिए प्रस्कोव्या पयोदोरोव्ना को दोषी ठहराया जाता। पहले तो प्रस्कोव्या पयोदोरोव्ना ईंट का जवाब पत्थर से देती, ख़ूब बुरा-भला कहती, पर दो बार ऐसा भी हुआ कि भोजन शुरू होते ही ग़ुस्से से वह इस क़दर बौखला उठा कि उसकी पत्नी ने समझा कि भोजन में सचमुच कोई चीज़ इसके अनुकूल नहीं बैठी होगी, जिस कारण इसका मिज़ाज इतना बिगड़ गया है। इसलिए उसने अपने को काबू में रखा और कुछ नहीं बोली। उसने यही कोशिश की कि जितनी जल्दी हो सके, भोजन समाप्त हो जाये। इस आत्म-नियन्त्रण के लिए वह बार बार अपनी सराहना करती। उसने अपने मन में यह धारणा बिठा ली थी कि उसके पति का मिज़ाज बेहद बुरा है, और उसने इसके जीवन को बरबाद कर डाला है। इस तरह वह अपने पर तरस खाने लगी। जितना ही अधिक वह अपने पर तरस खाती, उतना ही अधिक वह अपने पति से घृणा करने लगती। वह चाहती थी कि वह मर जाये, परन्तु समझती थी कि उस हालत में आमदनी ख़त्म हो जायेगी। इस लाचारी से उसे अपने पति पर और भी खीझ आती। यह सोचकर कि उसके मर जाने से भी उसे चैन नहीं मिलेगा, उसका क्षोभ और भी बढ़ जाता। वह खीझ उठती, खीझ को दबाने की चेष्टा करती, जिसे देखकर उसके पति का ग़ुस्सा और भी ज़्यादा भड़क उठता।

एक बार दोनों में झगड़ा हुआ तो इवान इल्यीच ने अपनी पत्नी पर बड़े बेजा दोष लगाये। वे इतने अनुचित थे कि जब बाद में सुलह हुई तो उसने स्वीकार किया कि बीमारी के कारण उसका मिज़ाज बिगड़ गया है। इस पर उसकी पत्नी ने आग्रह किया कि यदि वह अस्वस्थ है तो उसे इलाज कराना चाहिए और फ़ौरन किसी प्रसिद्ध डाक्टर से मशविरा लेना चाहिए।

इवान इल्यीच ने ऐसा ही किया। वह डाक्टर के पास गया। सब वैसा ही था जैसा कि सदा हुआ करता है। पहले डाक्टर ने बड़ी देर तक इन्तज़ार करवाया, फिर बड़े रोब से उसका मुआयना किया। इवान इल्यीच

इस अभिनय से परिचित था, क्योंकि वह स्वयं भी कचहरी में इसी तरह का रोबीला व्यवहार किया करता था। डाक्टर ने उंगलियों से टोह-टोहकर, ठकोरकर मुग्राइना किया और सवाल पूछे। इवान इल्योच जवाब देता रहा। ज़ाहिर है कि यह सवाल अनावश्यक थे, क्योंकि उनके जवाब वह पहले से हो जानता था। फिर डाक्टर ने बड़ी गम्भीरता से उसकी ओर देखा, जिसका अर्थ था: सब ठीक हो जायेगा। जरूरत केवल इस बात की है कि तुम बिल्कुल अपने को मेरे हाथों में सौंप दो। इलाज केवल मुझी को मालूम है। हर रोगी के प्रति डाक्टरों का एक ही सा रवैया होता है। सब बात बिल्कुल वैसी ही थी, जैसी कचहरियों में होती है। वह प्रसिद्ध डाक्टर उसके साथ उसी तरह रोब से पेश आया, जिस तरह वह स्वयं मुजरिमों के साथ पेश आया करता था।

डाक्टर ने लक्षण बताये और कहा कि इनसे पता चलता है कि तुम्हें यह यह तकलीफ़ है; परन्तु यदि जांच करने पर परिणाम हमारे निदान के अनुकूल न निकला, तो सम्भव है तुम्हें यह और यह तकलीफ़ हो। और यदि हम मान लें कि तुम्हें यह और यह तकलीफ़ है, तो उस हालत में... इत्यादि। केवल एक ही प्रश्न था, जिसका उत्तर इवान इल्योच सुनना चाहता था: क्या मेरी हालत चिन्ताजनक है या नहीं। पर डाक्टर ने इस सवाल को असंगत समझा और कोई उत्तर नहीं दिया। डाक्टर के दृष्टिकोण के अनुसार, यह प्रश्न इस योग्य ही नहीं था कि इस पर विचार किया जाये। बात केवल संभावनाओं पर विचार करने की थी: गतिशील गुर्दा है, पेट में फोड़ा है या अन्धान्त्र में कोई दोष है। इवान इल्योच की जिन्दगी का तो सवाल ही नहीं उठता था—सवाल तो केवल गतिशील गुर्दे और अन्धान्त्र का था। डाक्टर ने अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण ढंग से अन्धान्त्र के पक्ष में अपना मत प्रकट किया। हां, साथ ही उसने यह बात भी कह दी कि पेशाब का निरीक्षण करने के बाद सम्भव है कुछ और बातों का पता चले और तब स्थिति पर दोबारा विचार करने की आवश्यकता होगी। ऐन यही बात, ऐसे ही विद्वत्तापूर्ण ढंग से स्वयं इवान इल्योच हज़ारों बार मुद्दालेह के सामने कह चुका था। डाक्टर ने भी ऐसे ही बड़े विद्वत्तापूर्ण ढंग से निष्कर्ष निकाला और विजयोल्लास, यहां तक कि ख़ुशी से अपनी ऐनक के ऊपर से अपने मुद्दालेह की ओर देखा। डाक्टर के निष्कर्ष से इवान इल्योच इस परिणाम पर पहुंचा कि उसकी हालत चिन्ताजनक है, पर इसकी

चिन्ता न डाक्टर को है, न किसी ग्रौर को। इस परिणाम से इवान इल्यीच को बड़ा सदमा पहुंचा ग्रौर दुःख हुग्रा। उसका हृदय ग्रपने प्रति ग्रनुकम्पा से भर उठा। डाक्टर के प्रति उसके मन में इस बात से क्रोध उठा कि इतने महत्वपूर्ण प्रश्न के प्रति यह इतना उदासीन है।

पर उसने कोई शिकायत नहीं की। वह उठा, फ़ीस मेज पर रखी ग्रौर गहरी सांस भरकर बोला :

"ग्रापसे तो रोगी बड़े बड़े ऊल-जलूल सवाल पूछते होंगे ग्रौर ग्रापको भी उन्हें सुनने की ग्रादत हो गयी होगी, परन्तु सामान्यतया क्या ग्राप मुझे बतला सकते हैं कि मेरी बीमारी ख़तरनाक है या नहीं?"

डाक्टर ने झट एक तीखी नज़र से उसकी ग्रोर ऐनक में से देखा मानो कह रहा हो, "सुनो, ऐ मुद्दालेह, जो सवाल तुम्हें पूछने की इजाज़त है, यदि तुम उनकी सीमा से बाहर जाग्रोगे, तो मुझे तुम्हें ग्रदालत से बाहर निकालने का ग्रादेश देना पड़ेगा।"

"मैंने जो कुछ उचित ग्रौर ग्रावश्यक समझा है, ग्रापको बतला दिया है," डाक्टर बोला, "उससे ग्रधिक जो कुछ होगा यह निरीक्षण से पता चलेगा।" ग्रौर डाक्टर ने झुककर उसे विदा किया।

इवान इल्यीच धीरे धीरे बाहर निकल ग्राया, चुपचाप ग्रपनी स्लेज में बैठा ग्रौर घर की ग्रोर चल दिया। सारा वक़्त वह मन में डाक्टर के कहे वाक्यों को दोहराता रहा ग्रौर यह समझने की कोशिश करता रहा कि उन ग्रस्पष्ट तथा ग्रसमंजस में डाल देनेवाले वैज्ञानिक शब्दों का साधारण भाषा में क्या ग्रर्थ होगा, ताकि उसमें से उसके प्रश्न का उत्तर मिल सके कि क्या उसकी हालत बुरी है, बहुत बुरी है या ग्रभी बहुत बुरी नहीं हुई? उसने समझा कि डाक्टर ने जो कुछ कहा है, उसका सारांश यही है कि हालत बहुत ख़राब है। ग्रब जिस चीज़ की ग्रोर इवान इल्यीच की नज़र जाती, वही उसे ग्रवसादपूर्ण नज़र ग्राती। गाड़ियां हांकनेवाले मनहूस नज़र ग्राते, घर उदास नज़र ग्राते लोग, दूकानें, हर चीज़ उदास नज़र ग्राती। डाक्टर के दुर्बोध शब्दों के बारे में सोचते हुए उसके दबे दबे, हर वक़्त धीरे धीरे कसकते रहनेवाले दर्द ने दूसरा, ग्रधिक गम्भीर ग्रर्थ ग्रहण कर लिया। वह नयी ग्रौर ग्रधिक घबराहट के साथ उसके बारे में सोचता।

वह घर पहुंचा ग्रौर सब बात ग्रपनी पत्नी को कह सुनायी। वह सुनती रही, पर कहानी ग्रभी ग्राधी ही हो पाई होगी, जब उसकी बेटी,

सिर पर टोपी पहने उनके पास आई। मां और बेटी दोनों कहीं बाहर जा रही थीं। बेटी कुछ देर तक तो इस नीरस कथा को विवश होकर सुनती रही, पर बहुत देर तक नहीं। उसकी पत्नी भी उसे अन्त तक नहीं सुन पाई।

"तुमने बड़ा अच्छा किया है," पत्नी ने कहा, "अब बाकायदा दवाई खाना। लाओ, नुस्ख़ा मुझे दो, मैं गेरासिम को अभी दवाख़ाने भेजती हूं।" और वह कपड़े बदलने के लिए बाहर चली गयी।

जितनी देर तक पत्नी कमरे में रही, उतनी देर तो वह जैसे सांस रोके रहा, फिर उसने एक गहरी सांस ली:

"हूं, शायद हालत इतनी ख़राब नहीं, जितनी कि मैं समझता था।"

उसने दवाई खानी शुरू कर दी और डाक्टर के सभी निर्देशों का पालन करने लगा। निर्देश उसके पेशाब की जांच के बाद बदल दिये गये। पर इस विश्लेषण या उसके निष्कर्ष के बारे में कोई ग़लतफ़हमी सी जान पड़ती थी। प्रसिद्ध डाक्टर के पास इतनी छोटी सी बात लेकर जाना असम्भव था। पर स्थिति वैसी नहीं थी जैसी कि डाक्टर ने कहा था। या तो डाक्टर से कोई भूल हो गयी थी, या वह बीमार के सामने झूठ बोला था, या फिर उसने कोई बात उससे छिपा रखी थी।

फिर भी इवान इल्यीच ने उसके निर्देशों का पूरा पूरा पालन किया। पहले तो उनके पालन से ही उसे ढाढ़स हुआ।

डाक्टर को मिलने के बाद इवान इल्यीच का मुख्य काम यही था कि वह दवाई खाता, स्वास्थ्या-रक्षा सम्बन्धी डाक्टर के निर्देशों का पालन करता और अपनी शारीरिक स्थिति में या दर्द में हर छोटी-बड़ी तबदीली को बड़े ध्यान से नोट करता। बीमारियों तथा मानव-स्वास्थ्य में ही अब इवान इल्यीच की सबसे अधिक रुचि हो गयी थी। जब भी कभी उसकी उपस्थिति में कोई आदमी किसी दूसरे आदमी का ज़िक्र करता, जो बीमार था या मर गया था या स्वस्थ हो रहा था, विशेषकर जब उसकी बीमारी इवान इल्यीच की अपनी बीमारी से मिलती-जुलती होती, तो वह बहुत ही ध्यान से सुनता, अपनी घबराहट छिपाने की कोशिश करता, प्रश्न पूछता और मन ही मन अपनी स्थिति की तुलना उसकी स्थिति से करने लगता।

दर्द वैसे का वैसा बना रहा, परन्तु इवान इल्यीच अपने आपको बार बार यह कहता कि नहीं, ठीक हो रहा हूं, पहले से बेहतर महसूस करने लगा

हूं। इस तरह जब तक स्थिति सामान्य रहती, वह अपने को भ्रम में डाले रहता। परन्तु ज्यों ही कभी उसका पत्नी के साथ झगड़ा हो जाता, या कचहरी में कोई अप्रिय बात हो जाती, या ताश खेलते वक़्त अच्छे पत्ते हाथ न लगते तो उसे अपनी बीमारी की बड़ी तीव्रता से अनुभूति होने लगती। एक वक़्त था जब वह बड़े धैर्य से दुर्भाग्य का सामना किया करता था, इस विश्वास के साथ कि वह उस पर क़ाबू पा लेगा, कि अन्त में वह "बाज़ी मार लेगा"। पर अब छोटी सी भी असफलता पर उसके पांव लड़खड़ा जाते और वह निराश हो उठता। वह मन ही मन कहता: देखो, मैं अभी अभी ज़रा ठीक होने लगा था, दवाई अभी अभी अपना असर दिखाने लगी थी कि यह नयी मुसीबत आ खड़ी हुई... वह उस मुसीबत को कोसता, उन लोगों को कोसता, जो उस मसीबत का कारण होते और यों उसकी जान लेने पर तुले थे। वह यह भी जानता था कि इस तरह कोसने से वह और भी जल्दी मर जायेगा, मगर इस पर उसका कोई बस न चलता था। उसे सचमुच यह समझ लेना चाहिए था कि लोगों या अपनी परिस्थितियों पर इस तरह भुनभुनाने से बीमारी बढ़ेगी और इसलिए उसे इन आकस्मिक बखेड़ों की कोई परवाह नहीं करनी चाहिए। पर उसका तर्क बिल्कुल उल्टा था। वह कहता कि अगर उसे किसी चीज़ की ज़रूरत है तो शान्ति की। जब शान्ति न रहती, तो वह खीझ उठता। इसके अलावा चिकित्सा-सम्बन्धी पुस्तकें पढ़ पढ़कर और अनेक डाक्टरों से परामर्श ले लेकर उसने अपनी स्थिति को और भी बिगाड़ लिया। उसकी हालत बहुत धीरे धीरे बिगड़ रही थी। एक एक दिन का फ़र्क़ बहुत मामूली था। इस कारण वह बड़ी आसानी से एक दिन की तुलना दूसरे दिन के साथ करता और अपने को भ्रम में डाले रहता। पर जब वह डाक्टरों के पास जाता तो उसे महसूस होता जैसे उसकी हालत न केवल बिगड़ रही है, बल्कि तेज़ी से बिगड़ रही है। पर इसके बावजूद उसने डाक्टरों के पास जाना नहीं छोड़ा।

उसी महीने में वह एक दूसरे विख्यात डाक्टर के पास गया। इस डाक्टर ने भी वही कुछ कहा, जो पहले ने कहा था, केवल उसने समस्या को पेश दूसरे ढंग से किया। इस डाक्टर की बातें सुनकर इवान इल्यीच का भय और संशय और भी बढ़ गये। एक तीसरे डाक्टर ने, जो इवान इल्यीच के एक मित्र का मित्र और बड़ा ख्याति-प्राप्त डाक्टर था, जांच के बाद एक बिल्कुल ही दूसरे रोग का नाम लिया। उसने आश्वासन दिलाया

कि इवान इल्यीच ठीक हो जायेगा। पर जिस तरह के सवाल उसने पूछे और जिस तरह के अनुमान लगाये, उनसे इवान इल्यीच और भी चकराया और उसके संशय पहले से भी अधिक बढ़ गये। एक होम्योपैथ ने बिल्कुल ही भिन्न निदान बताया। इवान इल्यीच हफ़्ता भर, बिना किसी को बताये, चोरी-चोरी उसकी दवाई खाता रहा। जब एक हफ़्ता गुज़र गया और उसे कोई लाभ न हुआ तो उसका विश्वास इस पर से उठ गया। इसी पर से ही नहीं, अन्य इलाजों पर से भी, और इवान इल्यीच निराश हो गया। इतना निराश वह पहले कभी नहीं हुआ था। एक बार, उसकी जान-पहचान की एक महिला ने उसे बताया कि रोगों का इलाज देव-चित्रों से भी हो जाता है। इवान इल्यीच बड़े ध्यान से सुनता रहा। उसे विश्वास भी होने लगा कि ऐसे इलाज संभव हो सकते हैं। पर बाद में भयभीत होकर उसने ख़ुद से पूछा: "यह क्या बकवास है! क्या मेरा दिमाग़ बिल्कुल ही चल निकला है? अगर मैं यों घबड़ाता रहा तो मेरा कुछ नहीं बनेगा। मुझे चाहिए कि किसी एक डाक्टर को चुन लूं और उसी का इलाज बाकायदा करता जाऊं। अब ऐसा ही करूंगा। बहुत हो चुका। मैं अपनी बीमारी के बारे में सोचना बिल्कुल बन्द कर दूंगा और अगली गर्मियों तक नियमित रूप से डाक्टर के निर्देशों का अक्षरशः पालन करूंगा। इसके बाद देखा जायेगा। अब मैं डांवांडोल नहीं हूंगा।" फ़ैसला करना आसान, मगर इस पर अमल करना नामुमकिन था। कमर के दर्द ने उसे शिथिल कर दिया। वह और भी तेज होता जान पड़ता था, उससे उसे कभी भी चैन न मिलता। उसके मुंह का स्वाद और भी बकबका हो गया था। उसे लगता कि उसके श्वास में से बू आने लगी है। उसकी भूख जाती रही और वह पहले से भी अधिक दुबला हो गया। अपने को और धोखा देने की अब कोई गुंजाइश न थी। इवान इल्यीच के साथ कोई भयानक बात होने जा रही थी, कोई अजीब और महत्त्वपूर्ण बात, जैसी कि उसके साथ पहले कभी नहीं हुई थी। केवल उसी को इसका भास हो रहा था। उसके आसपास के लोग या तो समझते नहीं थे, या समझना ही नहीं चाहते थे। वे यही समझे बैठे थे कि संसार में सब कुछ सदा की भांति चल रहा है। इवान इल्यीच को जितना दुःख यह देखकर होता था उतना और किसी बात से नहीं। घर के लोग, विशेषकर उसकी पत्नी और बेटी, जो आजकल अक्सर पार्टियों में जाने लगी थीं क्योंकि पार्टियों का मौसम था, उसकी ओर कुछ भी ध्यान न देती थीं। उल्टे

वे उससे नाराज़ होतीं कि हर वक़्त मुंह क्यों लटकाये रहते हो और इतने चिड़चिड़े क्यों होते जा रहे हो? मानो यह इसका दोष हो। वे छिपाने की बहुत कोशिश करतीं, पर इवान इल्यीच को साफ़ नज़र आ रहा था कि वे इसे अपना दुर्भाग्य समझती हैं। उसकी पत्नी ने तो उसकी बीमारी के प्रति एक ख़ास रवैया अपना लिया था। इवान इल्यीच कुछ भी कहे या करे उसका रवैया न बदलता। वह रवैया यह था – वह अपने मित्रों से कहती: "देखो न, इवान इल्यीच डाक्टर के निर्देशों का ठीक से पालन नहीं करते, जैसे कि सब समझदार लोग करते हैं। आज दवाई पियेंगे और ख़ुराक भी डाक्टर के आदेशानुसार खायेंगे, वक़्त पर सोयेंगे, मगर कल, यदि मैं ध्यान न रखूं, तो यह दवाई खाना भूल जायेंगे और मछली खा लेंगे, जिसकी डाक्टर ने मनाही कर रखी है। रात के एक बजे तक बैठे ताश खेलते रहेंगे।"

"मैंने कब ऐसा किया है?" एक बार इवान इल्यीच ने खीझकर कहा, "केवल एक बार प्योत्र इवानोविच के यहां ऐसा हुआ था।"

"और कल रात शेबेक के साथ।"

"इसे तुम क्यों गिनती हो? दर्द के कारण मुझे नींद जो नहीं आ रही थी।"

"मुझे क्या? अगर इसी तरह करते रहोगे तो कभी ठीक नहीं होगे और हमें भी दुःख देते रहोगे।"

जो कुछ प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना अपने मित्रों को या सीधे इवान इल्यीच को कहती, उससे तो यही पता चलता था कि वह पति को ही उसकी बीमारी का दोषी ठहरा रही है और समझती है कि उसे तंग करने का एक और साधन उसके हाथ में आ गया है। इवान इल्यीच महसूस करता था कि ऐसा रवैया उसने जान-बूझकर नहीं अपनाया। फिर भी उसे सहन करना आसान न था।

इवान इल्यीच ने देखा या कम से कम उसे भास हुआ कि कचहरी में भी लोगों का रवैया उसके प्रति अजीब सा हो रहा है। किसी किसी वक़्त उसे लगता जैसे उसके साथी नज़रें बचाकर उसकी ओर यों देख रहे हैं मानो वह जल्दी ही नौकरी की एक जगह ख़ाली करने वाला हो। कभी कभी उसके दोस्त मज़ाक़ करते, इसकी बीमारी को मनगढ़न्त कहकर उसे छेड़ते, मानो वह भयानक तथ्य, वह विकराल रोग, जिसका किसी ने कभी

नाम न सुना था, जो अन्दर ही अन्दर बढ़ता जा रहा था, दिन-रात उसकी शक्ति को चाटता जा रहा था और जबरदस्ती उसे किसी विशेष दिशा में घसीटे लिये जा रहा था, मज़ाक़ का विषय हो। श्वार्ज़ को देखकर वह और भी खीझ उठता, क्योंकि उसका हंसी-मज़ाक़, उसकी लापरवाह तबीयत और आमोदप्रियता देखकर उसे दस साल पहले का अपना स्वभाव याद हो आता।

उसके मित्र उसके साथ ताश खेलने आते। वे मेज़ पर बैठते, पत्ते फेंटे जाते, बांटे जाते। इवान इल्यीच अपने पत्ते उठाता, उन्हें ठीक करता, ईंट के सब पत्ते एक तरफ़ रखता – कुल सात पत्ते होते। उसका साथी कहता, "नो ट्रम्प!" जब वह पत्ते खोलकर सामने रखता तो ईंट के दो और पत्ते उसे वहां भी मिल जाते। और क्या चाहिए? उसे ख़ुश होना चाहिए था। सीधी "ग्रैण्ड स्लैम" बनेगी। पर सहसा इवान इल्यीच को दर्द महसूस होने लगता और मुंह का स्वाद बकबका होने लगता। वह सोचता कि इस स्थिति मे "ग्रैण्ड स्लैम" से ख़ुश होना मूर्खता है।

वह अपने साथी मिख़ाईल मिख़ाइलोविच की ओर देखता। मिख़ाईल मिख़ाइलोविच अपना गुदगुदा हाथ मेज़ पर पटकता, शिष्टता और कृपालुता से अपने पत्ते उठाने के बजाय उन्हें धकेलकर इवान इल्यीच के नज़दीक खिसका देता ताकि वह बिना हाथ फैलाये उन्हें उठाता रहे। "क्या यह समझता है कि मैं इतना कमज़ोर हो गया हूं कि अपना हाथ भी दूर तक नहीं फैला सकता?" इवान इल्यीच सोचता और तुरुप के रंग को भूलकर अपने ही साथी के पत्ते पर रंग चल देता और इस तरह "ग्रैंड स्लैम" नहीं बना पाता। तीन सरें कम पड़ जातीं। सबसे बुरी बात तो यह होती कि वह मिख़ाईल मिख़ाइलोविच को बहुत परेशान होते हुए देखता, पर उसको बला से। भला क्यों? यह सोचते ही भय से उसके रोंगटे खड़े हो जाते।

सभी देख रहे थे कि इवान इल्यीच का मन खिन्न हो उठा है। वे उससे कहते: "अगर थक गये हो तो हम खेलना बन्द कर दें? तुम थोड़ा आराम कर लो।" आराम? उसे तो नाम को भी थकावट नहीं, वह तो बाज़ी ख़त्म करके उठेगा। सब लोग चुपचाप, मुंह लटकाये उसे देखते रहते। इवान इल्यीच जानता था कि वही इस उदासी का कारण है, पर वह इसे दूर नहीं कर सकता। मेहमान खाना खाते। उसके बाद वे चले जाते। इवान

इल्यीव अकेला रह जाता और सोचता कि उसके जीवन में ज़हर घुल रहा है और वह औरों के जीवन में भी ज़हर घोल रहा है। यह ज़हर कम होने के बजाय उसके अन्दर अधिकाधिक फैलता जा रहा है।

वह सोने के लिए बिस्तर पर लेट जाता। पर एक तो कमर में दर्द, दूसरे मन भयाकुल, बिस्तर पर लेटता, मगर सो न पाता, देर तक दर्द के कारण परेशान रहता। पर सुबह उठना ही होता, कपड़े पहनकर कचहरी जाना, वहां काम करना और लिखना-पढ़ना तो पड़ता ही। अगर वह कचहरी न जाता तो चौबीसों घण्टे उसे घर में गुज़ारने पड़ते, जहां एक एक घण्टा निरी यातना होता। उसे इसी भांति जिये जाना है। मुसीबत सिर पर मंडराने लगी है और वह बिल्कुल अकेला है। एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं, जो उसे समझता हो या उसके प्रति सहानुभूति रखता हो।

(५)

ऐसे ही एक-दो महीने गुज़र गये। नया साल शुरू होने के कुछ ही दिन पहले उसका साला उनसे मिलने आया। जिस वक़्त वह घर पहुंचा इवान इल्यीच कचहरी में था। प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना बाज़ार गयी हुई थी। घर लौटने पर इवान इल्यीच ने देखा कि उसके पढ़ने के कमरे में उसका साला खड़ा अपना सामान खोल रहा है। कितना हट्टा-कट्टा आदमी है! इवान इल्यीच के क़दमों की आहट पाते ही उसने सिर ऊपर उठाया और इवान इल्यीच पर नज़र पड़ते ही उसकी ओर अवाक् देखता रह गया। उसके यों देखने से ही इवान इल्यीच सब कुछ समझ गया। उसका साला कुछ कहते-कहते ही चुप्पी लगा गया। इससे बात की और भी पुष्टि हो गयी।

"बहुत बदल गया हूं क्या?"

"हां... कुछ बदल गये हैं।"

इवान इल्यीच जानना चाहता था कि उसमें क्या परिवर्तन आया है, लेकिन हज़ार कोशिश करने पर भी वह अपने साले के मुंह से कुछ नहीं कहलवा सका। प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना आयी तो साला उसके पास गया। इवान इल्यीच ने दरवाज़ा बन्द कर लिया और आदम-क़द शीशे में अपना चेहरा देखने लगा, पहले एक तरफ़ से, फिर सामने से। इसके बाद वह

एक तसवीर उठा लाया, जो उसने अपनी पत्नी के साथ खिंचवाई थी और उसके साथ अपने चेहरे की तुलना करने लगा। भयानक परिवर्तन हो गया था। कोहनी तक आस्तीन चढ़ाकर उसने अपनी बांह को देखा और आस्तीन नीचे कर ली। फिर निढाल होकर सोफ़े पर ढह गया। उसके चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं।

"नहीं, नहीं, मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए," उसने कहा और उठकर खड़ा हो गया। मेज़ के पास जाकर उसने एक मुक़द्दमे के काग़ज़ात निकाले और उन्हें पढ़ने लगा, परन्तु पढ़ नहीं पाया। फिर दरवाज़ा खोलकर वह हॉल में चला गया। बैठक का दरवाज़ा बन्द था। वह दबे पांव दरवाज़े के पीछे जा खड़ा हुआ और कान लगाकर सुनने लगा।

"नहीं, तुम बहुत बढ़ा-चढ़ाकर कह रहे हो," प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना कह रही थी।

"बढ़ा-चढ़ाकर? क्या तुम देख नहीं रही हो? उसकी शक्ल तो मुर्दे की सी हो रही है। उसकी आंखें तो देखो। उनमें जान ही नहीं। उसे हो क्या गया है?"

"कोई कुछ नहीं जानता। निकोलायेव (एक दूसरे डाक्टर) ने कुछ बताया था, पर मुझे मालूम नहीं... लेश्चेतीत्स्की (प्रसिद्ध डाक्टर) ने बिल्कुल दूसरी बात कही।"

इवान इल्यीच वहां से हट गया। सीधे अपने कमरे में जाकर लेट गया और सोचने लगा, "गुर्दा, तैरता हुआ गुर्दा।" गुर्दों के बारे में डाक्टरों ने जो कुछ बतलाया था, उसे वह याद आ गया। एक गुर्दा अपनी जगह से अलग हो गया था और अब तैरता फिरता था। अपनी कल्पना में उसने गुर्दे को पकड़ा और अपनी जगह पर लगा दिया। कितना आसान लगता था उसे यह काम! "मैं अभी प्योत्र इवानोविच के पास जाऊंगा।" (वही दोस्त, जिसका एक डाक्टर दोस्त था)। उसने घंटी बजायी, गाड़ी तैयार करने का हुक्म दिया और जाने की तैयारी करने लगा।

"कहां जा रहे हो, Jean?" उसकी पत्नी ने उदास लहजे में पूछा। आज उसकी आवाज़ में एक असाधारण दयालुता थी।

यह असाधारण दयालुता उसे बुरी लगी। उसने अपनी पत्नी की ओर आंखें तरेरकर देखा।

"प्योत्र इवानोविच के पास। ज़रूरी काम है।"

वह अपने मित्र के पास गया, जिसका एक डाक्टर-मित्र था और दोनों डाक्टर से मिलने गये। डाक्टर घर पर ही था। इवान इल्योच बड़ी देर तक उसके साथ बातें करता रहा।

डाक्टर ने जब उसे बताया कि उसके अन्दर कौन कौन सी शारीरिक तथा अवयव सम्बन्धी तबदीलियां हो रही हैं, तो सारी बात स्पष्ट रूप से इवान इल्यीच की समझ में आ गयी।

अन्धान्त्र में कोई चीज थी, कोई बिल्कुल छोटी सी, अनाज के दाने के बराबर। इसका इलाज हो सकता था। एक अंग की क्रिया को थोड़ा मज़बूत करने और दूसरे की क्रिया को थोड़ा कमज़ोर करने की ज़रूरत थी और साथ ही इस चीज को वहीं घुला देना था। ऐसा करने से सब ठीक हो जायेगा।

इवान इल्यीच, भोजन के समय से थोड़ा बाद घर पहुंचा। उसने खाना खाया और कुछ देर तक ख़ुशी ख़ुशी बातें करता रहा। उसका जी नहीं चाहता था कि उठकर जाये और अपने कमरे में काम करे। आख़िर वह उठा, पढ़ने वाले कमरे में जाकर बैठ गया और काम देखने लगा। कुछेक मुकद्दमों के काग़ज़ात उसने देखे, अपने काम में ख़ूब ध्यान लगाया, पर सारा वक़्त उसके मन में एक बात चक्कर काटती रही कि एक बड़ा ही ज़रूरी और निजी मामला है, जिस पर विचार करना उसने स्थगित कर रखा है। इस काम से निबटकर उस पर विचार करना होगा। काम समाप्त हुआ तो उसे याद आया कि वह निजी मामला क्या था: वह था अपने अन्धान्त्र पर सोच-विचार करना। पर उसने अपना ध्यान उस तरफ़ से हटा लिया। इसके विपरीत वह बैठक में चाय पीने चला गया। वहां पर मेहमान बैठे थे, हंसी-मज़ाक़ और गाना-बजाना चल रहा था। उन्हीं मेहमानों में जांच-मैजिस्ट्रेट भी था, जिसे वे अपनी बेटी के लिए अच्छा वर समझते थे। प्रस्कोव्या प्योदोरोव्ना के अनुसार इवान इल्यीच उस शाम अन्य दिनों की तुलना में अधिक ख़ुश नज़र आता था। पर इवान इल्योच एक मिनट के लिए भी यह नहीं भूल पाया था कि उसने अपने अन्धान्त्र के बारे में विचारना स्थगित कर रखा है। ग्यारह बजे उसने सब से विदा ली और अपने कमरे में चला गया। जब से वह बीमार पड़ा था उसने अपने पढ़ने वाले कमरे के बग़लवाले एक छोटे से कमरे में सोना शुरू कर दिया था।

वह अन्दर गया, कपड़े उतारे, ज़ोला का एक उपन्यास पढ़ने के लिए उठाया, पर उसे पढ़ने के बजाय अपने विचारों में खो गया। उसे ख़्याल आया, जैसे उसके अन्धान्त्र की चिर-वांछित चिकित्सा हो चुकी है। जिस दाने को घुलना था वह घुल चुका है, जिसे निकालना था वह निकाला जा चुका है और अब उसका शरीर फिर नियमित रूप से काम कर रहा है। "बेशक, हमारा काम यही है कि हम प्रकृति की मदद करें," उसने अपने आप से कहा। यह कहते ही उसे अपनी दवाई याद आयी। वह उठ बैठा, दवाई पी, फिर पीठ के बल लेट गया और सोचने लगा कि यह दवाई कितनी अच्छी है, इसने झट से उसका दर्द दूर कर दिया है। "केवल मुझे चाहिए कि मैं इसे बाक़ायदा पीता रहूं और हानिकारक चीज़ों से बचने की कोशिश करूं। मैं तो अभी से अपने को बेहतर, कहीं बेहतर महसूस करने लगा हूं।" उसने अपनी कमर को दबाया। हाथ लगाने पर ज़रा भी दर्द नहीं हुआ। "मुझे तो कुछ भी महसूस नहीं होता। मैं सचमुच पहले से बहुत अच्छा हो गया हूं।" उसने बत्ती बुझा दी और करवट बदली। उसका अन्धान्त्र ठीक हो रहा था, उस चीज़ को घुला रहा था। सहसा उसे फिर उस दबे हुए दर्द का आभास हुआ–धीमा धीमा, गम्भीर, निरन्तर। मुंह का स्वाद भी पहले की तरह बिगड़ गया। उसका दिल बैठ गया और सिर चकराने लगा। "हे भगवान, हे भगवान!" वह बुदबुदाया, "यह फिर शुरू हो गया। यह कभी ख़त्म नहीं होगा।" सहसा हर चीज़ उसे दूसरे ही रंग में नज़र आने लगी। "अन्धान्त्र... गुर्दा। यह अन्धान्त्र की बात नहीं, गुर्दे की बात नहीं। यह तो ज़िन्दगी और... मौत की बात है। एक वक़्त था जब ज़िन्दगी थी, और अब वह ख़त्म होती जा रही है, ख़त्म होती जा रही है और मैं इसे किसी तरह भी रोक नहीं सकता। मैं क्यों अपने को धोखा दूं? मेरे सिवाय सभी लोग यह जानते हैं कि मैं मर रहा हूं। अब कुछ हफ़्तों, कुछ दिनों, हो सकता है कुछ घड़ियों तक की बात रह गयी है। किसी वक़्त रोशनी थी, अब अंधेरा हो गया है। पहले मैं यहां था, अब मैं वहां जा रहा हूं। कहां जा रहा हूं?" उसका सारा बदन पसीने से तर हो गया और उसके लिए सांस तक लेना कठिन हो गया। अपने दिल की धड़कन के अलावा उसे कुछ भी सुनाई नहीं देता था।

"मेरा अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। रहेगा क्या? कुछ भी नहीं।

मरकर मैं कहां जाऊंगा? क्या यह सचमुच मौत है? उफ़, मैं मरना नहीं चाहता!" यह मोमबत्ती जलाने के लिए झट से उठा, कांपते हाथों से मोमबत्ती ढूंढ़ने लगा, बत्ती और शमादान उसके हाथ से छूटकर फ़र्श पर जा गिरे और वह फिर बिस्तर पर निढाल होकर लेट गया। आंखें फाड़ फाड़कर अंधेरे में देखते हुए वह बड़बड़ाया, "क्या फ़रक़ पड़ता है, सब एक ही बात है। मौत! हां, मौत! ये लोग नहीं जानते और ये जानना भी नहीं चाहते, इन्हें मेरे साथ कोई हमदर्दी नहीं। ये गाने-बजाने में मस्त हैं।" (बन्द दरवाज़े में से उसे गाने की आवाज़ और साथ में पियानो की धुन सुनाई दी।) "इनकी बला से, पर शीघ्र ही ये भी मरेंगे। पागल कहीं के! पहले मैं जाऊंगा, फिर इनकी बारी आयेगी। मौत इनके सिरहाने भी खड़ी होगी। अब ये ख़ुशियां मना रहे हैं, पशु कहीं के!" क्रोध से उसका गला रुंधने लगा। अपने घोर विषाद को वह बयान नहीं कर सकता था। उसे विश्वास नहीं होता था कि हरेक व्यक्ति को इस भयानक आतंक का शिकार होना पड़ता है। वह बिस्तर पर से थोड़ा उठा।

"कहीं कोई गड़बड़ है। मेरा मन ठिकाने नहीं है, उसे ठिकाने लाना चाहिए और फिर सारी समस्या पर शुरू से विचार करना चाहिए।" और उसने विचार करना शुरू किया। "मेरी बीमारी शुरू कहां से हुई? मेरी कमर में ठोकर लगी, पर उस समय मुझे कोई तकलीफ़ नहीं हुई, दूसरे दिन भी नहीं। मामूली सा दर्द उठा, फिर वह बढ़ने लगा, उसके बाद मैं डाक्टरों के पास जाने लगा, फिर मैं निराश और उदास सा रहने लगा। फिर तरह तरह के डाक्टरों से परामर्श लेने लगा। सारा वक़्त मैं कगार के अधिकाधिक निकट पहुंचता जा रहा था। मेरी शक्ति क्षीण होती गयी। कगार के और निकट। और मैं यहां पर पहुंचा हूं, हड्डियों का ढांचा रह गया हूं। मेरी आंखों में चमक नहीं रही। मौत। और मैं अब भी अपने अन्धान्त्र के बारे में सोचता हूं। सोचता हूं कि मैं अपनी अन्तड़ियों को ठीक कर लूंगा। और मौत सामने खड़ी है। क्या सचमुच मौत आ पहुंची है?" भय ने उसे फिर से जकड़ लिया। वह हांफने लगा, फिर दियासलाई टटोलने के लिए आगे की ओर झुका, पर पलंग के साथ रखी तिपाई के साथ उसकी कोहनी टकरायी। तिपाई बीच में पड़ी थी। उसे दर्द हुआ, और गुस्से मे आकर उसने ज़ोर से उस पर घूंसा मारा। तिपाई गिर पड़ी। गहरी निराशा

में वह हांफता हुआ फिर पीठ के बल लेट गया। उसका जी चाहता था कि वह इसी घड़ी मर जाये।

मेहमान अपने अपने घरों को जाने लगे थे। जब तिपाई गिरी तब प्रस्कोव्या फ्योदोरोव्ना उन्हें विदा कर रही थी। आवाज सुनकर वह कमरे में आयी।

"क्या हुआ?"

"कुछ नहीं। अचानक मुझसे तिपाई गिर गयी।"

वह बाहर गयी और एक मोमबत्ती जलाकर लायी। उसने देखा, वह बिस्तर पर लेटा हुआ उसे एकटक देखे जा रहा है और हांफ रहा है, मानों कोई लम्बा फ़ासला दौड़कर आया हो।

"क्या बात है, Jean?"

"न... नहीं, कुछ नहीं, मुझसे गिर गयी है।" ("मैं क्यों इसे कुछ बताऊं? यह कभी नहीं समझेगी," उसने सोचा।)

और वह नहीं समझी। उसने तिपाई उठायी, मोमबत्ती रखी और तेजी से बाहर चली गयी। उसे अपने मेहमानों को विदा करना था।

जब वह लौटकर आयी तो उसने देखा कि वह अब भी पीठ के बल लेटा हुआ छत को ताके जा रहा है।

"क्या बात है? क्या तुम्हारी तबीयत पहले से ज्यादा ख़राब है?"

"हां।"

उसने सिर हिलाया और बैठ गयी।

"मैं सोचती हूं, Jean, क्या डाक्टर लेश्चेतीत्स्की को घर पर बुलाना ठीक नहीं होगा?"

एक प्रसिद्ध डाक्टर को बुलाने का मतलब है बहुत सा पैसा ख़र्च करना। एक व्यंगभरी मुस्कान उसके होंठों पर आयी और उसने इनकार कर दिया। कुछ देर तक वह बैठी रही, फिर उसके पास जाकर उसने उसके माथे को चूम लिया।

उसके इस चुम्बन से इवान इल्यीच का हृदय घृणा से भर उठा। बड़ी मुश्किल से वह अपने को रोक पाया, वरना वह उसे धकेलकर परे हटा देता।

"तो मैं अब जाती हूं। भगवान करे कि तुम्हें नींद आ जाये।"

"हां, जाओ।"

इवान इल्यीच देख रहा था कि वह मर रहा है। वह हर वक़्त निराश रहने लगा।

उसका दिल जानता था कि वह मर रहा है। परन्तु न केवल उसके लिए इस विचार का अभ्यस्त होना कठिन था, बल्कि यह विचार उसकी पकड़ में ही न आता था, बिल्कुल पकड़ में न आता था।

पढ़ाई के दिनों में उसने कीज़ेवेटर के तर्कशास्त्र में यह संकेतानुमान पढ़ा था: "केयस मनुष्य है, सब मनुष्य नश्वर होते हैं, इसलिए केयस भी नश्वर है।" इसके बाद वह सारी उम्र इस संकेतानुमान को केवल केयस के सम्बन्ध में ही सत्य मानता आया था, अपने सम्बन्ध में नहीं। केयस मनुष्य था, केवल भाववाचक अर्थों में, इसलिए संकेतानुमान उसी पर लागू होता था। परन्तु इवान इल्यीच केयस नहीं था, भाववाचक अर्थों में मनुष्य नहीं था, वह अन्य मनुष्यों से सदैव ही बिल्कुल भिन्न रहा है। माता-पिता के लिए यह नन्हा वान्या रहा था, अपने दोनों भाइयों मीत्या और वोलोद्या, कोचवान और आया के लिए भी। अपने खिलौनों तक के लिए और कात्या के लिए भी वह नन्हा वान्या ही था। वही वान्या बचपन और लड़कपन और युवावस्था के सभी सुख-दुःखों और उन्मादों को लांघकर बड़ा हुआ था। क्या केयस भी कभी उस प्यारी गन्ध को जान पाया था, जो चमड़े के उस गेंद से आती थी, जिसे वान्या इतना प्यार करता था? क्या केयस ने भी कभी अपनी मां के हाथ को इतनी भावुकता से चूमा था, या उसके रेशमी कपड़ों की सरसराहट उसे इतनी प्यारी लगी थी? क्या केयस ने भी कभी स्कूल में मिठाई की टिकियों के लिए ऊधम मचाया था? या कभी किसी युवती से इतना प्रेम किया था? या इतनी योग्यता से कचहरी में किसी मुक़द्दमे की अध्यक्षता की थी?

केयस सचमुच नश्वर था और यह युक्तिसंगत और उचित ही था कि वह मर जाये, परन्तु मेरी, वान्या की, इवान इल्यीच की, उसके सभी विचारों और भावनाओं को देखते हुए, उसकी बात दूसरी थी। उसका मरना उचित और न्यायसंगत नहीं हो सकता। यह विचार ही बड़ा भयानक था।

ये सब विचार उसके मन में उठे।

"यदि मेरी किस्मत में केयस की तरह मरना ही बदा था, तो मुझे इसका पता चल जाता, अन्दर से कोई आवाज मुझे बता देती। पर मुझे ऐसी किसी बात का भास नहीं हुआ। मैं हमेशा जानता था और मेरे दोस्त भी जानते थे कि मैं उस मिट्टी का बना हुआ नहीं हूं, जिसका केयस बना था। परन्तु अब देखो, यह क्या होने जा रहा है?" उसने मन ही मन कहा, "परन्तु यह नहीं हो सकता, कदापि नहीं हो सकता। असम्भव है। तिस पर भी यह होने जा रहा है। यह कैसे हो सकता है? इसको कोई कैसे समझे?"

वह नहीं समझ पाया, और उसने इस विचार को झूठा, भ्रामक और कष्टपूर्ण मानकर मन से निकालने की कोशिश की। और इसके स्थान पर सच्चे और स्वस्थ विचारों को जागृत करने की चेष्टा की। पर यह विचार केवल विचार मात्र ही न था, वह तो यथार्थता थी, और यह बार बार उसके सामने आ खड़ा होता था।

इस विचार के स्थान पर उसने एक एक करके कई अन्य विचारों को लाने की कोशिश की, इस आशा से कि इनसे उसे कोई सहारा मिलेगा। उसने फिर पहले ढंग से सोचने की चेष्टा की, जिसकी बदौलत वह मृत्यु को भूले रहता था। पर अजीब बात है जो बातें पहले मृत्यु के विचार को एक पर्दे की तरह ढके रहती थीं, उसे छिपाये रहती थीं और यहां तक कि उसके अस्तित्व तक का पता नहीं लगाने देती थीं, अब उसे छिपाने में असमर्थ थीं। पिछले कुछ दिनों से इवान इल्यीच उसी विचार-क्रम को फिर से अपनाना चाहता था, जिससे मौत उसकी आंखों के सामने से ओझल हुई रहती थी। मिसाल के तौर पर वह मन ही मन कहता, "मुझे अपने को काम में खो देना चाहिए। एक समय था जब काम के अतिरिक्त मेरे जीवन का कोई और उद्देश्य नहीं था।" इस तरह वह मन से सभी संशयों को निकालता हुआ कचहरी जाता। वहां आकर मित्रों से बातचीत करता, सदा की भांति उनके बीच कुर्सी पर बैठ जाता, बलूत की बनी कुर्सी की बांहों को अपने दुबले-पतले हाथों से पकड़ता, बैठते हुए कचहरी में एकत्रित लोगों को, सदा की भांति, एक खोई-खोई और सोच में डूबी नजर से देखता, अपनी बगल में बैठे आदमी की ओर झुकता, कचहरी के कागजात इधर-उधर उठाकर रखता, फुसफुसाकर कुछ कहता, फिर सहसा तनकर और भौंहें चढ़ाकर वह परिचित वाक्य कहता, जिससे अदालत की कार्यवाही

शुरू होती है। पर काम के ऐन बीच में, भले ही मुकद्दमे के किसी भी हिस्से की सुनवाई हो रही हो, कमर का वह दर्द फिर उठ खड़ा होता और अन्दर ही अन्दर उसे कुरेदने लगता। इवान इल्यीच उसकी ओर कोई विशेष ध्यान न देना चाहता, उसे मन से निकालने की चेष्टा करता, पर वह वैसे का वैसा अपना नश्तर चलाता रहता। मौत मानो उसके ऐन सामने आकर खड़ी हो जाती और इवान इल्यीच की आंखों से आंखें मिलाकर एकटक देखने लगती। इवान इल्यीच घबड़ा उठता, उसकी आंखों की चमक मन्द पड़ जाती और वह एक बार फिर मन ही मन पूछता, *"क्या यही एकमात्र सत्य है?"* और उसके साथियों और उसके नीचे काम करनेवाले लोगों को यह देखकर दुःख और आश्चर्य होता कि यह आदमी, जो सदैव इतना प्रतिभावान और बारीकियों को पकड़नेवाला न्यायाधीश रहा है, अब घबराने और ग़लतियां करने लगा है। वह सिर झटकता, अपने को संभालता और जैसे तैसे कार्यवाही को अन्त तक निभाता। फिर घर लौट आता। परन्तु सारा वक़्त यह निराशापूर्ण विचार उसके मन पर छाया रहता कि जिस चीज़ को वह अपने आपसे छिपाना चाहता है, उसे क़ानूनी कार्यवाही भी नहीं छिपा सकती। उससे बचने के लिए किसी भी तरह का अदालती काम उसकी कोई सहायता नहीं कर सकता। सबसे भयानक बात यह थी कि वह चीज़ उसका सारा ध्यान अपनी ओर खींच लेती थी, उसे कुछ करने नहीं देती थी, इसके विपरीत, केवल एकटक इसकी ओर, ऐन इसकी आंखों में देखती रहती थी। घोर यन्त्रणा में गलते रहने के अलावा वह कुछ न कर सकता था।

मन की इस भयानक स्थिति से छुटकारा पाने के लिए उसने अन्य सान्त्वनाओं, अन्य ओटों को ढूंढ़ने की कोशिश की। उसे अपने को छिपाने के लिए कोई ओट मिल जाती और कुछ देर के लिए उसे आराम मिलता। पर शीघ्र ही वह भी फट जाती, या पारदर्शी हो उठती, मानो मौत हर चीज़ को बेध डालती हो और संसार की कोई भी चीज़ उसे रोक न सकती हो।

इन्हीं पिछले दिनों में कभी कभी वह अपनी बैठक में जाता, जिसे उसने इतनी मेहनत से सजाया था। उसी बैठक में वह गिरा था, इसी की ख़ातिर वह अपनी ज़िन्दगी से हाथ धो रहा था। इस विचार से उसके होंठों पर एक कटु मुस्कान आ जाती। उसे यकीन था कि जिस दिन वह गिरा

था, उसी दिन से उसकी बीमारी शुरू हुई थी। उसी बैठक में वह गया और देखा कि साफ़ चमचमाती मेज़ पर एक गहरी खरोंच आ गयी है। यह कैसे हुआ? उसे कारण का पता चला गया। तस्वीरों के अलबम के क्लिप का एक सिरा एक जगह से मुड़ गया है। क्लिप कांसे का बना था। उसने अलबम को उठाया। बड़ा महंगा अलबम था और इसमें उसने बड़े ध्यान से स्वयं तस्वीरें लगायी थीं। बाहर बक्सुआ टेढ़ा हो गया था, अन्दर तस्वीरें उलट-पलट पड़ी थीं, उसे अपनी बेटी और उसकी सहेलियों की लापरवाही पर बेहद गुस्सा आया। उसने बड़ी मेहनत से तस्वीरों को ठीक तरह लगाया और क्लिप को सीधा किया।

फिर उसे ख़्याल आया कि क्यों न अलबमों सहित इस सारे établissement* को उठाकर कमरे के दूसरे कोने में रख दिया जाये, जहां गमले रखे हैं। उसने चोबदार को आवाज़ दी। उसकी पत्नी और बेटी मदद करने के लिए आ गयीं। पर तीनों में मतभेद हो गया, उन्हें यह तबदीली पसन्द नहीं आयी। इवान इल्यीच ने उन्हें समझाने की कोशिश की और फिर झल्ला उठा। परन्तु यह अच्छा ही हुआ, क्योंकि इससे वह मौत को भूले रहा, वह उसके ध्यान से ओझल रही।

पर ज्यों ही वह मेज़ को स्वयं वहां से हटाने लगा, तो उसकी पत्नी ने कहा, "तुम ऐसा मत करो। नौकरों को करने दो। कहीं तुम्हें फिर चोट न लग जाये।" और सहसा वह फिर पर्दे के पीछे से निकलकर सामने आ खड़ी हुई। ऐन उसकी आंखों के सामने। उसका ख़्याल था कि वह ओझल हो जाएगी। पर तभी उसे अपने कमर-दर्द का फिर भास होने लगा। वह दर्द अब भी वहां पर था, अब भी उसे अन्दर ही अन्दर कुरेदे जा रहा था। वह उसे भूल नहीं सकता था। और वह पर्दों के पीछे से उसकी ओर साफ़ तौर पर ताके जा रही थी। यह सब क्या है?

"क्या यह सच है कि इन्हीं पर्दों के निकट मैंने अपनी मौत को बुलाया? उसी तरह, जिस तरह किले के फाटक पर धावा बोलते समय सैनिक प्राण खो बैठता है। क्या यह सच नहीं? उफ़, कितनी भयानक, कितनी बेहूदा बात है यह! यह नहीं हो सकता! कभी नहीं हो सकता... पर यह सच है।"

---

* साज-सामान (फ़्रेंच)।

वह अपने पढ़ने के कमरे में जाकर लेट गया। पर वहां फिर उसे अपने सामने खड़े पाया। ऐन सामने, और वह उसे हटाने में बिल्कुल असमर्थ था, कुछ नहीं कर सकता था। वह केवल यही कुछ कर सकता था कि उसके बारे में सोचता जाये और उसकी रगों में ख़ून सूखता जाये।

(७)

यह कहना कठिन है कि ऐसा किस तरह हुआ, क्योंकि यह हुआ बहुत धीरे-धीरे और अदृश्य ढंग से, पर बीमारी के तीसरे महीने में सभी लोग—उसकी पत्नी, बेटी, बेटा, नौकर, मित्र, डाक्टर और विशेषकर स्वयं इवान इल्यीच—यह जान गये कि अब अन्य लोगों की उसमें केवल इतनी ही रुचि रह गयी है कि वह कब अपनी जगह ख़ाली करता है, कितनी जल्दी जीवितों को अपनी इस स्थिति की घुटन से छुटकारा दिलाता है और स्वयं अपनी यन्त्रणाओं से मुक्ति पाता है।

उसे अब दिन-ब-दिन कम नींद आने लगी। वे उसे थोड़ी थोड़ी मात्रा में अफ़ीम और मार्फ़ीन के इंजेक्शन देने लगे। पर इससे कुछ आराम न आया। शुरू शुरू में तो उसे इस अर्द्धचेतना से, दबे दबे दर्द से कुछ राहत मिलती, क्योंकि यह एक नया अनुभव था, पर शीघ्र ही उसे उतनी ही, बल्कि पहले से भी अधिक यन्त्रणा पहुंचने लगी। अब यह अर्द्धचेतना दर्द से बदतर हो रही थी।

डाक्टरों के आदेशानुसार उसके लिए विशेष प्रकार का भोजन तैयार किया जाने लगा, पर वह उसे अधिकाधिक अरुचिकर लगता, उससे उसे तीव्र घृणा होने लगी।

इसी तरह उसका पेट साफ़ रखने के लिए विशेष व्यवस्था की गयी। उसके लिए यह एक नयी यन्त्रणा बन गयी, जो उसे हर रोज़ सहनी पड़ती थी। कुछ तो इसकी गन्दगी, बदबू और अटपटेपन के कारण और कुछ इसलिए कि एक दूसरे आदमी को इस काम के लिए उसके साथ रहना पड़ता।

पर इस अप्रिय काम में एक सान्त्वना भी थी। भण्डारे में काम करनेवाला नौकर गेरासिम कमोड उठाने के लिए आया करता था।

गेरासिम एक साफ़-सुथरा, ताज़ादम देहाती युवक था, जिसे शहर की ख़ुराक ख़ूब ठीक बैठी थी। वह हर वक़्त प्रसन्नचित्त और खिला खिला

रहता। शुरू शुरू में तो जब इवान इल्यीच ने ठेठ रूसी पोशाक पहने इस साफ़-सुथरे लड़के को इतना घृणित काम करते देखा तो उसे अच्छा न लगा।

एक बार इवान इल्यीच कमोड पर से उठा तो उसमें इतनी भी ताकत न थी कि वह अपना पतलून भी ऊपर चढ़ा सके। वह आराम कुर्सी पर ढह पड़ा। लेटे लेटे भयातुर आंखों से वह अपनी नंगी पिंडलियों को देखने लगा। उन पर से उसके पिलपिले पट्ठे लटकने लगे थे।

उसी वक़्त गेरासिम, हल्के हल्के, किन्तु दृढ़ क़दम रखता हुआ अन्दर आया। उससे जाड़े की ताज़गी तथा कोलतार की गन्ध आ रही थी, जो वह अपने मोटे मोटे बूटों पर मलकर हटा था। उसने साफ़-सुथरी सूती कमीज़ पहन रखी थी और उसके ऊपर घर के बुने साफ कपड़े का लबादा डाल रखा था। क़मीज़ की आस्तीनें चढ़ी हुई थीं, जिससे उसकी तरुण हृष्ट-पुष्ट बांहें नज़र आ रही थीं। शायद इस डर से कि उसके अपने चेहरे को देखकर, जिस पर जीवन का आनन्द फूटा पड़ता था, इवान इल्यीच अपने को तिरस्कृत महसूस न करे, वह उसकी नज़र बचाता हुआ सीधा कमोड के पास जा पहुंचा।

"गेरासिम," इवान इल्यीच ने क्षीण सी आवाज़ में पुकारा।

गेरासिम ज़रा चौंका, उसे डर लगा कि शायद उससे कोई भूल हो गयी है और उसने जल्दी से अपना तरुण, सरल, नम्र और दयालु चेहरा, जिस पर मसें भीग चली थीं, रोगी की ओर किया।

"क्या है, हुज़ूर?"

"तुम्हें यह काम बहुत बुरा लगता होगा। मुझे माफ़ करना। मैं यह स्वयं कर नहीं सकता।"

"आप क्या कहते हैं, हुज़ूर?" और गेरासिम मुस्कराया, जिससे उसकी आंखें और सफ़ेद, मज़बूत दांत चमक उठे, "मैं क्यों न आपकी मदद करूं? आप बीमार जो हैं।"

अपने मज़बूत, दक्ष हाथों से उसने अपना रोज़ का काम किया, और दबे पांव कमरे से बाहर निकल गया। पांच मिनट बाद वह वैसे ही दबे पांव फिर वापिस आया।

इवान इल्यीच अब भी आराम कुर्सी पर पड़ा हुआ था।

लड़के ने साफ़ कमोड वहां रख दिया। इवान इल्यीच ने कहा:

"गेरासिम, जरा इधर आना भय्या, मेरी थोड़ी मदद कर देना।' गेरासिम मालिक की ओर गया। "मुझे उठाओ। मैं ख़ुद नहीं उठ सकता। द्मीत्री यहां पर नहीं है। मैंने उसे बाहर भेज दिया था।"

गेरासिम नीचे को झुका और अपने मज़बूत हाथों से – उसका स्पर्श इतना ही हल्का था, जितने कि उसके क़दम – उसने इवान इल्यीच को धीरे से और बड़ी कुशलता से उठाया, फिर एक हाथ से उसे थामे रखकर दूसरे हाथ से उसका पतलून चढ़ा दिया। जब वह उसे फिर आराम कुर्सी पर बैठाने लगा, तो इवान इल्यीच ने उसे सोफ़े पर ले चलने को कहा। गेरासिम ने उसे बड़ी आसानी से सोफ़े पर ले जाकर बिठा दिया।

"बड़ी मेहरबानी। तुम कितने समझदार हो, कितना अच्छा काम करते हो।"

गेरासिम फिर मुस्कराया और बाहर जाने को हुआ। परन्तु इवान इल्यीच को उसका वहां ठहरना इतना भला लग रहा था कि उसने उसे जाने नहीं दिया।

"जरा वह कुर्सी तो इधर ले आओ। नहीं, वह नहीं, साथ वाली, मेरे पांव उस पर रख दो। पांव ऊंचे रहने से मुझे थोड़ा आराम मिलता है।"

गेरासिम कुर्सी ले आया। हल्की सी भी आहट किये बिना उसने उसे फ़र्श पर टिका दिया और इवान इल्यीच के पांव उस पर रख दिये। इवान इल्यीच को लगा कि जब गेरासिम ने उसके पांव उठाये तो उसे कुछ राहत मिली थी।

"मेरे पांव ऊंचे रहें तो मैं बेहतर महसूस करता हूं। वहां से तकिया उठा लाओ और मेरे पांव के नीचे रख दो।"

गेरासिम ने वैसा ही किया। उसने मरीज़ के पांव उठाये और उनके नीचे तकिया रख दिया। इस बार भी जब गेरासिम ने उसके पांव उठाये तो उसे अच्छा लगा। जब नीचे रख दिये तो तबीयत ख़राब महसूस होने लगी।

"गेरासिम, क्या इस वक़्त तुम्हें बहुत काम है?"

"नहीं तो, हुज़ूर, बिल्कुल नहीं।" शहरी लोगों से गेरासिम ने सीख लिया था कि बड़ों से कैसे बात करनी चाहिए।

"तुम्हें और क्या काम करना है?"

"कुछ भी नहीं, हुज़ूर। मैंने सब काम कर लिया है। कल के लिए थोड़ी लकड़ी चीरना बाक़ी है, बस।"

"क्या तुम थोड़ी देर के लिए मेरे पांव ऊपर को उठाये रख सकते हो?"

"क्यों नहीं, हुज़ूर।" और गेरासिम ने उसके पांव ऊपर को उठा लिये। इवान इल्यीच को लगा जैसे इस स्थिति में उसे बिल्कुल ही दर्द महसूस नहीं हो रहा है।

"लकड़ी का क्या होगा?"

"आप चिन्ता न करें, हुज़ूर। मैं वक़्त निकाल लूंगा।"

इवान इल्यीच ने गेरासिम से बैठने को कहा। पांव उठवाये हुए वह उससे बातें करने लगा। भले ही यह विचित्र बात जान पड़े, पर उसे सचमुच महसूस हो रहा था कि जब तक गेरासिम उसके पैर थामे रहा, उसकी तबीयत अच्छी रही।

उसके बाद इवान इल्यीच कभी कभी गेरासिम को अपने पास बुलाकर उसके कन्धों पर अपने पैर रखवा लेता। उस लड़के के साथ बातें करने में उसे बड़ा सुख मिलता। गेरासिम जो भी काम करता, इतने शौक से, इतने सहज और सरल ढंग से, इतनी हंसी-ख़ुशी के साथ कि इवान इल्यीच का दिल भर आता। घर में गेरासिम को छोड़कर और लोगों को स्वस्थ, हृष्ट-पुष्ट और प्रसन्नचित्त देखकर इवान इल्यीच को चिढ़ होती और गेरासिम को प्रसन्नचित्त और स्वस्थ देखकर चिढ़ने के बजाय उसे सन्तोष होता।

इवान इल्यीच को सबसे अधिक दुःख इस बात से होता कि सभी लोग उसके साथ झूठ बोलते हैं, कि वह केवल बीमार है, मर नहीं रहा, कि यदि वह चुपचाप डाक्टरों के आदेश का पालन करता जायेगा तो स्वस्थ हो जायेगा। वह भली भांति जानता था कि कुछ भी क्यों न किया जाये, उसकी स्थिति नहीं सुधरेगी, केवल उसकी यन्त्रणा बढ़ती जायेगी और अन्त में वह मर जायेगा। इस झूठ से उसे कष्ट होता। कोई भी इस झूठ को मानने के लिए तैयार न था। सभी जानते थे कि सच क्या है। वह स्वयं भी जानता था। फिर भी उसकी भयंकर स्थिति के कारण सभी इस झूठ को उस पर थोपते चले जा रहे थे। उसे मजबूर करना चाहते थे कि वह भी इस झूठ को सच मानने लगे। जब वह मौत के नाके पर जा पहुंचा है, उस समय उस पर यह झूठ थोपना उसकी मृत्यु की गम्भीर तथा

गरिमामयी क्रिया को ओछे स्तर पर ले आना था, उस ओछे स्तर पर, जिस पर लोग एक दूसरे के घर जाते हैं, भोजन करते हैं और बैठकों में बैठकर स्टरजन खाते हुए गप्पें हांकते हैं। यह सोचकर इवान इल्यीच को इतना कष्ट होता कि बयान से बाहर। और, अजीब बात है, कई बार जब लोग उसके साथ ऐसा ढोंग करते तो वह उन पर चीखते चीखते रह जाता, "झूठ मत बोलो! तुम भी जानते हो और मैं भी जानता हूं कि मैं मर रहा हूं। कम से कम झूठ बोलना तो बन्द कर दो!" पर यह कहने का साहस वह कभी भी नहीं जुटा पाया। उसे साफ़ नज़र आ रहा था कि उसके इर्द-गिर्द के लोग उसकी मृत्यु की गम्भीर, भयावह क्रिया को एक अप्रिय घटना समझते हैं, एक अशिष्टता मानते हैं (उसी भांति जैसे बैठक में आते ही बू छोड़ देनेवाले व्यक्ति को अशिष्ट माना जाता है), मानो वह शिष्टाचार के नियमों का उल्लंघन कर रहा हो, जिनका वह स्वयं आजीवन गुलाम रहा था। उसे लगता जैसे किसी को भी उसके प्रति सहानुभूति नहीं, क्योंकि कोई भी उसकी स्थिति को समझना नहीं चाहता। केवल एक ही आदमी था, जो उसकी स्थिति को समझता था और जिसके दिल में उसके प्रति सहानुभूति थी। वह गेरासिम था। इस कारण उसी एक आदमी को इवान इल्यीच अपने पास रखना भी चाहता था। कभी कभी गेरासिम सारी सारी रात उसके पांव थामे बैठा रहता और उसके कहने पर भी सोने न जाता। वह कहता: "इसकी चिन्ता न कीजिये, हुजूर, मैं बाद में सो लूंगा।" या फिर वह अधिक घनिष्ठता जताते हुए "आप" की जगह तुम का उपयोग करते हुए कहता, "तुम बीमार हो, मैं तुम्हारी सेवा क्यों न करूं?" ये शब्द सुनकर इवान इल्यीच को सन्तोष होता। गेरासिम ही एक ऐसा आदमी था, जो कभी झूठ नहीं बोलता था। उसके प्रत्येक काम से यह पता चलता था कि यथार्थ स्थिति को वही एक आदमी समझता है और उसे छिपाने की उसे कोई आवश्यकता नज़र नहीं आती। उसे इस बात का दुःख था कि बेचारे मालिक की शक्ति धीरे धीरे क्षीण हो रही है। एक बार इवान इल्यीच के अनुरोध पर कमरे से बाहर जाने को उसने तो साफ़ ही कह दिया:

"मैं क्यों न आपकी इस वक़्त मदद करूं? हम सभी को एक दिन मरना है।" इस तरह उसने बता दिया कि उसे इवान इल्यीच की सेवा करना बुरा नहीं लगता क्योंकि यह सेवा वह एक मरते आदमी की कर

रहा है। उसे इस बात की आशा थी कि जब उसका समय आयेगा तो कोई उसको भी सेवा करेगा।

झूठ के अतिरिक्त इवान इल्यीच के लिए सबसे अधिक अप्रिय बात यह थी कि उसके प्रति किसी को भी संवेदना न थी, जिसकी वह अपेक्षा करता था। बहुत देर तक कष्ट भोगने के बाद इवान इल्यीच को कभी कभी इस बात की तीव्र इच्छा होती कि एक बीमार बच्चे की भांति कोई उसे भी दुलारे। वह चाहता था कि बीमार बच्चे की भांति उससे भी कोई लाड़-प्यार की बातें करे, उसे चूमे, उसकी स्थिति पर आंसू बहाये। पर वह जानता था कि यह असम्भव है। एक तो वह अदालत का प्रतिष्ठित सदस्य था, उस पर बाल पकने जा रहे थे, यह कैसे हो सकता था? पर उसका दिल यही चाहता था। इस भावना से कुछ कुछ मिलती-जुलती सहानुभूति उसे गेरासिम से मिलती थी। इसी लिए जब गेरासिम उसके पास होता तो उसे सान्त्वना मिलती। इवान इल्यीच रोना चाहता था, वह चाहता था कि कोई उसे दुलराये, उसकी स्थिति पर आंसू बहाये। और लीजिये शेबेक उसे मिलने आता है। वह उसका सहकर्मी है। वह भी अदालत का सदस्य है। उसके सामने इवान इल्यीच रो नहीं सकता, उससे लाड़-प्यार की आशा नहीं कर सकता। इसलिए वह गम्भीर विद्वत्तापूर्ण मुद्रा बना लेता है और आवेदन-न्यायालय के पिछले निर्णय के महत्त्व पर अनजाने ही अपनी राय देने और बड़ी दृढ़ता से उसका पक्ष-पोषण करने लगता है। इवान इल्यीच के जीवन के अन्तिम दिनों को कटु बनाने के लिए जिस चीज़ ने सबसे अधिक विष घोला वह था यह झूठ, जो उसके भीतर और बाहर सब ओर फैला हुआ था।

(८)

सुबह हो चुकी थी। इसका पता इस बात से चलता था कि गेरासिम कमरे से बाहर जा चुका था और चोबदार प्योत्र अन्दर आ गया था। चोबदार ने बत्तियां बुझायीं, एक खिड़की पर से पर्दा हटाया और धीरे धीरे कमरे की सफ़ाई करने लगा। परन्तु सुबह हो या शाम, शुक्रवार हो या रविवार, इवान इल्यीच के लिए कोई फ़र्क़ न पड़ता था, सब दिन एक

जैसे थे। सारा वक़्त घातक पीड़ा टीसती रहती, क्षण भर के लिए भी न थमती; एक ही बात की चेतना उसे रहती कि किसी प्रटल नियम के अनुसार जीवन समाप्त होता जा रहा है, परन्तु अभी तक पूर्णतया समाप्त नहीं हो पाया और संसार की एकमात्र यथार्थता, मृत्यु, घृणित मृत्यु, धीरे धीरे उसकी ओर बढ़ती चली आ रही है। और इस पर—यह झूठ। उसे दिनों, हफ़्तों का ध्यान ही क्योंकर आ सकता था?

"आप चाय पियेंगे, हुज़ूर?"

("यह तो क़ायदे का पाबन्द है—सुबह के वक़्त सभी लोग चाय पीते हैं, इसलिए पूछ रहा है," इवान इल्यीच ने सोचा।)

"नहीं," उसने केवल इतना ही कहा।

"शायद हुज़ूर अब सोफ़े पर आराम करना चाहेंगे?"

("इसे कमरा साफ़ करना है और मैं इसकी सफ़ाई में बाधक बन रहा हूं। मैं कमरे को ख़राब कर रहा हूं, मेरे कारण चीज़ें अस्तव्यस्त हो रही हैं," इवान इल्यीच ने सोचा।)

"नहीं, मैं यहीं पर ठीक हूं," उसने कहा।

चोबदार थोड़ी देर तक और काम करता रहा। इवान इल्यीच ने अपना हाथ बढ़ाया। प्योत्र बड़ी उत्कण्ठा से उसके पास दौड़ा आया।

"क्या चाहिए, हुज़ूर?"

"घड़ी।"

घड़ी इवान इल्यीच के हाथ के सामने पड़ी थी। प्योत्र ने घड़ी उठाकर दे दी।

"साढ़े आठ। क्या सब लोग उठ गये हैं?"

"अभी नहीं, हुज़ूर। वसीली इवानोविच (बेटा) स्कूल चले गये हैं और प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना ने हुक्म दे रखा है कि जब भी आप उनसे मिलना चाहें तो उन्हें फ़ौरन जगा दिया जाये। क्या उन्हें बुला लाऊं, हुज़ूर?"

"नहीं, रहने दो।" ("मैं थोड़ी चाय पी ही लूं तो क्या हर्ज है," उसने सोचा।) "मेरे लिए थोड़ी चाय ले आओ।"

प्योत्र दरवाज़े की ओर बढ़ा। पर इवान इल्यीच यह सोचकर घबरा उठा कि उसे कमरे में अकेले बैठना पड़ेगा। ("क्या करूं, जिससे यह यहीं पर रुका रहे? हां, दवाई का बहाना हो सकता है।") "प्योत्र,

मुझे दवाई की ख़ुराक देते आओ।" ("क्यों न लूं? इससे शायद सचमुच कुछ फ़ायदा हो।") उसने एक चम्मच दवाई पी ली। ("नहीं, इससे कुछ लाभ नहीं होगा। फ़िज़ूल है। बिल्कुल अपने को धोखा देने वाली बात है। इस पर से अब मेरा विश्वास उठ गया है," वह सोचने लगा, जब उसने मुंह में वही परिचित, मीठा स्वाद अनुभव किया। "यह पीड़ा मुझे क्यों सताये जा रही है? काश कि यह एक मिनट भर के लिए थम पाती!") वह कराह उठा। प्योत्र लौट आया। "नहीं, तुम जाओ और मेरे लिए चाय ले आओ।"

प्योत्र चला गया। इवान इल्यीच अकेला रह गया। असह्य दर्द के कारण तो इतना नहीं जितना कि मानसिक क्लेश के कारण वह कराहता रहा। "समय का क्रम उसी तरह चल रहा है। लम्बे दिन, जो कभी ख़त्म नहीं होते, और लम्बी, कभी न ख़त्म होने वाली रातें। काश कि वह जल्दी आ जाये। कौन जल्दी आ जाये? मौत, अन्धकार! नहीं, नहीं, मौत से तो कुछ भी बेहतर होगा!"

नाश्ते की तश्तरी उठाये प्योत्र अन्दर आया। इवान इल्यीच देर तक खोया खोया सा उसकी ओर देखता रहा, उसकी समझ मे नहीं आ रहा था कि यह कौन है और क्या चाहता है। उसके यों घूरने पर प्योत्र कुछ सकपका गया। उसकी सकपकाहट देखकर इवान इल्यीच सम्भला।

"ओह, ठीक है, चाय लाया है," उसने कहा, "रख दो। बहुत अच्छा। हां, मेरे हाथ-मुंह धुला दो और एक साफ़ क़मीज़ निकाल दो।"

इवान इल्यीच मुंह-हाथ धोने लगा। धीरे धीरे, थोड़ी थोड़ी देर रुक रुककर उसने अपने हाथ धोये, मुंह धोया, दांत साफ किये, बाल संवारे, और शीशे में अपना चेहरा देखा। चेहरा देखते ही वह सहम गया, विशेषकर जब उसने अपने बेजान से बाल जर्द, पीले माथे पर चिपके हुए देखे।

क़मीज़ बदलते वक़्त उसने समझ लिया कि यदि उसने अपना शरीर शीशे में देखा तो वह और भी भयावना होगा, इसलिए उसने शीशे में अपने को नहीं निहारा। आख़िर सब काम निबट गया। उसने अपना ड्रेसिंग-गाऊन पहना, टांगों पर कम्बल डाला और आराम कुर्सी पर बैठकर चाय पीने लगा। कुछ देर के लिए उसने अपने को ताज़ादम महसूस किया। पर ज्यों ही उसने चाय पीना शुरू किया, उसे फिर दर्द का भास होने लगा और मुंह का स्वाद बदल गया। जैसे तैसे उसने चाय पी ली और फिर

टांगें फैलाकर लेट गया। लेटते ही उसने प्योत्र को कमरे में से चले जाने को कहा।

फिर वही चक्र चल पड़ा था। क्षण भर के लिए आशा की एक किरण फूटती, पर दूसरे क्षण निराशा का प्रचण्ड सागर लील लेता। सारा वक़्त यह पीड़ा, यह असह्य यातना उसे बेचैन किये रहती। जब वह अकेला होता तो पीड़ा असह्य हो उठती। जी चाहता कि किसी को बुलाये, पर वह पहले से जानता था कि दूसरों के सामने और भी बुरा होगा। ("काश कि मुझे फिर से मार्फ़ीन दे दी जाये, जिससे मैं यह दर्द भूले रहूं। मुझे डाक्टर को जरूर कहना चाहिए कि वह सोचकर कोई उपाय निकाले। यह स्थिति तो बिल्कुल असह्य हो रही है, बिल्कुल असह्य।")

इसी तरह एक-दो घण्टे बीत गये। ड्योढ़ी में किसी ने घण्टी बजायी। शायद डाक्टर आया है। हां, डाक्टर है, मोटा-ताज़ा, चुस्त, प्रसन्नचित्त, चेहरे पर आत्मविश्वास छलकता है, मानो कह रहा हो, "तुम डर गये जान पड़ते हो, पर चिन्ता नहीं करो, मैं तुम्हारे डर का कारण अभी दूर किये देता हूं।" डाक्टर जानता था कि चेहरे पर यह भाव लेकर यहां आना असंगत है, पर यह मुद्रा तो उसका नकाब है, जिसे बदलना अब आसान नहीं, बल्कि उतना ही कठिन है, जितना कि उस फ़्राक-कोट को उतारना, जिसे वह सुबह अपना दौरा शुरू करने के वक़्त पहन लेता है।

रोगी को तसल्ली देते हुए डाक्टर अपने हाथ ज़ोर ज़ोर से मलता रहा।

"मेरे हाथ बहुत ठण्डे हो रहे हैं। बाहर बला की सर्दी है। बस, मिनट भर और इन्तज़ार कीजिये, मेरे हाथ अभी गरम हो जायेंगे।" ये शब्द उसने ऐसे लहजे में कहे मानो यह बताना चाहता हो कि बस मिनट भर और इन्तज़ार करने की ज़रूरत है, मेरा शरीर गरम होते ही तुम्हारा रोग जाता रहेगा।

"कहिये, कैसी तबीयत है?"

इवान इल्यीच को लगा जैसे डाक्टर पूछना चाहता है, "कहिये, कैसा हाल-चाल है?" पर शायद उसे सवाल को इस ढंग से पूछना असभ्य लगा, इसलिए उसने सवाल बदल लिया, "कहिये, रात कैसी गुज़री?"

इवान इल्यीच ने ऐसी नज़र से डाक्टर की ओर देखा, मानो कह

रहा हो, "क्या तुम्हें झूठ बोलते कभी भी शर्म नहीं आयेगी?" परन्तु डाक्टर उसका भाव समझना नहीं चाहता था।

"बहुत तकलीफ़ में हूं," इवान इल्यीच ने कहा, "दर्द न जाता है, न कम होता है। अगर आप मुझे कोई ऐसी चीज़ दे दें जिससे..."

"आप सभी बीमार लोग एक जैसे होते हैं। अब तो मुझमें कुछ गरमी आ गयी जान पड़ती है। अब तो अत्यधिक सावधान प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना को भी मेरे शरीर के तापमान के बारे में कोई आपत्ति न होगी। हां तो, गुड-मार्निंग," डाक्टर ने कहा और इवान इल्यीच के साथ हाथ मिलाया।

हंसी-मज़ाक छोड़कर अब डाक्टर ने गंभीर मुद्रा धारण की और रोगी को देखना शुरू किया। उसने नब्ज़ देखी, बुख़ार जांचा, छाती ठोंककर देखी, दिल की धड़कन सुनी।

इवान इल्यीच यकीनी तौर पर जानता था कि यह सब बकवास है, निरा धोखा है, पर जब डाक्टर ऐन उसके सामने घुटनों के बल बैठ गया और आगे को झुककर अपना कान कभी नीचे कभी ऊपर लगाते तथा आंखें सिकोड़ते, गंभीर मुद्रा और तरह तरह के आसन बनाते हुए उसे देखने लगा, तो इवान इल्यीच उसके प्रभाव में आ गया, वैसे ही जैसे वह स्वयं वकीलों के भाषणों के प्रभाव में आ जाया करता था, सो भी भली भांति यह जानते हुए कि वे झूठ बोल रहे हैं और किसलिए झूठ बोल रहे हैं।

डाक्टर अब भी सोफ़े पर घुटने टेके उसकी छाती को ठोंक-बजाकर देख रहा था, जब दरवाज़े की ओर से रेशमी कपड़ों की सरसराहट सुनाई दी और प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना की आवाज़ आयी। वह प्योत्र से नाराज़ हो रही थी कि उसने उसे डाक्टर के आने की ख़बर क्यों नहीं दी।

उसने आते ही पति को चूमा और अपनी सफ़ाई देने लगी कि वह तो कब की जगी हुई है, केवल किसी ग़लतफ़हमी के कारण वह डाक्टर के आने पर कमरे में नहीं पहुंच पायी।

इवान इल्यीच ने उसकी ओर देखा। उसकी एक एक चीज़ को ध्यान से देखा और उसका जी कटुता से भर उठा। उसकी चमड़ी कितनी सफ़ेद है, शरीर कितना हृष्ट-पुष्ट, बाहु और गर्दन चिकने, बाल और आंखें कैसी चमक रही हैं, अंग अंग से जीवन का ओज फूट रहा है। इवान इल्यीच का रोम रोम उसके प्रति घृणा से भर उठा। उसके स्पर्श से इवान इल्यीच के सारे शरीर में घृणा की एक लहर दौड़ जाती।

पति और उसकी बीमारी की ओर उसका रवैया नहीं बदला था। जैसे डाक्टर अपना रवैया अपने मरीज़ों के प्रति स्थिर कर लेते हैं और बदल नहीं पाते, उसी भांति उसने भी अपने पति के प्रति एक रुख़ अपना लिया था—कि यह अपने रोग के लिए स्वयं ज़िम्मेदार है, यह ऐसी बातें करता है, जो इसे नहीं करनी चाहिए। और इसके लिए प्यार से उसकी भर्त्सना करती। वह इस रवैये को बदल नहीं सकती थी।

"यह किसी की सुनते ही नहीं। बाक़ायदा दवाई नहीं खाते। सबसे बुरी बात तो यह है कि जिस तरह यह टांगें ऊपर को उठाये लेटे रहते हैं, उससे इन्हें ज़रूर नुक़सान पहुंचता होगा।"

उसने बताया कि किस तरह इवान इल्यीच गेरासिम से टांगें ऊपर उठवाये लेटा रहता है।

डाक्टर के होंठों पर स्नेह और अनुकम्पा भरी मुस्कान आयी। वह मानो कह रहा हो: "मैं क्या कर सकता हूं? हमारे मरीज़ तरह तरह की कलाबाज़ियां करते रहते हैं। हमें उन्हें माफ़ ही करना पड़ता है।"

जांच समाप्त करके डाक्टर ने अपनी घड़ी की ओर देखा। इस पर प्रस्कोव्या प्योदोरोव्ना कहने लगी कि इवान इल्यीच को चाहे अच्छा लगे या बुरा, उसने एक प्रसिद्ध डाक्टर को भी आज बुला रखा है और वह और मिख़ाईल दनीलोविच (यह साधारण डाक्टर का नाम था) दोनों मिलकर जांच करेंगे और आपस में परामर्श करेंगे।

"तुम इसका विरोध नहीं करना। यह मैं तुम्हारी ख़ातिर नहीं, अपनी ख़ातिर कर रही हूं," उसने व्यंग से कहा, ताकि वह समझ जाये कि वह यह प्रबन्ध उसी की ख़ातिर कर रही है और उसे प्रतिवाद करने का अधिकार न रहे। उसकी त्योरियां चढ़ गयीं, पर वह बोला कुछ नहीं। वह जानता था कि वह झूठ के ऐसे कुचक्र में फंस गया है कि उसके लिए झूठ-सच पहचानना कठिन हो रहा है।

सच तो यह था कि उसकी पत्नी जो कुछ भी उसके लिए कर रही थी, वह दर असल अपने ही लिए था। वह कहती भी यही थी कि मैं अपने लिए कर रही हूं और करती भी अपने ही लिए थी, लेकिन बात को इस ढंग कहती कि यह असंभव जान पड़ता और सोचती कि इवान इल्यीच को समझना चाहिए था कि जो कुछ हो रहा है, उसी की ख़ातिर हो रहा है।

जैसा कि उसने कहा था, ठीक साढ़े ग्यारह बजे प्रसिद्ध डाक्टर आ पहुंचा। फिर से उसके शरीर की परीक्षा हुई और उसकी उपस्थिति और साथ वाले कमरे में गुर्दों और अन्धान्त्रों के बारे में बड़ी विद्वत्तापूर्ण बातें हुईं। इतनी गंभीर मुद्रा में सवाल-जवाब हुए मानो समस्या जीवन और मृत्यु की नहीं—जो वास्तव में आंखें फाड़े इवान इल्यीच के सामने खड़ी थी—बल्कि गुर्दों और अन्धान्त्र की है, जिनका रवैया ठीक नहीं रहा और जिन्हें अब मिख़ाईल दनीलोविच और प्रसिद्ध डाक्टर अपने हाथ में लेकर अपने निश्चयानुसार चलायेंगे।

ऐसी ही गंभीर मुद्रा बनाये डाक्टर ने विदा ली। उस मुद्रा में निराशा का भाव न था। जब इवान इल्यीच ने भय और आशा से चमकती आंखें ऊपर उठायीं और डाक्टर से डरते-डरते यह पूछा कि क्या मैं तन्दुरुस्त हो जाऊंगा, तो जवाब में डाक्टर ने कहा कि मैं पूरे विश्वास के साथ तो नहीं कह सकता, किन्तु इसकी संभावना ज़रूर है। डाक्टर जाने लगा तो इवान इल्यीच की आंखें दरवाज़े तक उसे देखती रहीं। उन आंखों में आशा की ऐसी हृदयविदारक झलक थी कि जब प्रस्कोव्या फ्योदोरोव्ना डाक्टर की फ़ीस लाने के लिए कमरे से निकली, तो वह भी अपने आंसू नहीं रोक सकी।

डाक्टर के प्रोत्साहन से इवान इल्यीच का फिर हौसला बढ़ा। पर यह अधिक देर तक नहीं रहा। वही कमरा, वही तस्वीरें, वही पर्दे, दीवारों का वही कागज, वही साज़-सामान और वही यन्त्रणा सहता, दर्द से छटपटाता हुआ शरीर। इवान इल्यीच कराहने लगा। उसे एक इन्जेक्शन दिया गया और वह बेसुध सा हो गया।

जब उसे होश आया तो शाम हो चुकी थी। उसके लिए खाना लाया गया। बड़ी मुश्किल से उसने थोड़ा सा सूप मुंह में डाला। हर चीज़ फिर वैसी की वैसी हो रही थी। फिर रात घिरने लगी थी।

भोजन के बाद सात बजे प्रस्कोव्या फ्योदोरोव्ना कमरे में आयी। वह बाहर जाने के लिए कपड़े पहने तैयार थी। चेहरे पर पाउडर था, भारी-भरकम वक्ष कसकर बन्धा था। आज प्रातः उसने इवान इल्यीच को याद करा दिया था कि परिवार के सब लोग नाटक देखने जा रहे हैं। सारा बेरनार नगर में अभिनय करने आयी थी। इवान इल्यीच के ही बार बार इसरार करने पर उन्होंने टिकट लिये थे। पर उसे यह सब भूल चुका था

और पत्नी की ऐसी सज-धज देखकर उसके दिल को चोट लगी। परन्तु यह याद करके कि उसी के आग्रह पर उन्होंने टिकट ख़रीदे थे – उसी ने कहा था कि कलात्मक अभिनय देखने से बच्चों को अच्छी शिक्षा मिलती है – उसने अपनी भावनाओं को छिपाये रखा।

प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना आत्मसंतुष्ट, किन्तु अपने को कुछ कुछ अपराधी सी महसूस करती हुई आई। वह बैठ गयी, पति का हाल पूछा। वह जानता था कि केवल पूछने भर के लिए वह ऐसा कर रही है, केवल औपचारिकता निभा रही है। वह इसलिए नहीं पूछ रही थी कि कुछ जानना चाहती थी। जानने को था ही क्या? उसने जो कुछ कहा वह केवल औपचारिकता थी: कि मैं तो कभी जाने का नाम भी न लेती यदि ये कम्बख़्त टिकट न ले रखे होते, कि हेलेन, उनकी बेटी और पेत्रीश्चेव (जांच-मैजिस्ट्रेट, उनकी बेटी का मंगेतर) तीनों जा रहे थे और उन्हें अकेले जाने देना ठीक नहीं है। पर मेरा जी तो जरा भी जाने को नहीं, मैं तो तुम्हारे ही पास रहना चाहती हूं। अब इतनी कृपा करना कि जब तक मैं बाहर रहूं डाक्टर के सभी आदेशों का पालन करते रहना।

"हां, फ़्योदोर पेत्रोविच (बेटी का मंगेतर) तुमसे मिलना चाहता है। वह अन्दर आ जाये? लीजा भी आना चाहती है।"

"आने दो।"

बेटी अन्दर आयी, बनी-ठनी, शरीर का बहुत सा हिस्सा उघड़ा हुआ। वह अपने शरीर की नुमाइश करना चाहती थी, जब कि इवान इल्यीच का शरीर दर्द से तड़प रहा था। वह स्वस्थ और हृष्ट-पुष्ट थी, प्रेम में सब कुछ भूली हुई और दिल में इस बात पर नाराज थी कि पिता की बीमारी, यातना और आसन्न मृत्यु से उसके सुख पर एक छाया-सी आ पड़ी है।

फ़्योदोर पेत्रोविच अन्दर आया। शाम की बढ़िया पोशाक पहने हुए, बाल á la Capoul, घुंघराले बनाये हुए, लम्बी, उभड़ी हुई नसोंवाली गर्दन पर सफ़ेद, कलफ लगा कालर, सफ़ेद क़मीज़, मजबूत पिण्डलियों पर तंग, काला पतलून, एक हाथ सफ़ेद दस्ताने में, दूसरे में ऑपेरा हैट लिये हुए।

उसके पीछे पीछे इवान इल्यीच का बेटा भी धीरे धीरे चला आया। वह स्कूल में पढ़ता था। किसी ने उसे अन्दर आते नहीं देखा। उसने स्कूल की नयी पोशाक पहन रखी थी और हाथों पर दस्ताने चढ़ाये था। बेचारा,

उसकी आंखों के नीचे वे काले घेरे थे, जिनका अर्थ इवान इल्यीच समझता था।

इवान इल्यीच को सदा अपने बेटे पर दया आती थी। परन्तु अब लड़के की सहमी हुई, सहानुभूतिपूर्ण आंखों को देखकर उसे भय अनुभव होने लगा था। इवान इल्यीच को महसूस हुआ जैसे गेरासिम के बाद वास्या ही एक ऐसा व्यक्ति है, जो उसे समझता है और जिसके दिल में उसके प्रति सहानुभूति है।

सब बैठ गये। उन्होंने फिर पूछा कि उसकी तबीयत कैसी है। थोड़ी देर तक कोई कुछ नहीं बोला। लीज़ा ने मां से नाटक गृह की दूरबीन के बारे में पूछा। इस पर मां-बेटी में छोटा सा झगड़ा उठ खड़ा हुआ कि किसने दूरबीन ग़लत जगह पर रख दी है। बड़ी भद्दी सी बात हुई।

फ्योदोर पेत्रोविच ने इवान इल्यीच से पूछा कि क्या उन्होंने सारा बेरनार का अभिनय देखा है। पहले तो प्रश्न ही इवान इल्यीच की समझ में नहीं आया, फिर उसने कहा :

"नहीं, क्या तुमने देखा है?"

"हां, Adrienne Lecouvreur में।"

प्रस्कोव्या फ्योदोरोव्ना बोली कि फलां नाटक मे तो वह कमाल ही करती है। बेटी की राय इससे भिन्न थी। इस पर उसके अभिनय की स्वाभाविकता और आकर्षण पर बहस होने लगी। इस बहस में दोनों ने वही कुछ कहा, जो सदैव ऐसे विषयों पर कहा जाता है।

वार्तालाप के दौरान फ्योदोर पेत्रोविच की नजर इवान इल्यीच पर पड़ी और वह चुप हो गया। और लोगों ने भी उसकी ओर देखा और चुप हो गये। इवान इल्यीच ऐन अपने सामने देखे जा रहा था। उसकी आंखें क्रोध से चमक रही थीं, जिसे वह छिपा नहीं पा रहा था। कुछ करना होगा, पर क्या किया जा सकता है? इस चुप्पी को तोड़ना होगा, परन्तु किसी में भी इसे तोड़ने की हिम्मत नहीं थी। सब डर रहे थे कि किसी बात से इस झूठ का भण्डाफोड़ हो जायेगा, जिसे शिष्टता की ख़ातिर कायम रखा जा रहा था, और सारी बात अपने असली रूप में सामने आ जायेगी। सबसे पहले लीज़ा ने साहस जुटाया और चुप्पी तोड़ी। चाहती तो थी कि उस भावना को छिपाये रखे, जो उस वक़्त हर कोई महसूस कर रहा था, पर इसके विपरीत उसने उसे प्रकट कर ही दिया।

"अगर हमें जाना है तो फिर उठो," उसने घड़ी देखते हुए कहा। यह घड़ी उसके पिता ने उसे उपहारस्वरूप दी थी। उसी समय उसके चेहरे पर एक हल्की सी महत्वपूर्ण मुस्कान भी दौड़ गयी, जो किसी दूसरे व्यक्ति को नज़र नहीं आई और जिसका अर्थ केवल वह और उसका मंगेतर ही जानते थे। फिर रेशमी कपड़ों की सरसराहट के साथ वह उठ खड़ी हुई।

सब उठे, विदा ली और चले गये।

इवान इल्यीच को लगा मानो उनके चले जाने के बाद उसे कुछ राहत मिली है। कम से कम उस झूठ से तो उसे छुटकारा मिला। उन्हीं के साथ झूठ भी चला गया था। पर दर्द और आतंक अब भी पीछे रह गये थे। वही पुराना दर्द, पुराना भय, जिनसे अधिक निर्मम कुछ न था, जिनसे क्षण भर के लिए भी चैन न मिलता था। अब वे और भी तेज़ होने लगे थे।

फिर उसी रफ़्तार से वक़्त रेंगने लगा, एक एक मिनट, एक एक घण्टा, पहले की ही तरह। इसका कोई अन्त न था। तिस पर भी अनिवार्य अन्त का त्रास उसके हृदय में बढ़ने लगा था।

"हां, भेज दो गेरासिम को," उसने प्योत्र के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा।

(९)

जब उसकी पत्नी लौटी तो काफ़ी देर हो चुकी थी। वह धीरे धीरे दबे पांव अन्दर आयी, पर इवान इल्यीच को आहट मिल गयी। उसने आंखें खोलीं, फिर झट से बन्द कर लीं। वह चाहती थी कि गेरासिम को बाहर भेज दे और स्वयं उसके पास बैठे, परन्तु उसने आंखें खोलीं और बोला:

"नहीं, तुम चली जाओ।"

"क्या तुम्हें दर्द ज़्यादा है?"

"कम या ज़्यादा, सब बराबर है।"

"थोड़ी अफ़ीम वाली दवाई ले लो।"

उसने मान लिया और दवाई पी ली। पत्नी बाहर चली गयी।

प्रातः तीन बजे तक वह अर्द्ध-चेतनावस्था में यन्त्रणा सहता रहा। उसे ऐसा लगा कि उसे एक तंग काली बोरी में घुसेड़ने की कोशिश की जा रही है, वह अधिकाधिक उसमें घुसता जा रहा है, पर नीचे तक नहीं पहुंच

पाता। इस भयानक काम में उसे बड़ी तकलीफ़ हो रही है। वह डरता भी था, तिस पर भी बोरी के अन्दर पहुंच जाना चाहता था। इस तरह वह एक ही साथ अपने को रोकने की भी चेष्टा कर रहा था और अन्दर घुसने की भी। सहसा बोरी उसके हाथ से निकली, वह गिर पड़ा और उसकी आंख खुल गयी। गेरासिम अब भी पलंग के पायताने बैठा था और चुपचाप ऊंघे जा रहा था। इवान इल्योच अपनी पतली टांगें लड़के के कन्धों पर रखे हुए लेटा था। टांगों पर मोज़े चढ़े थे। कमरे में शेड के नीचे अब भी बत्ती जल रही थी। इवान इल्यीच को अब भी दर्द हो रहा था।

"तुम जाओ, गेरासिम," उसने फुसफुसाकर कहा।

"कोई बात नहीं, हुज़ूर, मैं कुछ देर और बैठूंगा।"

"नहीं, जाओ।"

उसने टांगें नीची कर लीं, करवट बदली और गाल के नीचे अपना हाथ रखकर लेट गया। उसका दिल अपने प्रति अनुकम्पा से भर उठा। वह इस इन्तज़ार में रहा कि गेरासिम साथ वाले कमरे में चला जाये। ज्यों ही वह चला गया, उसने मानो अपनी लगाम ढीली कर दी और बच्चों की तरह बिलख बिलखकर रोने लगा। वह अपनी असहायता, अपने भयावने एकाकीपन, लोगों की निर्दयता और भगवान की निर्दयता पर और इसलिए भी रोता था कि भगवान का अस्तित्व नहीं था।

"तुमने यह सब क्यों किया? क्यों तुमने मुझे संसार में भेज दिया? मैंने कौनसा पाप किया था, जिसकी तुम मुझे इतनी कड़ी सज़ा दे रहे हो?" उसे किसी उत्तर की आशा न थी। इसका कोई उत्तर था भी नहीं, हो भी नहीं सकता था। इसी कारण वह रो भी रहा था। दर्द फिर शुरू हो गया, परन्तु इवान इल्योच हिला-डुला नहीं, न ही किसी को बुलाया। उसने केवल मन ही मन इतना भर कहा, "ठीक है, मारो, और ज़ोर से मारो! पर किसलिए मारते हो? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?"

फिर वह चुप हो गया। उसने रोना बन्द कर दिया। सांस तक लेना बन्द कर दिया और बड़े ध्यान से कान लगाये सुनने लगा। उसे जान पड़ा जैसे वह किसी मनुष्य की नहीं, अन्तःकरण की आवाज़ सुन रहा है, अपने विचार-प्रवाह को सुन रहा है।

"तुम चाहते क्या हो?" यह था पहला विचार, जो काफ़ी स्पष्टता से उसके मन में शब्दबद्ध हो पाया। "तुम क्या चाहते हो? तुम क्या चाहते

हो?" उसने दोहराकर अपने से पूछा। "मैं दुःख भोगना नहीं चाहता। जीना चाहता हूं," उसने उत्तर दिया।

एक बार फिर वह बड़े ध्यान से सुनने की चेष्टा करने लगा, यहां तक कि उसका दर्द भी उसे विचलित नहीं कर पाया।

"जीना? कैसे जीना चाहते हो?" उसके अन्ततम से आवाज आयी।

"जैसे पहले जीता था, एक शिष्ट, सुखी जीवन।"

"क्या सचमुच तुम्हारा जीवन पहले बहुत शिष्ट और सुखी था?" आवाज आयी। और वह मन ही मन अपने सुखी जीवन की सर्वोत्तम घड़ियों को याद करने लगा। पर उसे इस बात से अचम्भा हुआ कि सुखी जीवन की वे सभी घड़ियां अब वैसी नहीं लगती थीं, जैसी कि वह समझता आया था। हां, बचपन की सब से पहली स्मृतियां अब भी सुखद लगती थीं। उसके बचपन के बहुत से दिन सचमुच बड़े प्यारे थे, लगता जैसे उन दिनों जीवन में कोई प्रयोजन था। काश कि वे दिन फिर लौट आते! वह व्यक्ति अब कहां था, जिसने उस सुखद जीवन का रस लिया था? इवान इल्यीच को लगा जैसे वह किसी अन्य व्यक्ति की स्मृतियों को जगा रहा है।

फिर वे स्मृतियां सामने आने लगीं, जिनका नायक आज का इवान इल्यीच था। इवान इल्यीच के एकाग्र मन को वे सब बातें निरर्थक और घृणित जान पड़ने लगीं, जो किसी समय आह्लादपूर्ण लगा करती थीं।

ज्यों ज्यों वह अपने बचपन के बाद वर्तमान के निकट आता जाता था, उसे अपना सुख निरर्थक और संदिग्ध लगने लगा था। इसकी शुरुआत क़ानून-विद्यालय से हुई। कुछेक बातों में वहां के अनुभव अच्छे भी थे, वहां हंसी-खेल था, मैत्री थी, जीवन में आशा थी। पर ज्यों ज्यों वह ऊपर की कक्षाओं में पहुंचता गया, त्यों त्यों ये सुख विरल होते गये। उसके बाद नौकरी शुरू हुई। शुरू शुरू के दिनों में, जब वह गवर्नर का सेक्रेटरी था, तब भी उसे कुछेक अच्छी बातों का अनुभव हुआ। उनमें से अधिकांश का सम्बन्ध प्रेम से था। फिर क्रमशः उसका जीवन असम्बद्ध होता गया और अच्छी चीज़ें और भी कम होती गयीं। उसके बाद अच्छाई और भी कम हुई। जितना ही वह नौकरी में आगे बढ़ता जाता था, अच्छाई उतनी ही कम होती जाती थी।

फिर उसकी आंखों के सामने उसके विवाह का चित्र घूम गया। उसकी शादी बहुत ही अचानक हो गयी थी। फिर उसका भ्रमजाल टूटा। उसे

अपनी पत्नी के श्वास की गन्ध याद हो आयी, वह कामान्धता और फिर वह बनावटीपन! वह नीरस धन्धा—पैसे की चिन्ता, वर्ष प्रतिवर्ष चलने वाली चिन्ता। एक वर्ष, फिर दूसरा, तीसरा, दस साल, बीस साल, बिना किसी परिवर्तन के। जितनी ही अधिक यह चिन्ता बढ़ती गयी, उतना ही अधिक जीवन नीरस होता गया। "मानो मैं सारा वक़्त नीचे ही नीचे जा रहा हूं, जबकि मैं यह समझे बैठा था कि मैं ऊपर ही ऊपर उठ रहा हूं। ठीक है, ऐसा ही था। मेरे मित्र भी यही कहते थे कि मैं ऊंचा उठ रहा हूं, परन्तु वास्तव में स्वयं जीवन ही मेरे पांव तले से खिसकता जा रहा था। और आज मैं मौत के किनारे आ पहुंचा हूं!

"यह सब क्या हो रहा है? क्यों हो रहा है? विश्वास नहीं होता। विश्वास नहीं होता कि मेरा जीवन इतना निरर्थक और घृणित था। पर यदि मान भी लें कि वह घृणित और निरर्थक था, तो मैं मर क्यों रहा हूं, इतनी कठोर यन्त्रणा में क्यों मर रहा हूं? कहीं कोई भूल हुई है।"

"शायद मैंने अपना जीवन उस ढंग से नहीं बिताया, जैसे बिताना चाहिए था?" उसके मन में विचार उठा। "पर यह कैसे हो सकता है कि मैंने अपना जीवन ठीक तरह से न बिताया हो? मैं हर बात उसी तरह करता था, जैसे कि करनी चाहिए थी," उसने मन ही मन जवाब दिया। जीवन और मृत्यु की सभी उलझनों के इस एकमात्र समाधान को सर्वथा असम्भव मानते हुए उसने इस उत्तर को फ़ौरन मन से निकाल दिया।

"अब तुम क्या चाहते हो? जीना? किस भांति जीना चाहते हो? मानो तुम अदालत में हो, और अदालत का परिचायक चिल्लाये जा रहा है, 'जज साहब तशरीफ़ ला रहे हैं!' जज साहब आ रहे हैं, जज साहब आ रहे हैं!" उसने मन ही मन दोहराया, "वह आ गये, जज साहब आ गये!" "पर मैं तो अपराधी नहीं हूं!" उसने क्रोध से चिल्लाकर कहा, "मेरा क्या अपराध है?" उसने रोना बन्द कर दिया और मुंह दीवार की ओर करके बार बार यही सोचने लगा, "क्यों, किस कारण मुझे यह भयानक यन्त्रणा सहनी पड़ रही है?"

परन्तु बहुत सोचने पर भी उसे कोई उत्तर नहीं मिल पाता था। जब भी उसके मन में यह विचार उठता (और ऐसा अवसर होता था) कि उसने उस भांति जीवन नहीं बिताया, जैसे कि उसे बिताना चाहिए

था, तो यह फ़ौरन इस प्रसंगत विचार को अपने मन से निकाल देता, यह कहकर कि उसने सर्वथा उचित ढंग से अपना जीवन व्यतीत किया है।

(१०)

दो सप्ताह और बीत गये। इवान इल्यीच अब सोफे पर ही पड़ा रहता था। सोफे पर इसलिए पड़ा रहता था कि वह बिस्तर पर नहीं लेटना चाहता था। अधिकांश समय दीवार की ओर मुंह किये लेटा और अकेले ही छटपटाता रहता। उसकी यन्त्रणा का वर्णन नहीं किया जा सकता। अकेले ही पड़े पड़े वह इन जटिल प्रश्नों का उत्तर भी ढूंढा करता, "यह क्या है? क्या सचमुच यह मौत है?" और कोई आन्तरिक आवाज उत्तर देती, "हां, यह सचमुच मौत है।" "फिर यह यन्त्रणा क्यों?" जवाब आता: "कोई कारण नहीं।" बस, यहीं तक यह बात पहुंच पाती। इसके अतिरिक्त कोई उत्तर न मिलता।

जब से यह बीमारी शुरू हुई थी और वह पहली बार डाक्टर के पास गया था, इवान इल्यीच का जीवन दो परस्पर-विरोधी मनःस्थितियों में बंट गया था, जो बारी बारी से आती रहती थीं। एक थी निराशा की स्थिति, इस पूर्वाभास की कि भयानक, अगम्य मृत्यु निकट आ रही है; दूसरी थी आशा की, जिसकी प्रेरणा से वह अपने शरीर की क्रियाओं का बड़े ध्यान के साथ निरीक्षण करता रहता। एक समय उसकी नजर के सामने अपना गुर्दा या अन्धान्त्र होता और वह सोचता कि यह कुछ देर के लिए अपना काम ठीक तरह से नहीं कर रहा है; दूसरा वक़्त होता, जब उसे मौत के सिवा कुछ भी नजर नहीं आता था, जो भयानक और अथाह थी, जिससे छुटकारा पाने का कोई उपाय न था।

बीमारी के शुरू के दिनों से ही ये दो मनःस्थितियां चल रही थीं। पर ज्यों ज्यों उसकी बीमारी बढ़ती गयी, उसके गुर्दे और अन्धान्त्र के सम्बन्ध में अनुमान अधिकाधिक काल्पनिक और असंभव होते गये, परन्तु आनेवाली मौत की चेतना अधिकाधिक स्पष्ट होने लगी।

इतना याद भर करने से ही कि उसकी हालत तीन महीने पहले क्या थी और अब क्या है, किस तरह क्रमशः वह नीचे ही नीचे उतरता चला गया है, आशा की संभावना तक मिट जाती थी।

इस एकाकीपन में, अपने जीवन के अन्तिम दिनों में, वह सारा वक़्त दीवार की ओर मुंह किये लेटा रहता और केवल अपने अतीत के बारे मे सोचा करता। इस आबाद शहर मे, जहां इतने मित्र और सम्बन्धी रहते थे, वह बिल्कुल अकेला था। यदि वह समुद्र तल में पड़ा होता तो भी इतना अकेला न होता। एक एक करके बीते दिनों के चित्र उसके सामने उभरने लगते। उनका प्रारंभ तो सदा हाल ही की किसी घटना से होता, पर फिर वे दूर अतीत में चले जाते, उसके बचपन में, और वहां बड़ी देर तक मंडराते रहते। अब, जब उसे उबाले हुए आलूबुख़ारे खाने को दिये जाते थे, उसे अवश्य ही बचपन के दिनों में खाये गये सूखे आलूबुख़ारों की याद हो आती, उनका विशेष स्वाद मुंह में आ जाता, उस लार की याद आ जाती, जो आलूबुख़ारों की गुठलियां चूसते समय मुंह में से निकला करती थी। इस स्वाद को याद करके उस समय की स्मृतियों का तांता सा लग जाता: धाय, भाई, खिलौने इत्यादि। "मुझे उनके बारे मे नहीं सोचना चाहिए... इससे दिल कचोटने लगता है, जिसे मैं सह नहीं सकता," इवान इल्यीच मन ही मन कहता और अपने विचारों को वर्तमान में खींच लाता। वह सोफे की पीठ पर लगे बटन और सोफ़े के बढ़िया चमड़े में पड़ी सिलवट के बारे में सोचने लगता। "यह चमड़ा महंगा है, परन्तु टिकाऊ नहीं। इसे ख़रीदते वक़्त पत्नी के साथ मेरा झगड़ा हुआ था। जब हमने पिता जी के बैग का चमड़ा उधेड़ा था, तो वह चमड़ा दूसरी क़िस्म का था। तब हमें दण्ड दिया गया था और मां हमारे लिए पेस्ट्रियां लायी थीं। जो झगड़ा उस पर उठा था, वह भी दूसरी किस्म का था।" एक बार फिर उसके विचार बचपन की ओर भागते। उनके कारण मन दुःखी होता और वह किसी दूसरी बात पर ध्यान लगाकर उन्हें मन से निकालने की कोशिश करता।

मगर उसी समय इन स्मृतियों के साथ साथ फिर कुछ अन्य स्मृतियां भी मन में चक्कर काटने लगतीं – किस तरह उसकी बीमारी बढ़ती रही, और पकड़ती गयी। उसे लगता कि अपने अतीत में वह जितना ही दूर जाता है, उतना ही अधिक ज़िन्दगी का ओज पाता है। उस समय जीवन में कहीं अधिक अच्छाई थी और कहीं अधिक स्वयं ज़िन्दगी भी थी। "जिस भांति मेरी यन्त्रणा बढ़ती जा रही है, उसी भांति मेरा समूचा जीवन बद से बदतर होता चला गया है।" एक ही उज्ज्वल बिन्दु है उसमें और वह

है जीवन के आरंभ में। उसके बाद जीवन की हर चीज़ पर अधिकाधिक कालिमा छाती गयी और यह कालिमा अधिकाधिक गहरी होती गयी। "जितनी दूरी अब मुझे मौत से अलग किये हुए है, उसके प्रतिलोमानुपात में..." इवान इल्यीच सोचता रहा। और उसके मन में एक पत्थर का चित्र कौंध गया, जो बढ़ते वेग से गिर रहा था। जीवन क्या है, निरन्तर बढ़ते हुए दुःखों का एक तांता, जो तीव्रतर गति से अपने गन्तव्य की ओर बढ़ता चला जा रहा है। और यह गन्तव्य क्या है? घोरतम यातना। "मैं गिर रहा हूं..." वह चौंका, उसने इसका मुकाबला करने और अपने हाथ-पांव हिलाने की कोशिश की, परन्तु वह अब जान गया था कि मुकाबला करना असम्भव है। इन विचारों से थककर, वह फिर सोफ़े की पीठ पर टकटकी बांधे देखने लगा—वह अपने सामने से उस चीज़ को हटा नहीं सकता था, जो अपना कराल रूप लिये उसके सामने खड़ी थी। वह इन्तज़ार करने लगा कि कब वह गिरेगा, कब उसे वह आख़िरी धक्का लगेगा, कब वह नष्ट हो जायेगा। "मुकाबला करना असम्भव है," उसने मन ही मन कहा, "काश कि मुझे इसका कारण मालूम हो पाता! पर यह भी असम्भव है। अगर यह कहा जाये कि मैंने जीवन वैसे नहीं बिताया जैसे बिताना चाहिये था तो तब बात समझ मे आ सकती थी। पर यह मानना असम्भव है।" और उसे अपने जीवन की नेकी, शिष्टता और औचित्य याद हो आया। "मैं यह नहीं मान सकता," उसने मुस्कराकर होंठ खोलते हुए, मन ही मन कहा, मानों उसकी मुस्कान देखकर कोई धोखे में आ जायेगा, "इसका कोई मतलब नहीं! यन्त्रणा, मृत्यु... क्यों?"

(११)

इसी तरह दो हफ़्ते और बीत गये। इस बीच वह घटना घट गयी, जिसका उसे और उसकी पत्नी को इन्तज़ार था: पेत्रीश्चेव ने शादी का प्रस्ताव रखा। एक शाम को उसने ऐसा किया। अगले दिन प्रातः प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना अपने पति के कमरे में आयी। वह मन ही मन सोच रही थी कि किस भांति वह प्रस्ताव उसके सामने रखे। उसी रात इवान इल्यीच की हालत और भी बिगड़ गयी थी। जब प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना कमरे में पहुंची तो वह उसी सोफ़े पर लेटा हुआ था, पर दूसरे ढंग से। वह पीठ

के बल लेटा हुआ कराहे जा रहा था। उसकी आंखें एकटक सामने की ओर देख रही थीं।

उसकी पत्नी ने दवाई के बारे में कुछ कहना शुरू किया। वह घूमकर उसकी ओर देखने लगा। उसे उसकी आंखों में अपने प्रति इतनी गहरी घृणा नजर आयी कि वह अपना वाक्य भी पूरा नहीं कर पायी और चुप हो गयी।

"भगवान के लिए मुझे चैन से मरने दो," वह बोला।

वह बाहर जाने को हुई, परन्तु उसी वक़्त उनकी बेटी अन्दर आ गयी और अभिवादन के लिए उसके पास गयी। उसने बेटी की ओर भी वैसी ही नजर से देखा। जब बेटी ने पूछा कि तबीयत कैसी है तो बड़ी रुखाई से जवाब दिया कि जल्दी ही तुम लोगों को मुझसे छुटकारा मिल जायेगा। दोनों चुप हो गईं और थोड़ी देर तक बैठी रहीं। फिर उठकर चली गयीं।

"इसमें हमारा क्या दोष है?" लीज़ा ने अपनी मां से कहा। "बात तो ऐसे करते हैं, मानो सब हमारा क़सूर हो। मुझे पापा की हालत पर रहम आता है, पर वह हमें क्यों इतना दुःखी करते हैं?"

रोज़ की तरह आज भी डाक्टर ऐन वक़्त पर आया। इवान इल्यीच ने उसी तरह घूरते हुए उसे "हां" और "न" में जवाब दिये। अन्त में कहा:

"आप अच्छी तरह जानते हैं कि अब कुछ नहीं हो सकता। मुझे छोड़ दीजिये।"

"हम यन्त्रणा तो कम कर सकते हैं।"

"नहीं, आप वह भी नहीं कर सकते। मुझे छोड़ दीजिये।"

डाक्टर बैठक में चला गया और जाकर प्रस्कोव्या फ़्योदोरोव्ना को बताया कि इवान इल्यीच की हालत बहुत ख़राब है। वह इस वक़्त घोर पीड़ा में है। उसकी पीड़ा कम करने का एक ही साधन है कि उसे अफ़ीम दी जाये।

डाक्टर ने ठीक कहा था। इवान इल्यीच का शरीर इस समय घोर यन्त्रणा भोग रहा था। पर शारीरिक यातना से भी बढ़कर उसकी यातना नैतिक थी। और वास्तव मे यही उसके दुःख का कारण थी।

उस रात गेरासिम के उनींदे, हंसमुख, चौड़े चेहरे को देखते हुए उसके मन में यह विचार उठा: "क्या मालूम, यह बात ठीक हो कि मैंने

अपना जीवन, अपना सजग जीवन, उस भांति व्यतीत नहीं किया, जैसे कि करना चाहिए था?" इसी विचार से उसकी नैतिक यन्त्रणा शुरू हुई थी।

उसके मन में यह विचार कौंध गया कि जो बात पहले सर्वथा असम्भव जान पड़ती थी यानी यह कि उसका जीवन उचित ढंग से नहीं गुज़रा, यह बिल्कुल सही हो सकती थी। उसके मन में यह विचार बार बार उठने लगा: "ऊंचे रुतबे वाले लोगों की रुचियों तथा धारणाओं के विपरीत जो भावनाएं मेरे मन में उठा करती थीं और जिन्हें मैं दबा दिया करता था, ये कुछ कुछ प्रकट होती भावनाएं, जिनके अस्तित्व का ठीक तरह से पता भी न चलता था, शायद वही सच हों और बाकी सब सच्चाई से दूर हों? मेरा सरकारी काम, मेरे रहन-सहन का ढंग, मेरा परिवार, मेरी सामाजिक तथा व्यावसायिक रुचियां—ये सभी उस सच्चाई से दूर हो सकती हैं।" उसने इन चीज़ों का पक्ष लेने की कोशिश की, परन्तु सहसा ही उसे इनकी निरर्थकता का बोध हुआ। पक्ष लेने को था ही क्या?

"यदि यह बात है," उसने मन ही मन कहा, "और मैं इस जानकारी के साथ जीवन से विदा ले रहा हूं कि जो कुछ मुझे मिला था, मैंने यह सब लुटा दिया और अब कुछ भी नहीं हो सकता, वक़्त हाथ से निकल गया है, तो फिर क्या होगा?" वह पीठ के बल पड़ गया और एक बिल्कुल ही पृथक दृष्टिकोण से अपने जीवन का विश्लेषण करने लगा। आज प्रातः जब उसने सबसे पहले तो चोबदार को, फिर पत्नी, बेटी और अन्त में डाक्टर को देखा, तो उन लोगों के प्रत्येक शब्द से, एक एक हरकत से उस सत्य का समर्थन हुआ, जो गत रात उस पर प्रकट हुआ था। उनमें उसने अपने को देखा, उसे वे सब तत्त्व नज़र आये, जिनसे उसका जीवन बना था और उसे स्पष्ट नज़र आने लगा कि ये सब वास्तविक सत्य से दूर की चीज़ें थीं, कि यह सब एक बहुत बड़ा और भयंकर धोखा था, जो उससे जीवन तथा मृत्यु के सत्य को छिपाता रहा था। इस ज्ञान से उसकी शारीरिक यन्त्रणा और भी बढ़ गयी, दस गुना अधिक हो गयी। वह कराहता, छटपटाता और मुट्ठियों में अपने कपड़े नोचता रहा। उसे जान पड़ा जैसे उसके कपड़े उसे कस रहे हैं, उसका गला घोंट रहे हैं। इसलिए वह उनसे नफ़रत करने लगा था।

उसे अफ़ीम की बहुत बड़ी ख़ुराक दी गयी। वह सब कुछ भूल गया,

पर भोजन के समय यही क्रिया फिर शुरू हो गयी। उसने सब को कमरे मे से बाहर निकाल दिया और बिस्तर पर छटपटाने लगा।

उसकी पत्नी अन्दर आयी और बोली :

"प्यारे Jean, एक काम करो, मेरी ख़ातिर।" (मेरी ख़ातिर?) "इससे तुम्हे कोई नुक़सान नहीं पहुंच सकता। अक्सर लोगों को इससे लाभ पहुंचता है। तुम्हे कोई कष्ट नहीं करना पड़ेगा। कई बार भले चंगे लोग भी..."

वह आंखें फाड़े उसकी ओर देखने लगा।

"क्या? धार्मिक अनुष्ठान करा लूं? क्यों? मैं नहीं कराना चाहता। और अभी तो..."

वह रोने लगी।

"नहीं करवाओगे, प्यारे? मैं अभी पादरी को बुलवा भेजती हूं। वह बहुत भला आदमी है।"

"अच्छी बात है," उसने कहा।

उसके सामने अपने पापों को स्वीकार करते हुए इवान इल्यीच का दिल द्रवित हो उठा, उसकी शंकाएं मिटती सी जान पड़ीं। इससे उसकी यातना भी कम हुई और क्षण भर के लिए आशा भी फिर से जाग उठी। वह फिर अपने अन्धान्त्र के बारे में सोचने लगा। संभव है उसका इलाज हो जाये। धार्मिक अनुष्ठान कराते समय उसकी आंखों में आंसू भर आये थे।

अनुष्ठान के बाद उन्होने उसे लिटा दिया। कुछ देर के लिए उसे ऐसा महसूस हुआ जैसे वह पहले से बेहतर हो गया है। उसका दिल फिर एक बार स्वस्थ हो जाने की आशा से भर उठा। उसे उस ऑपरेशन की याद हो आई, जो डाक्टर ने एक बार करने को कहा था। "मैं जिन्दा रहना चाहता हूं, मरना नहीं चाहता," उसने मन ही मन कहा। उसकी पत्नी उसे मुबारकबाद देने आई, उसने वही बातें कहीं, जो ऐसे अवसर पर सामान्यतः कही जाती थीं :

"तुम्हारी तबीयत पहले से बेहतर है न?"

"हां," उसने बिना उसकी ओर देखे जवाब दिया।

उसके कपड़े, उसकी काया, उसके चेहरे का भाव, उसका स्वर— सभी कह रहे थे—"यह सब सत्य नहीं है। जो कुछ भी अभी तक मेरे

जीवन का अंग रहा है, या है, वह सब झूठ है, धोखा है, मुझसे जीवन और मरण के सत्य को छिपाता रहा है।" यह ख्याल आते ही उसका हृदय घृणा से भर उठा, घृणा के साथ घोर पीड़ा शरीर को चीरने लगी और पीड़ा के साथ उसे अपनी अनिवार्य तथा आसन्न मृत्यु का ध्यान हो आया। शरीर नई नई बातें महसूस करने लगा। उसके अन्दर कोई चीज़ मुड़ने और टूटने लगी और उसका दम घोटने लगी।

जब उसने अपने मुंह से "हां" शब्द निकाला तो उसके चेहरे का भाव अत्यन्त डरावना था। पत्नी की आंखों में देखते हुए उसने "हां" कहा और फिर औंधा पड़ गया। जिस तरह झटके से वह लेटा, उसे देखकर कोई भी आदमी हैरान रह जाता कि इतने कमज़ोर आदमी में इतनी ताकत कहां से आ गई। लेटते ही वह चिल्लाया:

"जाओ! चली जाओ! मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो!"

(१२)

इसके बाद तीन दिन तक निरन्तर वह चीख़ता-चिल्लाता रहा। उसकी चिल्लाहट दो कमरों से आगे तक सुनाई देती थी और सुनने वाले कांप उठते थे। जिस घड़ी उसने अपनी पत्नी के सवाल का जवाब दिया, उसी घड़ी उसने समझ लिया था कि सब खेल ख़त्म हो चुका है, कोई आशा नहीं रह गई, अन्त आ पहुंचा है और उसकी सभी शंकाएं, बस शंकाएं ही बनी रह जाएंगी और उनका समाधान कभी नहीं हो पायेगा।

"ओह! ओह! ओह!" वह भिन्न भिन्न स्वरों में चीख़ता। शुरू शुरू में वह चिल्ला उठता: "मैं... नहीं चा... ह... ता!" और उसके बाद केवल "ओह, ओह!" की चिल्लाहट सुनाई देती।

इन तीन दिनों में उसे महसूस होता रहा जैसे समय की गति थम गई है और वह उस काले बोरे के विरुद्ध संघर्ष कर रहा है, जिसमें कोई अदृश्य तथा अदम्य शक्ति उसे घुसेड़े जा रही है। वह उस व्यक्ति की भांति छटपटाता रहा, जिसे फांसी की सज़ा मिल चुकी हो और यह जानते हुए कि बचाव का कोई रास्ता नहीं, वह जल्लाद की बांहों में छटपटाने लगे। वह जानता था कि प्रति क्षण, इस तीव्र संघर्ष के बावजूद, वह उस भयावह

चीज़ के निकटतर होता जा रहा है। वह सोचता था कि उसकी इस यन्त्रणा का कारण यह है कि उसे ज़बरदस्ती उस काली बोरी में घुसेड़ा जा रहा है, पर इससे भी अधिक इसलिए कि उसमें उसके अन्दर जाने की शक्ति नहीं है। यह विश्वास कि उसने अपना जीवन उचित ढंग से व्यतीत किया है, उसे अन्दर जाने से रोक रहा था। अपने जीवन का इस तरह पक्ष लेना उसकी प्रगति में बाधक बना हुआ था। इस कारण उसकी यन्त्रणा और भी बढ़ गयी थी।

सहसा किसी शक्ति ने उसकी छाती और कमर में घूंसा मारा, जिससे उसकी सांस टूट गयी और वह सीधा उस सूराख़ के अन्दर चला गया। सूराख़ के पेंदे में उसे हल्की सी टिमटिमाती रोशनी दिखाई दी। उसे उस समय वैसे ही महसूस हुआ जैसे अक्सर रेलगाड़ी में बैठे बैठे महसूस हुआ करता है। लगता यह है कि गाड़ी आगे बढ़ी जा रही है, जबकि दर असल वह पीछे की ओर जा रही होती है और सहसा वास्तविक दिशा का बोध हो जाता है।

"मैंने अपना जीवन वैसे नहीं बिताया जैसे बिताना चाहिए था," उसने मन ही मन कहा। "पर कोई बात नहीं। अब भी वक़्त है, मैं वैसा ही कर सकता हूं। पर यह 'वैसा' है क्या?" उसने अपने आपसे पूछा और सहसा चुप हो गया।

यह बात तीसरे दिन की अन्तिम घड़ियों मे, उसके मरनेसे एक घण्टा पहले हुई। ऐन उसी वक़्त उसका बेटा धीरे धीरे उसके कमरे में आया और अपने पिता के बिस्तर के पास खड़ा हो गया। मरणासन्न व्यक्ति अब भी चीख़-चिल्ला रहा था और बांहें पटक रहा था। एक हाथ बेटे के सिर को भी जा लगा। बेटे ने उसे थाम लिया, अपने होंठो से लगा लिया और रोने लगा।

ऐन इसी वक़्त इवान इल्यीच उस सूराख़ के अन्दर घुसा था और उसे वह रोशनी दिखाई दी थी। उसी समय उस पर यह सत्य प्रकट हुआ था कि उसका जीवन उस भांति नहीं बीत पाया जैसे कि बीतना चाहिए था, कि अब भी वह उसका सुधार कर सकता है। "सच्चा जीवन क्या है?" उसने अपने आपसे पूछा और चुप होकर सुनने लगा। उस समय उसे इस बात का बोध हुआ कि कोई उसका हाथ चूम रहा है। उसने आंखें खोलीं और अपने बेटे की ओर देखा। उसका दिल उसके प्रति द्रवित हो

उठा। उसकी पत्नी अन्दर आई। इयान इल्योच ने एक नजर पत्नी पर डाली। उसका मुंह खुला था और वह एकटक उसे देखे जा रही थी, नाक और गालों पर आंसू बह रहे थे, जिन्हें पोंछा नहीं गया था। चेहरे पर निराशा का भाव था। उसका दिल पत्नी के प्रति भी अनुकम्पा से भर उठा।

"मैं इन्हें सता रहा हूं," उसने सोचा, "उन्हें मेरे कारण दुःख हो रहा है। मेरे चले जाने के बाद उनके लिए स्थिति बेहतर हो जाएगी।" यह बात वह उन्हें कह देना चाहता था, पर कहने की उसमें शक्ति नहीं थी। "पर कहने से क्या लाभ, मुझे कुछ करना चाहिए," उसने सोचा। उसने पत्नी की ओर देखा और अपने बेटे की ओर आंख का इशारा किया।

"इसे ले जाओ... बेचारा... और तुम भी," उसने कहा। साथ ही वह कहना चाहता था: "मुझे माफ़ कर दो," परन्तु उसके होठों से निकला "मुझे भूल जाओ," पर गलती सुधारने की उसमें ताकत नहीं थी। उसने केवल हाथ हिला दिया, इस ख्याल से कि जिसे समझना है, वह *उसका अर्थ समझ लेगा।*

और शीघ्र ही उसे यह बात स्पष्ट हो गई कि हर वह चीज़, जो उसे यन्त्रणा पहुंचा रही थी और जिससे वह अपने को निजात नहीं दिला पा रहा था, अब अपने आप गिर रही है, दोनों तरफ़ से गिर रही है, दसियों तरफ़ से, सभी तरफ़ से गिर रही है। उनके प्रति उसका दिल भर *आया। वह सोचने लगा कि उनके दर्द को दूर करने के लिए उसे जरूर* कुछ करना चाहिए। इस यन्त्रणा से अपने को और उनको मुक्ति दिलानी होगी। "यह कितनी अच्छी बात है, कितनी सरल!" उसने सोचा। "और यह दर्द?" उसने अपने आपसे पूछा, "इसका मैं क्या करूं? हे दर्द, कहां हो तुम?"

वह दर्द को ढूंढ़ने लगा।

"हां, यह रहा, पर इसकी क्या चिन्ता, रहने दो इसे।"

"और मौत! मौत कहां है?"

वह मौत के भय को खोजने लगा, जिसका वह अभ्यस्त हो चुका था, पर वह उसे मिला नहीं। मौत कहां गई? मौत है क्या चीज़? चूंकि मौत नहीं रही, इसलिए मौत का भय भी नहीं रहा।

मौत के स्थान पर रोशनी थी।

"तो यह बात है!" सहसा वह ऊंची आवाज़ में बोल उठा, "कैसा सुख है यह!"

यह सब क्षण भर में हो गया, पर इस क्षण का महत्त्व चिरन्तन था। आसपास खड़े लोगों के लिए उसकी मृत्यु-यातना और दो घण्टे तक रही। उसके गले में घरघराहट होती रही, उसका दुर्बल शरीर बार बार सिहरता रहा। पर धीरे धीरे यह ख़र ख़र और घरघराहट बन्द हो गई।

"बस, अन्त!" किसी ने कहा।

उसने ये शब्द सुने और अपने अन्तर्तम में इन्हें दोहराया। "मृत्यु का अन्त हो गया," उसने मन ही मन कहा, "अब मृत्यु नहीं रही।"

उसने एक लम्बी सांस खींची, जो बीच में ही टूट गयी, अपने अंग फैलाये और मर गया।

१८८६

पादरी सेर्गियस

(१)

पांचवें दशक में पीटर्सबर्ग में एक ऐसी घटना घटी, जिसने सभी क
आश्चर्यचकित कर दिया। हुआ यह कि एक सुन्दर राजकुमार ने, जो सम्रा
की कुइराज़ीर रेजीमेन्ट के एक दस्ते का कमांडर था और जिसके बारे
हर किसी का यही अनुमान था कि वह सम्राट निकोलाई प्रथम का दरबार
अफ़सर बनेगा, बड़ी उन्नति करेगा और जिसकी सम्राज्ञी की विशेष कृपा
पात्री एक बहुत ही सुन्दर दरबारी कुलीना के साथ एक महीने बाद शाद
होनेवाली थी, अपने पद से त्याग-पत्र दे दिया, मंगेतर से सम्बन्ध तो
लिया, अपनी छोटी-सी जागीर बहन के नाम कर दी और साधु बनने के
लिए मठ मे चला गया। वास्तविक कारणों से अपरिचित लोगों को यह
बहुत ही असाधारण और अनबूझ घटना प्रतीत हुई, किन्तु स्वयं राजकुमार
स्तेपान कासात्स्की को यह सब इतना स्वाभाविक लगा कि वह इसके सिवा
और कुछ करने की सोच ही नहीं सकता था।

स्तेपान कासात्स्की की उम्र बारह साल थी, जब उसके पिता का, जो गार्डों के अवकाशप्राप्त कर्नल थे, देहान्त हो गया था। पिता ने यह वसीयत की थी कि अगर मैं चल बसूं, तो मेरे बेटे को घर पर न रखकर कैडेटों* के सैनिक विद्यालय में भेज दिया जाये। बेटे को अपने से दूर करते हुए मां को चाहे कितना ही दुःख क्यों न हुआ, किन्तु वह दिवंगत पति की इच्छा की अवहेलना करने का साहस न कर सकी और उसने बेटे को सैनिक विद्यालय में भेज दिया। वह खुद अपनी बेटी वारवारा को साथ

*कैडेट—अभिजात सैनिक स्कूलों के विद्यार्थी।

लेकर पीटर्सबर्ग में ही आ गई ताकि बेटे के नजदीक रह सके और पर्व-त्योहारों पर उसे अपने पास घर में रख सके।

लड़का बहुत लायक और स्वाभिमानी था। वह पढ़ने-लिखने, विशेषतः गणित में, जिसमें उसकी विशेष रुचि थी, और युद्ध-कला तथा घुड़सवारी में भी दूसरों से बाजी मार लेता था। कुछ अधिक लम्बा होने पर भी वह सुन्दर और चुस्त-फुर्तीला था। इतना ही नहीं, अगर वह जब-तब भड़क न उठता, तो आचार-व्यवहार की दृष्टि से भी सैनिक विद्यालय का आदर्श कैडेट बन जाता। वह न तो शराब पीता था, न उसे औरतों का चसका था और झूठ बोलना तो जानता ही नहीं था। दूसरों के लिए आदर्श बनने में जो चीज उसके आड़े आती थी, वह थे गुस्से के दौरे। उस समय वह पूरी तरह अपना सन्तुलन खो बैठता था। एक बार वह एक कैडेट को, जिसने उसके खनिज-संग्रह का मजाक़ उड़ाना शुरू किया था, खिड़की से बाहर फेंकते-फेंकते ही रह गया था। एक और मौके पर तो उसने अपने को बिल्कुल तबाह ही कर लिया होता। उसने कटलेटों से भरी हुई एक बड़ी तश्तरी रसोईघर के प्रबन्धक पर उलट दी थी, अपने अफसर पर टूट पड़ा था और कहते हैं कि इसलिए उसकी मरम्मत की थी कि वह अपने शब्दों से मुकर गया था और मुंह पर सफ़ेद झूठ बोला था। अगर विद्यालय के डायरेक्टर ने मामले को दबाकर प्रबन्धक की छुट्टी न कर दी होती, तो कासात्स्की को साधारण सैनिक बना दिया गया होता।

अठारह साल की उम्र में वह कुलीनों की गार्ड रेजीमेन्ट का अफसर बन गया था। सम्राट निकोलाई प्रथम ने उन दिनों ही उसकी तरफ़ ध्यान दिया था, जब वह सैनिक विद्यालय में शिक्षा पा रहा था, और बाद को रेजीमेन्ट में भी कासात्स्की पर उसकी ख़ास नजर रहती थी। इसलिए सभी का यह ख़्याल था कि वह दरबारी अफसर बनेगा। कासात्स्की भी जी-जान से ऐसा चाहता था, सो भी केवल इसलिए नहीं कि वह महत्त्वाकांक्षी था, बल्कि मुख्यतः तो इसलिए कि विद्यार्थी-जीवन के दिनों में ही उसे सम्राट निकोलाई प्रथम से बेहद प्यार, हां, हां, बेहद प्यार हो गया था। निकोलाई जब कभी भी सैनिक स्कूल में आता – और वह अक्सर वहां आता था – तो सैनिक वर्दी पहने, बड़े बड़े डग भरते, लम्बे-तड़ंगे, चौड़े सीने, हुकदार नाक, मूंछों और छोटे गलमुच्छों तथा जोरदार आवाज में कैडेटों का अभिवादन करनेवाले इस व्यक्ति को देखकर कासात्स्की को एक प्रेमी की

सी ख़ुशी होती, बिल्कुल वैसी ही, जैसी बाद में उसे अपने दिल की रानी से भेंट होने पर हुई। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना था कि निकोलाई को देखकर उसे दिल की रानी से भी ज्यादा ख़ुशी होती थी। वह अपनी असीम भक्ति दिखाना चाहता, किसी तरह का बलिदान करना चाहता, अपने आपको उस पर न्योछावर कर देना चाहता। सम्राट निकोलाई यह जानता था और जान-बूझकर इस भावना को प्रोत्साहित करता था। वह कैडेटों के साथ नाटक-सा करता, उन्हें अपने गिर्द जमा कर लेता, कभी बालकों की सरलता से तो कभी मित्रों की भांति और कभी सम्राट की गौरव-गरिमा के साथ उनसे बातचीत करता। अफ़सर के साथ घटी कासात्स्की की अन्तिम घटना के बाद निकोलाई ने उससे कुछ भी नहीं कहा, मगर जब कासात्स्की उसके निकट आया, तो उसने मानो नाटक करते हुए उसे दूर हटा दिया, माथे पर बल डाला, उंगली दिखाकर धमकाया और बाद में जाते हुए कहा :

"यह समझ लीजिये कि मुझे सब कुछ मालूम है। मगर कुछ चीज़ों को मैं जानना नहीं चाहता। पर, वे मेरे यहां हैं।"

और उसने दिल की तरफ इशारा किया।

पढ़ाई ख़त्म होने पर जब कैडेट सम्राट के सामने आये, तो उसने इस घटना की याद तक नहीं दिलाई और हमेशा की भांति यह कहा कि किसी भी चीज़ के लिए वे सीधे उसके पास आ सकते हैं, कि सच्ची निष्ठा से उसकी और मातृभूमि की सेवा करें, कि वह हमेशा उनका सबसे बड़ा मित्र रहेगा। सदा की भांति, सभी के दिलों को इन शब्दों ने छू लिया, कासात्स्की ने बीती घटना को याद कर आंसू बहाये और मन ही मन यह कसम खाई कि अपने प्यारे ज़ार की सेवा के लिए कोई भी कसर नहीं उठा रखेगा।

कासात्स्की के रेजीमेन्ट मे जाने के बाद उसकी मां और बहन पहले मास्को और फिर अपने गांव चली गयीं। कासात्स्की ने आधी जागीर बहन को दे दी और बाकी आधी की आमदनी से उस ठाठदार रेजीमेन्ट में, जिसमें वह नियुक्त था, मुश्किल से उसका ख़र्च ही पूरा होता था।

बाहरी तौर पर तो कासात्स्की साधारण नौजवान सा ही लगता था, जो गार्डों का शानदार अफ़सर था, बढ़िया कैरियर बना रहा था, मगर उसके भीतर जटिल और तनावपूर्ण हलचल रहती थी। यह हलचल शायद बचपन से ही उसकी आत्मा में विद्यमान थी, उसने विभिन्न रूप धारण किये थे, मगर उसका सार एक ही था। वह यह कि जो कुछ भी वह

करे, उसमें ऐसी दक्षता और सफलता प्राप्त करे कि दूसरे दंग रह जायें, वाह, वाह कर उठें। ज्ञान-विज्ञान और पढ़ने-लिखने के मामले में भी ऐसी ही बात थी – वह इस तरह इनके पीछे पड़ता था कि जब तक उसकी तारीफ़ नहीं होने लगती थी और उसे मिसाल के रूप में पेश नहीं किया जाता था, इनका पिंड नहीं छोड़ता था। एक चीज में कमाल हासिल करके वह दूसरी की तरफ़ ध्यान देता। ऐसे ही उसने पढ़ने-लिखने में पहला स्थान प्राप्त किया और ऐसे ही, सैनिक विद्यालय के दिनों में ही, एक बार फ़्रांसीसी भाषा में बातचीत करते हुए कुछ परेशानी अनुभव होने पर उसने फ़्रांसीसी में भी रूसी भाषा के समान ही अधिकार प्राप्त करके दम लिया था। इसी तरह बाद में, जब शतरंज में उसकी दिलचस्पी हुई, तो विद्यालय के दिनों में ही वह उसका शानदार खिलाड़ी बन गया था।

जार और मातृभूमि की सेवा के सामान्य जीवन-ध्येय के अतिरिक्त, कोई न कोई अन्य लक्ष्य भी हमेशा उसके सामने रहता। वह लक्ष्य चाहे कितना ही मामूली क्यों न होता, वह उसमें अपने आपको पूरी तरह डुबो देता और उसे पूरा करके ही छोड़ता। उस लक्ष्य के पूरा होते ही कोई नया लक्ष्य उसके मानस-पट पर उभर आता और पहले का स्थान ले लेता। अपने को दूसरों से भिन्न दिखाने और इसके लिए अपने सामने प्रस्तुत लक्ष्य की पूर्ति का प्रयास ही उसके जीवन का सार था। चुनांचे अफ़सर बनते ही उसने अपने काम में कमाल हासिल करने का लक्ष्य बनाया और जल्दी ही आदर्श अफसर बन गया। हां, गुस्से में आपे से बाहर हो जाने की उसकी कमजोरी बनी रही, जो यहां भी उससे बेहूदा हरकतें करवा देती थी और उसके कार्यों की सफलता में बाधा डालती थी। फिर एक दिन सोसाइटी महफ़िलों में बातचीत के दौरान उसे अपनी सामान्य शिक्षा में कमियों का एहसास हुआ, उसने मन ही मन इस कमी को दूर करने का निर्णय किया, किताबें लेकर बैठ गया और जो कुछ चाहता था, वह प्राप्त कर लिया। इसके बाद उसने ऊंचे समाज में चमकना चाहा, नाचने में कमाल हासिल कर लिया और जल्दी ही ऊंचे समाज के सभी बॉल-नृत्यों और कुछ खास महफ़िलों में भी उसे निमंत्रित किया गया। मगर अपनी इस स्थिति से उसे सन्तोष नहीं हुआ। वह तो सबसे आगे रहने का आदी हो चुका था और इस मामले में वह दूसरों से कहीं पीछे था।

उन दिनों ऊंचे समाज में चार तरह के लोग थे। मेरे ख़्याल में हमेशा

ग्रौर हर जगह ही उसमें चार तरह के लोग होते हैं : १) धनी ग्रौर राजदरबार से सम्बन्धित; २) कम धनी, किन्तु जो जन्म ग्रौर लालन-पालन की दृष्टि से दरबार के ग्रन्तर्गत ग्राते हैं; ३) धनी, जो दरबारियों के निकट होने का प्रयास करते हैं; ग्रौर ४) जो धनी भी नहीं, राजदरबारी भी नहीं ग्रौर पहली तथा दूसरी तरह के लोगों के निकट होने की कोशिश करते हैं। कासात्स्की पहली तरह के लोगों में से नहीं था। ग्राखिरी दो तरह के लोगों में उसका हार्दिक स्वागत होता था। ऊंचे समाज में ग्राना-जाना शुरू करते समय उसने ऊंचे समाज की किसी नारी के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का ही लक्ष्य ग्रपने सामने रखा ग्रौर बहुत जल्दी ही, जैसी कि ख़ुद उसे भी ग्राशा नहीं थी, इसमें सफल हो गया। मगर शीघ्र ही उसने यह ग्रनुभव किया कि जिन सामाजिक हलक़ों में उसका उठना-बैठना था, वे नीचे हैं, कि उनसे ऊंचे हलक़े भी हैं, कि दरबारियों के इन ऊंचे हलक़ों के दरवाज़े उसके लिए बेशक खुले तो थे, फिर भी वहां वह पराया होता था; उसके साथ ग्रच्छा व्यवहार किया जाता था, मगर उनके सभी रंग-ढंग यह ज़ाहिर करते थे कि उनके ग्रपने हलक़े के लोग ग्रलग हैं ग्रौर वह पराया है। कासात्स्की ने इन लोगों के बीच ग्रपना स्थान बनाना चाहा। इसके लिए या तो दरबारी ग्रफ़सर बनना ज़रूरी था, जिसकी उसे ग्राशा थी, या फिर इस हलक़े की किसी लड़की से शादी करना ज़रूरी था। उसने ऐसा ही करने का निर्णय कर लिया। इसके लिए उसने जो लड़की चुनी, वह बहुत सुन्दर थी, राजदरबार से सम्बन्धित परिवार की थी, वह उस ऊंचे समाज की, जिसमें वह ग्रपने लिए जगह बनाना चाहता था, केवल ग्रपनी ही नहीं थी, बल्कि ऐसी थी, जिसके साथ उस ऊंचे समाज के उच्चतम ग्रौर बहुत ही दृढ़ स्थिति वाले लोग मेल-जोल बढ़ाने के लिए प्रयासशील रहते थे। यह काउंटेस कोरोत्कोवा थी। कासात्स्की केवल उन्नति करने के लिए ही उसके प्रति प्रणय-प्रदर्शन नहीं करता था। वह ग्रत्यधिक मनमोहिनी थी ग्रौर बहुत जल्दी ही उसे दिल से प्यार करने लगा। काउंटेस कोरोत्कोवा शुरू में तो कासात्स्की के प्रति बहुत उदासीन रही, मगर फिर ग्रचानक ही सब कुछ बदल गया। वह स्नेहमयी हो गयी ग्रौर उसकी मां तो बहुत ही उत्साह से उसे ग्रपने यहां ग्रामन्त्रित करने लगी।

कासात्स्की ने विवाह का प्रस्ताव किया, जो स्वीकार कर लिया गया। इतनी ग्रासानी से वह इतना सौभाग्यशाली हो गया था, इससे ग्रौर

मां-बेटी के कुछ अजीब रंग-ढंग से उसे हैरानी हुई। वह प्यार में अंधा हो गया था और इसलिए जो बात लगभग सारा शहर जानता था, उसकी तरफ उसका ध्यान ही नहीं गया था। वह बात यह थी कि उसकी मंगेतर एक साल पहले ज़ार निकोलाई की प्रेमिका थी।

(२)

विवाह के लिए नियत दिन से दो सप्ताह पहले कासात्स्की त्सारस्कोये सेलो में अपनी मंगेतर के देहाती बंगले में बैठा था। मई महीने का गर्म दिन था। कुछ देर बाग़ में टहलने के बाद वे दोनों लाइम वृक्षों के छायादार कुंज में एक बेंच पर जा बैठे। मलमल के सफ़ेद फ़्राक में मेरी ख़ास तौर पर बहुत सुन्दर लग रही थी। वह प्यार और भोलेपन की जीती-जागती तस्वीर-सी प्रतीत हो रही थी। वह कभी तो अपनी नज़र झुका लेती और कभी नज़र उठाकर उस बड़े डील-डौलवाले ख़ूबसूरत जवान को देखती, जो बहुत ही प्यार और सतर्कता से उसके साथ बातचीत करता था, अपनी मंगेतर की फ़रिश्तों जैसी पवित्रता को किसी तरह की ठेस पहुंचाने, उस पर किसी भी तरह की काली छाया डालने से डरता था। कासात्स्की पांचवें दशक के उन लोगों में से था, जैसे कि अब नहीं रहे, जो जानते-बूझते हुए यौन-सम्बन्धों में छूट लेते थे और इसके लिए अपनी आत्मा में ख़ुद को कोसते भी नहीं थे, नारियों से फ़रिश्तों जैसी पवित्रता की अपेक्षा करते थे और अपने सामाजिक हलक़े की हर लड़की में ऐसी ही स्वर्गिक पवित्रता देखते हुए उनके साथ ऐसे ही पेश आते थे। ऐसे दृष्टिकोण में बहुत कुछ गलत था, मर्द लोग अपने लिए जो छूट लेते थे, उसमें बहुत कुछ हानिकारक भी था। मगर औरतों के प्रति उनका यह रवैया आजकल के नौजवानों के इस रवैये से बहुत भिन्न था कि हर औरत और हर लड़की किसी मर्द की खोज में ही रहती है। मेरे ख़्याल में पहला दृष्टिकोण अच्छा था। लड़कियां यह समझते हुए कि उन्हें देवियां माना जाता है, कमोबेश देवियां बनने की कोशिश भी करती थीं। नारियों के बारे में कासात्स्की का भी ऐसा ही दृष्टिकोण था और अपनी मंगेतर को वह उसी रूप में देखता था। इस दिन तो वह ख़ास तौर पर उसके प्रेम में गहरा डूबा हुआ था और उसके प्रति शारीरिक निकटता की तनिक-सी भी इच्छा नहीं अनुभव कर रहा

था। इसके विपरीत, उसके पहुंच के बाहर होने के विचार से मुग्ध होकर उसे देख रहा था।

यह उठा और तलवार की मियान पर दोनों हाथ टिकाकर उसके सामने खड़ा हो गया।

"आदमी को जिस सुख की अनुभूति हो सकती है, उसे मैंने केवल अभी जाना है। यह सुख आपने, तुमने," उसने सहमी सहमी सी मुस्कान के साथ कहा, "दिया है मुझे।"

वह पारस्परिक सम्बन्धों की उस अवस्था मे था जब "तुम" कहने की अभी उसे आदत नहीं हुई थी। नैतिक दृष्टि से उसकी तुलना में अपने को नीचा अनुभव करते हुए कासात्स्की इस फ़रिश्ते को "तुम" कहते हुए भय अनुभव कर रहा था।

"मैं अपने को पहचान पाया हूं... तुम्हारी बदौलत – यह समझ पाया हूं कि जैसा मैं अपने को समझता था, उससे बेहतर हूं।"

"मैं तो बहुत पहले से ही यह जानती थी। इसीलिए तो आपको प्यार करने लगी।"

कहीं पास ही में बुलबुल ने तराना छेड़ दिया, हवा के झोंके से हरे हरे पत्ते सरसरा उठे।

कासात्स्की ने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर चूमा और उसकी आंखें डबडबा आयीं। वह समझ गयी कि उसने इस बात की कृतज्ञता प्रकट की है कि मैं उसे प्यार करने लगी हूं। वह कुछ क़दम इधर-उधर टहला, चुप हो गया और फिर अपनी मंगेतर के पास आकर बैठ गया।

"मैं आपको, तुमको, खैर, यह तो एक ही बात है। मैं अपने स्वार्थ से ही तुम्हारे निकट आया था, मैं ऊंचे समाज में अपने सम्बन्ध स्थापित करना चाहता था, मगर बाद में... तुम्हें समझने पर यह सब तुम्हारी तुलना में कितना तुच्छ हो गया। तुम इस बात के लिए मुझसे नाराज़ तो नहीं हो?"

मेरी ने कोई जवाब नहीं दिया और अपने हाथ से सिर्फ़ उसके हाथ को सहलाया।

कासात्स्की समझ गया कि इसका मतलब है: "नहीं, मैं नाराज़ नहीं हूं।"

"हां, तुमने कहा था कि," वह उलझन में पड़ गया, उसे लगा कि वह कुछ ज्यादा ही आगे बढ़ता जा रहा है, "तुमने कहा था कि मुझे

प्यार करने लगी हो, मैं विश्वास करता हूं कि यह ठीक है, मगर तुम मुझे माफ करना, ऐसा लगता है कि इसके सिवा कुछ और भी है, जो तुम्हे परेशान करता है, चिन्तित करता है। वह क्या है?"

"हां, या तो अभी या फिर कभी नहीं," मेरी ने मन ही मन सोचा, "मालूम तो उसे हर हालत में हो ही जायेगा। मगर अब वह मुझे ठुकरा कर जायेगा नहीं। ओह, लेकिन अगर वह चला गया, तो ग़ज़ब हो जायेगा!"

उसने बड़े प्यार से उसके लम्बे-तड़ंगे, सौजन्यपूर्ण और हृष्ट-पुष्ट व्यक्तित्व पर नजर डाली। अब वह निकोलाई की तुलना में इसे अधिक प्यार करती थी और अगर वह सम्राट न होता, तो इसकी जगह उसे स्वीकारने को कभी तैयार न होती।

"तो सुनिये। मैं झूठ नहीं बोल सकती। मुझे सब कुछ बताना ही होगा। आप पूछते हैं कि वह क्या है? वह यह है कि मैं प्यार कर चुकी हूं।"

उसने अपना हाथ ऐसे उसके हाथ पर रखा मानो मिन्नत कर रही हो।

कासात्स्की चुप रहा।

"आप जानना चाहते हैं कि किससे? सम्राट से।"

"उन्हें तो हम सभी प्यार करते हैं। मेरे ख़्याल मे तुम कालेज के दिनों में..."

"नहीं, उसके बाद। यह निरा पागलपन था, मगर बाद में सब ख़त्म हो गया। लेकिन मेरे लिए यह बताना जरूरी है कि..."

"मगर, इसमें क्या बात है?"

"नहीं, यह योंही सी बात नहीं है।"

उसने हाथों से मुंह ढांप लिया।

"आपका मतलब है कि आपने अपने को समर्पित कर दिया था?"

वह चुप रही।

"प्रेमिका के रूप मे?"

वह चुप रही।

कासात्स्की उछलकर खड़ा हुआ और एकदम पीला तथा कांपते कपोलों के साथ उसके सामने खड़ा रहा। अब उसे याद हो आया कि नेव्स्की सड़क पर निकोलाई से जब उसकी भेंट हुई थी, तो उसने कैसे तपाक से उसे बधाई दी थी।

"हे भगवान, मैंने यह क्या कर डाला, स्तेपान!"

"मुझे नहीं छूइये, नहीं छूइये मुझे। ओह, कैसा गहरा घाव किया है आपने!"

वह मुड़ा और घर की तरफ़ चल दिया। वहां मेरी की मां सामने आ गयी।

"क्या बात है, राजकुमार? मैं..." कासात्स्की के चेहरे की ओर देखकर वह चुप हो गयी। यह अचानक लाल-पीला हो उठा था।

"आप को सब कुछ मालूम था और आप मुझे आड़ बनाकर उन पर पर्दा डालना चाहती थीं। अगर आप नारी न होतीं तो..." अपना बड़ा सा मुक्का तानकर वह चिल्लाया, मुड़ा और बाहर भाग गया।

अगर कोई अन्य व्यक्ति उसकी मंगेतर का प्रेमी होता, तो उसने उसकी हत्या कर डाली होती, मगर यह तो उसका आराध्य ज़ार था।

अगले दिन उसने छुट्टी की अर्ज़ी और साथ ही इस्तीफ़ा दे दिया, लोगों से बचने के लिए बीमार होने का बहाना कर लिया और गांव चला गया।

गर्मी उसने अपने गांव में गुज़ारी और वहां ज़रूरी काम-काज निपटाये। गर्मी ख़त्म होने पर वह पीटर्सबर्ग नहीं लौटा और मठ मे जाकर साधु हो गया।

मां ने उसे पत्र लिखा, ऐसा निर्णायक कदम उठाने से मना किया। उसने जवाब दिया कि भगवान की सेवा अन्य सभी चीज़ों से ऊपर है और वह ऐसा करने की आवश्यकता अनुभव करता है।

केवल उसकी बहन ही, जो भाई की भांति ही गर्वीली और महत्त्वाकांक्षी थी, उसे समझती थी। वह समझती थी कि उसका भाई इसलिए साधु हो गया है कि उन लोगों से ऊंचा हो सके, जो उसे यह दिखाना चाहते थे कि वे उससे ऊंचे हैं। उसने ठीक ही समझा था। साधु बनकर उसने यह दिखा दिया था कि वह उन सभी चीज़ों को कितना तुच्छ मानता है, जो दूसरों के लिए इतना महत्त्व रखती हैं और जिन्हें अपनी सैनिक सेवा के ज़माने में वह ख़ुद भी इतनी महत्त्वपूर्ण मानता था। अब वह ऐसी नयी ऊंचाई पर जा खड़ा हुआ था, जहां से उन लोगों को नीचे खड़ा देख सकता था, जिनसे उसे पहले ईर्ष्या होती थी। मगर, जैसा कि उसकी बहन वार्या ने समझा था, केवल

वही एक भावना उसे निर्देशित नहीं कर रही थी। उसमें एक सच्ची धार्मिक भावना भी थी, जिसके बारे में वार्या अनजान थी। गर्व और हमेशा सब से आगे रहने की भावना के साथ घुल-मिलकर यह धार्मिक भावना उसे प्रेरित कर रही थी। मेरी (मंगेतर) से निराश होने पर, जिसे उसने फ़रिश्ता समझा था, उसके दिल को इतनी गहरी ठेस लगी थी कि वह एकदम हताश हो गया था और यह हताशा उसे किधर ले गयी? – भगवान की ओर, बचपन की उस आस्था की ओर, जो हमेशा उसमें बनी रही थी।

(३)

इंटरसेशन पर्व के दिन कासात्स्की मठ में चला गया।

मठ का बड़ा पादरी कुलीन था, विद्वान लेखक और धर्म-गुरु था। वह वालाख़िया से शुरू होनेवाली पादरियों की उस श्रृंखला में से था, जो अपने चुने हुए नेता और गुरु की निर्विवाद आज्ञाकारिता के लिए विख्यात थे। बड़ा पादरी प्रसिद्ध धर्म-गुरु अम्व्रोसी का चेला था, अम्व्रोसी मकारी का चेला था, जो धर्म-गुरु लिग्रोनिद का चेला था, और वह पाईसी वेलीच्कोव्स्की का चेला था। कासात्स्की ने इसी बड़े पादरी को अपना गुरु बना लिया।

कासात्स्की मठ में आकर दूसरे लोगों की तुलना में अपने को श्रेष्ठ तो अनुभव करता ही था, मगर साथ ही पहले के सभी कामों की तरह वह यहां मठ में भी बाहरी तथा आन्तरिक पूर्णता प्राप्त करने की कोशिश में सुख पाता था। जिस तरह रेजीमेन्ट में वह बढ़िया अफ़सर ही नहीं था, बल्कि ऐसा था, जो अपने निर्धारित कर्तव्यों से भी आगे जाता था और पूर्णता की सीमाओं को अधिक विस्तृत करता था, ऐसे ही साधु के रूप में भी उसने पूर्णता प्राप्त करने की कोशिश की। वह हमेशा खूब मेहनत करता, संयमी और शान्त रहता, नपी-तुली बात करता और केवल कार्यों में ही नहीं, विचारों में भी पवित्र और आज्ञाकारी रहता। इस अन्तिम गुण, या पूर्णता ने उसके जीवन को विशेष रूप से आसान बना दिया। इस मठ में, जहां बहुत लोग आते रहते थे, साधु के रूप में उससे जो मांगें की जाती थीं, उसे पसन्द नहीं थीं, उसके लिए प्रलोभन भी पैदा करती थीं, मगर आज्ञाकारिता से उनका उपचार हो जाता था। मेरा काम तर्क-

वितर्क करना नहीं, बल्कि जो काम सौंपा गया है, उसे चुपचाप पूरा करना है। यह काम चाहे किसी पुण्यात्मा की समाधि पर पहरा देने का हो, चाहे सहगान में हिस्सा लेने और चाहे होस्टल का हिसाब-किताब रखने का। गुरू की आज्ञाकारिता से ही किसी भी तरह के सन्देह पैदा होने की सम्भावना दूर हो जाती थी। अगर उसमें यह आज्ञाकारिता न होती, तो यह गिरजे की लम्बी और एक ही ढंग की प्रार्थनाओं, आगन्तुकों की हलचल और धर्म-भाइयों के अटपटे लक्षणों से परेशान हो उठता, मगर अब वह उन्हें ख़ुशी से सहन ही नहीं करता था, बल्कि इनसे उसे सन्तोष और सहारा भी मिलता था। "मालूम नहीं कि दिन में एक ही प्रार्थना को कई बार सुनने की क्या ज़रूरत है, मगर इतना जानता हूं कि ऐसा करना ज़रूरी है। यह जानते हुए कि ऐसा करना ज़रूरी है, मुझे उनमें ख़ुशी मिलती है।" गुरू ने उससे कहा था कि जैसे जिन्दा रहने के लिए ख़ुराक ज़रूरी है, उसी तरह आत्मिक जीवन के लिए आत्मिक ख़ुराक यानी गिरजे की प्रार्थना की ज़रूरत होती है। यह इसमें विश्वास करता था और वास्तव में ही गिरजे की प्रार्थना, जिसके लिए वह सुबह को कभी कभी बड़ी मुश्किल से उठ पाता था, उसे निश्चय ही शान्ति और ख़ुशी प्रदान करती थी। गुरू द्वारा निर्धारित उसकी सारी गति-विधियों में नम्रता और शंकाहीनता की चेतना से भी उसे ख़ुशी होती थी। अपनी इच्छाशक्ति को अधिकाधिक वश में करना और विनम्र होना ही उसके लिए पर्याप्त नहीं था, बल्कि ईसाइयों के सभी सद्गुणों को प्राप्त करना भी उसके लिए महत्त्वपूर्ण था। शुरू में उसे इसमें आसानी से सफलता भी मिली। अपनी सारी जागीर उसने बहन के नाम कर दी और इसके लिए उसे अफ़सोस भी नहीं हुआ। वह काहिल नहीं था। अपने से नीचेवालों के प्रति विनम्र रहना उसके लिए न केवल आसान ही था, बल्कि इससे उसे ख़ुशी भी होती थी। शारीरिक गुनाहों, जैसे कि लालच और कामुकता पर भी उसने आसानी से विजय प्राप्त कर ली। गुरू ने उसे विशेष रूप से इन गुनाहों के बारे में चेतावनी दी थी, मगर कासात्स्की ख़ुश था कि वह इनसे मुक्त था।

मंगेतर से सम्बन्धित स्मृतियां ही उसे यातना देती थीं। केवल स्मृतियां ही नहीं, बल्कि इस बात की सजीव कल्पना कि क्या हो सकता था। बरबस ही उसे सम्राट की एक अपनी परिचित कृपा-पात्री का स्मरण हो आता। बाद में उसने शादी कर ली थी और वह बढ़िया बीवी और मां बन गयी

थी। उसके पति को महत्वपूर्ण पद मिल गया था, प्रतिष्ठा और अधिकार मिल गये थे तथा उसकी अच्छी और पश्चातापपूर्ण पत्नी भी थी।

अच्छे क्षणों में कासात्स्की को इन विचारों से परेशानी नहीं होती थी। अच्छे क्षणों में जब वह इन बातों को याद करता, तो उसे ख़ुशी होती कि इन प्रलोभनों से बच गया। मगर ऐसे क्षण भी आते, जब जिन चीज़ों के सहारे अब वह जीता था, अचानक धुंधली पड़ जातीं, उनमें उसका विश्वास तो न ख़त्म होता, मगर वे उसकी नज़र के सामने से हट जातीं, वह उन्हें अपने मन में याद न कर पाता और तब स्मृतियां और—कितनी भयानक बात थी यह! —अपने जीवन के इस परिवर्तन के प्रति पश्चाताप की भावना उसे दबोच लेती।

ऐसी स्थिति में आज्ञाकारिता, कार्य और प्रार्थना में व्यस्त सारा दिन ही उसे बचाता। वह सदा की भांति प्रार्थना करता सिर झुकाता, हर दिन से ज्यादा प्रार्थना करता, मगर केवल शरीर से, आत्मा के बिना। ऐसा एक और कभी दो दिन तक जारी रहता और फिर ख़ुद ही वह ठीक हो जाता। मगर ऐसे एक या दो दिन बड़े भयानक होते। कासात्स्की को लगता कि यह न तो अपने वश में है, न भगवान के, बल्कि किसी और ही के वश में है। ऐसे समय में वह जो कुछ कर सकता था और करता था, वह यही था कि गुरू की सलाह पर अमल करना, किसी तरह अपने को सम्भाले रखना, इस वक़्त कोई भी क़दम न उठाना और इन्तज़ार करना। कुल मिलाकर, इस सारे समय में वह अपनी इच्छानुसार नहीं, गुरू की इच्छानुसार जीता था और इस आज्ञाकारिता से उसे विशेष चैन मिलता था।

तो इस तरह कासात्स्की ने उस मठ में सात साल बिता दिये। तीसरे साल के अन्त में उसे सेर्गियस के नाम से विधिवत् हियरोमोंक* बना दिया गया। उसके आन्तरिक जीवन के लिए यह महत्त्वपूर्ण घटना थी। धार्मिक अनुष्ठान के समय तो उसे पहले भी बड़े सन्तोष और आत्मिक उत्थान की अनुभूति होती थी और अब, जब उसे स्वयं पूजा कराने का अवसर मिलता, तो उसकी आत्मा ख़ुशी से नाच उठती। मगर बाद में यह अनुभूति धीरे धीरे मन्द पड़ती गयी और एक बार जब उसे उस उखड़ी उखड़ी मनःस्थिति में, जिसका वह कभी कभी शिकार हो जाता था, पूजा करानी पड़ी तो

* साधु-पुजारी।

उसने अनुभव किया कि इस ख़ुशी की अनुभूति का भी अन्त हो जायेगा। वास्तव में ऐसा ही हुआ भी। यह अनुभूति मन्द पड़ गयी, मगर आदत सी रह गयी।

कुल मिलाकर, मठ के सातवें साल में उसे बड़ी ऊब अनुभव होने लगी। जो कुछ उसे सीखना था, जो कुछ उसे प्राप्त करना था, वह सीख और प्राप्त कर चुका था। करने के लिए कुछ भी बाक़ी न रह गया था।

किन्तु दूसरी ओर, उदासीनता की यह भावना अधिकाधिक गहरी होती जा रही थी। इसी बीच उसे अपनी मां की मृत्यु और मेरी की शादी की ख़बर मिली। मगर इन दोनों ख़बरों का उसके दिल पर कोई असर नहीं हुआ। उसका सारा ध्यान, उसकी सारी दिलचस्पी उसके आन्तरिक जीवन पर केन्द्रित थी।

उसके साधु बनने के बाद चौथे साल में बिशप की उस पर विशेष कृपा-दृष्टि हो गयी और गुरू ने उससे कहा कि अगर उसे कोई ऊंचा पद दिया जाये, तो वह इनकार न करे। उस समय साधुओं की उसी महत्त्वाकांक्षा ने, जिसे दूसरे साधुओं में देखकर उसे घृणा होती थी, उसकी आत्मा में सिर उठाया। उसे राजधानी के निकटवर्ती एक मठ में नियुक्त किया गया। उसने इनकार करना चाहा, मगर गुरू ने उसे स्वीकार करने का आदेश दिया। उसने वैसा ही किया और गुरू से विदा लेकर दूसरे मठ में चला गया।

राजधानी के निकटवर्ती मठ में सेर्गियस का आना उसके जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। यहां सभी तरह के अनेक प्रलोभन थे और उसकी सारी शक्ति उन्हीं से बचने में लगी रहती थी।

पहले मठ में नारियों की ओर खिंचाव के प्रलोभन से सेर्गियस को ख़ास परेशानी नहीं हुई थी। मगर यहां यह प्रलोभन बहुत ही ज़ोर-शोर से सामने आया और इतना ही नहीं, उसने एक निश्चित रूप तक धारण कर लिया। अपनी बुरी हरकतों के लिए बदनाम एक महिला ने सेर्गियस का ध्यान अपनी ओर खींचना शुरू किया। उसने सेर्गियस से बातचीत की और अपने यहां आने का अनुरोध किया। सेर्गियस ने दृढ़ता से इनकार कर दिया, मगर अपनी इच्छा के सुनिश्चित रूप से भयभीत हो उठा। वह इतना डरा कि गुरू को इसके बारे में लिख दिया। किन्तु उसे इससे ही सन्तोष नहीं हुआ और अपने को और अधिक झुकाने के लिए उसने अपने

युवा सहायक साधु को बुलाया, शर्म से पानी-पानी होते हुए उसके सामने अपनी दुर्बलता स्वीकार की, उससे यह अनुरोध किया कि वह उस पर कड़ी नज़र रखे और उसे प्रार्थना तथा गिरजे के काम-काज के सिवा और कहीं न जाने दे।

इसके अलावा उसकी परेशानी का एक बड़ा कारण यह था कि इस मठ का बड़ा पादरी, जो बहुत दुनियादार, चलता पुर्ज़ा तथा पद-लोलुप व्यक्ति था, सेर्गियस को फूटी आंखों नहीं सुहाता था। बहुत कोशिश करने पर भी सेर्गियस उसके प्रति इस घृणा पर क़ाबू नहीं पा सका। वह सहन करता था, मगर मन ही मन भर्त्सना किये बिना नहीं रह पाता था। यह झल्लाहट एक दिन उभरकर सामने आ ही गयी।

नये मठ में आने के एक साल बाद यह क़िस्सा हुआ। इंटरसेशन पर्व के अवसर पर बड़े गिरजे में सन्ध्या-उपासना हो रही थी। बहुत बड़ी संख्या में लोग आये थे। ख़ुद बड़ा पादरी पूजा करवा रहा था। सेर्गियस वहीं खड़ा था, जहां आम तौर पर खड़ा होता था और प्रार्थना कर रहा था। यह कहना अधिक सही होगा कि वह मानसिक संघर्ष की उस स्थिति में था, जिसमें विशेषतः बड़े गिरजे में पूजा के समय (जब वह स्वयं पूजा न कराता होता) हमेशा होता था। संघर्ष यह था कि आगन्तुक बड़े लोगों, विशेषकर महिलाओं के कारण उसे खीझ महसूस हो रही थी। वह कोशिश कर रहा था कि उनकी ओर न देखे, गिरजे में जो कुछ हो रहा था, उसकी तरफ़ ध्यान न दे, यह न देखे कि कैसे एक सिपाही लोगों को धकियाता हुआ उन्हें गिरजे में पहुंचाता था, कैसे महिलाएं साधुओं की ओर इशारे करके उन्हें एक-दूसरी को दिखाती थीं—अक्सर ख़ुद उसकी तरफ़ और सुन्दरता के लिए विख्यात एक अन्य साधु की तरफ इशारे किये जाते थे। वह अपने ध्यान पर एक पर्दा सा डाल लेना चाहता था, इस कोशिश में था कि देव-प्रतिमा वाली दीवार के पास जलती मोमबत्तियों की लौ, देव-प्रतिमाओं और पूजा करानेवाले पुजारियों के सिवा और कुछ न देखे, गाये और कहे जानेवाले पूजा के शब्दों के सिवा और कुछ न सुने तथा अपने कर्त्तव्य की पूर्ति की चेतना के सिवा, जो अनेक बार सुनी प्रार्थनाओं को सुनते और दोहराते हुए उसे अनुभव होती थी, अन्य कोई भावना मन में न आने दे।

सेर्गियस इस तरह खड़ा हुआ जहां आवश्यक होता सिर झुकाता और सलीब का निशान बनाता और कभी तो उदासीनता से भर्त्सना करता हुआ तथा कभी जान-बूझकर विचारों तथा भावनाओं को जड़ बनाता हुआ अपने से संघर्ष कर रहा था। इसी समय गिरजे का प्रबन्धक साधु निकोदीम उसके पास आया। सेर्गियस के लिए वह भी खीझ का एक अन्य बड़ा कारण था और वह अनजाने ही बड़े पादरी की चापलूसी तथा ख़ुशामद के लिए उसकी भर्त्सना करता था। साधु निकोदीम ने बहुत झुककर, दोहरे होते हुए सेर्गियस को प्रणाम किया और कहा कि बड़े पादरी ने उसे अपने पास वेदी पर बुलाया है। सेर्गियस ने अपना चोग़ा ठीक किया, टोपी पहनी और सावधानी से भीड़ के बीच से चल दिया।

"Lise, regardez à droite, c'est lui"*, उसे किसी महिला की आवाज़ सुनाई दी।

"Où, où? Il n'est pas tellement beau"**.

उसे मालूम था कि ये शब्द उसके बारे में कहे गये हैं। उन्हें सुनकर उसने उन शब्दों को दृढ़ता से दोहराया, जिन्हें वह प्रलोभन के क्षणों में हमेशा दोहराता था – "भगवान, हमें प्रलोभनों से बचाओ।" सिर और नज़रें झुकाये हुए वह चबूतरे के पास से गुज़रा, उसने पूरी बांहों के चोले पहने गायकों के गिर्द, जो इस समय देव-प्रतिमा वाली दीवार के निकट से गुज़र रहे थे, चक्कर काटा और उत्तरी दरवाज़े में दाख़िल हुआ। वेदी पर पहुंचकर उसने परम्परा के अनुसार देव-प्रतिमा के सामने सलीब का निशान बनाया, बहुत झुककर प्रणाम किया तथा इसके बाद सिर उठाकर बड़े पादरी और उसकी बग़ल में खड़े चमकते-दमकते व्यक्ति को कनखियों से देखा, मगर चुप रहा।

बड़ा पादरी दीवार के पास खड़ा था, उसके छोटे छोटे गुदगुदे हाथ उसकी तोंद पर टिके हुए थे और उंगलियां पोशाक के गोटे-तिल्ले से छेड़-छाड़ कर रही थीं। वह सुनहरी गोट और कंधे की फीतियोंवाली जनरल की वर्दी पहने व्यक्ति से मुस्कराता हुआ बातचीत कर रहा था। सेर्गियस ने सैनिक की अपनी पैनी दृष्टि से अब यह सब कुछ झांक लिया था। वह

---

* लीज़ा, दायीं ओर देखो, यह है वह (फ़्रेंच)।

** कहां, कहां? वह तो इतना सुन्दर नहीं है (फ़्रेंच)।

जनरल कभी उनकी रेजीमेन्ट का कमांडर था। अब शायद वह किसी महत्त्वपूर्ण पद पर था और बड़े पादरी को यह मालूम था, जैसा कि पादरी सेर्गियस का फ़ौरन इस बात की ओर ध्यान गया था। इसी लिए तो गंजे बड़े पादरी का थलथल चेहरा ऐसे चमक रहा था। सेर्गियस के दिल को इससे ठेस लगी, वह खिन्न हो उठा और जब यह मालूम हुआ कि सिर्फ़ जनरल की जिज्ञासा पूरी करने के लिए, जनरल के शब्दों में, अपने पुराने सहकर्मी को देखने की उसकी इच्छा पूरी करने के लिए ही उसे बुलाया गया है, तो उसका दुःख और भी बढ़ गया।

"फ़रिश्ते के रूप में आपको देखकर बहुत ख़ुशी हुई," जनरल ने सेर्गियस की तरफ़ हाथ बढ़ाते हुए कहा, "आशा करता हूं कि अपने पुराने साथी को भूले नहीं होंगे।"

सफ़ेद दाढ़ी में बड़े पादरी का लाल चेहरा खिला हुआ था मानो जनरल के शब्दों का अनुमोदन कर रहा हो। अच्छी देख-माल से जनरल का *चमकता चेहरा और उसकी आत्म-तुष्ट मुस्कान, उसके मुंह से शराब और* गलमुच्छों से सिगार की गन्ध – इन सब चीज़ों से सेर्गियस बुरी तरह झल्ला उठा। उसने फिर से बड़े पादरी के सामने सिर झुकाया और कहा:

"श्रद्धेय, आपने मुझे याद किया है?" वह रुका और उसका चेहरा तथा मुद्रा मानो पूछ रहे थे – किसलिए?

बड़ा पादरी बोला:

"हां, जनरल से मिलने के लिए।"

"श्रद्धेय, मैंने तो प्रलोभनों से बचने के लिए ही दुनिया छोड़ी थी," उसने फक हुए चेहरे और कांपते होंठों से कहा, "आप देवालय में और प्रार्थना के समय मुझे उनकी ओर क्यों धकेलते हैं?"

"तो जाओ, जाओ," त्यौरी चढ़ाते और गुस्से में आते हुए बड़े पादरी ने कहा।

अगले दिन सेर्गियस ने बड़े पादरी और धर्म-भाइयों से अपने घमंड के लिए क्षमा मांगी और साथ ही प्रार्थना में बितायी गयी रात के बाद यह निर्णय किया कि उसे यह मठ छोड़ देना चाहिए। इसके लिए उसने अपने गुरू को पत्र लिखा और उनसे अनुरोध किया कि उसे उसी मठ में लौटने की अनुमति दे दी जाये। उसने लिखा कि गुरू की सहायता के बिना प्रलोभनों के विरुद्ध संघर्ष करने में अपने को दुर्बल और अक्षम पा रहा

हूं। उसने घमंड के रूप में अपने पाप को स्वीकार किया। अगली डाक से गुरू का पत्र आया, जिसमें उन्होंने लिखा था कि घमंड ही उसकी सारी मुसीबतों के लिए ज़िम्मेदार है। गुरू ने स्पष्ट किया था कि वह केवल इसलिए भड़क उठा था कि उसने भगवान के नाम पर धार्मिक पद त्याग कर नम्रता नहीं दिखाई थी, बल्कि अपने घमंड का प्रदर्शन करने के लिए, यह दिखाने की ख़ातिर कि देखो मैं कैसा हूं, मुझे किसी भी चीज़ की तमन्ना नहीं है। इसी लिए वह बड़े पादरी की हरकत को बर्दाश्त नहीं कर सका। उसके दिल में यह ख़्याल आया कि मैंने तो भगवान के नाम पर सब कुछ त्याग दिया और ये एक जानवर की तरह मेरा प्रदर्शन कर रहे हैं। "अगर तुमने भगवान के नाम पर उन्नति की ओर से मुंह मोड़ा होता, तो तुम यह सहन कर गये होते। अभी तुम्हारा दुनियावी घमंड दूर नहीं हुआ है। बेटा सेर्गियस, मैंने तुम्हारे बारे में सोचा, तुम्हारे लिए प्रार्थना की और भगवान ने मुझे तुम्हारे लिए यह रास्ता दिखाया—पहले की तरह ही जियो और विनम्र बनो। इसी समय यह पता चला कि पवित्रात्मा तपस्वी इल्लारिओन का उनकी कोठरी में स्वर्गवास हो गया है। वे अठारह साल तक वहां रहे थे। ताम्बीनो मठ के बड़े पादरी ने पूछा है कि क्या कोई धर्म-भाई वहां रहने का इच्छुक नहीं है? तुम्हारा पत्र मेरे सामने पड़ा था। तुम ताम्बीनो के बड़े पादरी पाईसी के पास चले जाओ, मैं उन्हें पत्र लिख दूंगा और तुम उनसे कहना कि इल्लारिओन की कोठरी में रहना चाहते हो। यह बात नहीं है कि तुम इल्लारिओन का स्थान ले सकते हो, मगर अपने घमंड पर काबू पाने के लिए तुम्हें एकान्तवास की ज़रूरत है। भगवान तुम्हारा भला करें।"

सेर्गियस ने गुरू का आदेश माना, बड़े पादरी को पत्र दिखाया और उसकी अनुमति से अपनी कोठरी और चीज़ें मठ को सौंप कर ताम्बीनो की ओर रवाना हो गया।

ताम्बीनो मठ का बड़ा पादरी व्यापारी वर्ग का बढ़िया प्रबन्धक था। वह सीधे, सरल ढंग से सेर्गियस से मिला और उसे इल्लारिओन की कोठरी में बसा दिया। शुरू में उसने एक धर्म-भाई भी उसकी देख-भाल के लिए दिया, मगर बाद में सेर्गियस की इच्छानुसार उसे अकेला छोड़ दिया गया। कोठरी पहाड़ में खोदी हुई गुफा थी। इल्लारिओन को वहीं दफनाया गया था। पिछले हिस्से में इल्लारिओन की क़ब्र थी और अगले हिस्से में सोने

के लिए एक आला था, जिसमें घास-फूस का गद्दा बिछा था, छोटी सी मेज थी और एक ताक पर देव-प्रतिमायें तथा पुस्तकें रखी थीं। कोठरी के बाहरी दरवाजे को ताला लगाया जा सकता था और उसके पास ही एक ताक था, जिस पर कोई साधु दिन में एक बार मठ से भोजन लाकर रख देता था।

इस तरह पादरी सेर्गियस एकान्तवासी हो गया।

(४)

सेर्गियस के एकान्तवास के छठे वर्ष में श्रोवटाइड पर्व के अवसर पर पड़ोस के शहर के कुछ धनी लोग मौज मनाने के लिए इकट्ठे हुए। ब्लीनी* और शराब की दावत के बाद सभी पुरुष-नारियां स्लेजों में सैर-सपाटे के लिए चल दिये। इनमें दो वकील थे, एक धनी जमींदार, एक अफ़सर और चार नारियां थीं। एक अफ़सर की और दूसरी जमींदार की बीवी थी, तीसरी जमींदार की कुंआरी बहन और चौथी एक बहुत सुन्दर और धनी नारी थी, जिसका विवाह-विच्छेद हो चुका था। वह बड़ी अजीब-सी औरत थी और अपने रंग-ढंग से नगरवालों को आश्चर्यचकित और उनमें सनसनी पैदा करती रहती थी।

मौसम बहुत ही सुहाना था, सड़क साफ़ सपाट थी। नगर से कोई दसेक वेर्स्ता दूर आकर उन्होंने स्लेजें रोकीं और यह सलाह करने लगे— आगे चला जाये या वापस।

"यह सड़क किधर जाती है?" तलाक प्राप्त सुन्दरी माकोवकिना ने पूछा।

"ताम्बीनो, यहां से बारह वेर्स्ता है," उसकी हाजिरी बजानेवाले वकील ने कहा।

"उसके बाद?"

"उसके बाद मठ के पास से गुजरती हुई यह सड़क ल० पहुंचती है।"

---

*पूड़े की तरह का रूसी पकवान।

"उसी मठ के पास से, जहां वह पादरी सेर्गियस रहता है?"

"हां।"

"कासात्स्की? वही सुन्दर एकान्तवासी?"

"हां।"

"महिलाओ और श्रीमानो! हम कासात्स्की के पास चलते हैं। ताम्बोनो में ही कुछ खायें-पियेंगे, आराम करेंगे।"

"मगर तब हम रात होते तक घर नहीं लौट सकेंगे।"

"कोई बात नहीं, कासात्स्की के यहां ही रात गुजारेंगे।"

"हां, वहां मठ का अच्छा अतिथि-भवन भी है। माखीन के मुकदमे की पैरवी के वक्त मैं वहां रहा था।"

"नहीं, मैं तो कासात्स्की के यहां ही रात बिताऊंगी।"

"अपनी अपार आकर्षण-शक्ति के बावजूद भी आपके लिए ऐसा कर पाना असम्भव है!"

"असम्भव है? तो शर्त हो जाये।"

"हो जाये। अगर आप उसके यहां रात बिता लें, तो जो मांगेंगी, वही दूंगा।"

"A discrétion"*.

"अगर आप भी ऐसा ही करने को राजी हों!"

"हां, हां। तो चलें।"

उन्होंने कोचवानों को शराब पिलाई और अपने लिए केकों, शराब की बोतलों और टॉफियों से भरी एक पेटी साथ ले ली। महिलाएं अपने सफ़ेद फ़र-कोटों में गुड़ी-मुड़ी सी बन गयीं। कोचवान आपस में बहसने लगे कि सबसे आगे किसकी स्लेज रहेगी। उनमें से एक, जो जवान और दबंग था, शान से अपनी सीट पर एक पहलू को मुड़ा, उसने अपना लम्बा चाबुक सटकारा और चिल्लाकर घोड़ों को हांका। घोड़ों की घंटियां टनटना उठीं और स्लेज के निचले भाग जोर से घिसटने लगे।

स्लेज कुछ कुछ प्रकम्पित थी, हिचकोले खा रही थी। बाजू का घोड़ा बड़ी तेजी और सम-गति से अपनी बंधी हुई पूंछ को सुन्दर जोत के ऊपर उठाये हुए सरपट दौड़ा जा रहा था। साफ़-सपाट रास्ता तेजी से पीछे

*जो मैं मांगूंगी।

छूटता जा रहा था। बांका कोचवान लगामों से खिलवाड़-सा कर रहा था। माकोवकिना और उसकी बग़ल में बैठी नारी के सामने बैठा हुआ वकील तथा अफ़सर कुछ बक-बक करते जा रहे थे। ख़ुद माकोवकिना फ़र कोट में लिपटी-लिपटायी, निश्चल बैठी हुई सोच रही थी: "हमेशा यही कुछ होता है, इसी तरह की गन्दगी से वास्ता रहता है। शराब और तम्बाकू की गन्ध वाले चमकते लाल चेहरे, वही एक तरह के शब्द, वही एक तरह के विचार और सभी कुछ गन्दगी के आस-पास ही चक्कर काटता रहता है। ये सभी इससे ख़ुश हैं, इन्हें इस बात का यक़ीन भी है कि ऐसे ही होना चाहिए और ये ज़िन्दगी भर ऐसे ही जी भी सकते हैं। मगर मैं ऐसा नहीं कर सकती, मुझे ऊब महसूस होती है। मैं तो कुछ ऐसा चाहती हूं कि यह सब नष्ट-भ्रष्ट हो जाये, उलट-पलट जाये। बेशक कुछ उसी तरह की चीज़ हो जाये, जैसी कि शायद सरातोव में हुई–वे लोग कहीं चल दिये और ठंड में जमकर रह गये। ऐसी स्थिति में हमारे ये लोग क्या करते? कैसा व्यवहार होता इनका? शायद, बहुत ही घटिया। हर कोई अपनी ही सोचता। हां, ख़ुद मैं भी घटियापन दिखाती। मगर कम से कम मैं ख़ूबसूरत तो हूं। ये इतना तो जानते ही हैं। और वह सन्यासी? क्या वह अब यह नहीं समझता? नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। यही तो एक चीज़ है, जो वे समझते हैं। पतझर के दिनों में उस कैडेट की तरह। कैसा उल्लू था वह..."

"इवान निकोलायेविच!" वह बोली।

"क्या हुक्म है सरकार?"

"कितनी उम्र है उसकी?"

"किसकी?"

"कासात्स्की की।"

"मेरे ख़्याल में चालीस से कुछ ऊपर।"

"क्या वह सभी से भेंट करता है?"

"सभी से, मगर हर वक़्त नहीं।"

"मेरे पैर ढक दीजिये। ऐसे नहीं। कैसे फूहड़ हैं आप! और अच्छी तरह, और अच्छी तरह ढकिये, ऐसे। मेरे पैरों को दबाने की ज़रूरत नहीं है।"

इस तरह वे उस जंगल में पहुंचे, जहां सेर्गियस की कोठरी थी।

माकोवकिना स्लेज से उतर गयी और बाक़ी लोगों से उसने आगे जाने को कहा। उन्होंने उसे ऐसा करने से मना किया, मगर इससे वह झल्ला उठी और ज़ोर देते हुए बोली कि वे चले जायें। तब स्लेजें आगे बढ़ गयीं और वह अपना फ़र का सफ़ेद कोट पहने पगडंडी पर चल दी। वकील भी स्लेज से उतर गया और यह देखने को रुक गया कि आगे क्या होता है।

(५)

पादरी सेर्गियस के एकान्तवास का छठा साल चल रहा था। उनचास साल की उम्र थी उसकी। जीवन उसका कठिन था। व्रतों और प्रार्थनाओं के कारण कठिन नहीं था वह। यह तो कुछ मुश्किल नहीं था, मगर उसे परेशान करता था मानसिक संघर्ष, जिसकी उसने बिल्कुल आशा नहीं की थी। इस संघर्ष के दो कारण थे—सन्देह और वासना। ये दोनों शत्रु हमेशा एकसाथ ही सिर उठाते। उसे लगता कि ये दो भिन्न शत्रु हैं, जबकि वास्तव में यह एक ही था। जैसे ही सन्देह मिटता, वैसे ही वासना भी मिट जाती। मगर वह सोचता कि ये दो अलग अलग शैतान हैं और उनसे अलग अलग ही संघर्ष करता।

"हे भगवान! हे भगवान!" वह सोचता। "तुम मुझमें आस्था क्यों नहीं पैदा करते? जहां तक वासना का सम्बन्ध है, तो उसके विरुद्ध तो सन्त एंथनी और दूसरों ने भी संघर्ष किया, मगर आस्था? उनमें आस्था थी, पर मेरे जीवन में तो ऐसे क्षण, घण्टे और दिन भी आते हैं, जब मुझमें आस्था नहीं होती। यदि यह संसार, इसका सारा सौन्दर्य पाप है और हमें इसे त्याग देना चाहिए, तो यह संसार विद्यमान ही क्यों है? तो तुमने यह प्रलोभन पैदा क्यों किया? प्रलोभन? तो क्या यह प्रलोभन नहीं है कि मैं दुनिया की ख़ुशियां ठुकराकर वहां अपने लिए कुछ तैयार कर रहा हूं, जहां शायद कुछ भी नहीं है," उसने अपने आप से कहा और कांप उठा, ख़ुद से ही उसे बेहद घृणा-सी हुई। "नीच! कमीने! महात्मा बनना चाहता है!" उसने अपने आप को कोसा। वह प्रार्थना करने लगा। उसने प्रार्थना शुरू ही की थी कि वह उस रूप में बिल्कुल सजीव-सा अपनी आंखों के सामने उभरा, जैसा कि मठ में लगता था—पादरियों का चोग़ा पहने, सिर पर टोपी रखे, तेजस्वी रूप में। उसने सिर हिलाकर कहा—नहीं,

नहीं, यह वास्तविकता नहीं है। यह धोखा है। मैं दूसरों को धोखा दे सकता हूं, मगर अपने को और भगवान को नहीं। तेजस्वी नहीं, बल्कि दयनीय और हास्यास्पद व्यक्ति हूं मैं।" उसने अपने चोगे के पल्ले हटाये, जांघिया पहने हुए अपनी दयनीय टांगों को देखा और मुस्करा दिया।

इसके बाद उसने टांगों को ढक लिया, प्रार्थना करने, सलीब बनाने और शीश नवाने लगा। "क्या यह बिस्तर ही मेरी अरथी बनेगा?" उसने प्रार्थना के ये शब्द कहे। किसी शैतान ने मानो फुसफुसाकर उसके कान में कहा: "एकाकी बिस्तर भी तो अरथी ही है। झूठ, यह झूठ है।" उसे अपनी कल्पना में उस विधवा के कंधे दिखाई दिये, जिसके साथ उसने सम्भोग किया था। उसने अपने को झटका दिया और आगे प्रार्थना करने लगा। नियमों का पाठ समाप्त कर उसने इंजील उठायी, उसे खोला और अचानक वही पृष्ठ खुल गया, जो बार-बार दोहराने के कारण उसे जबानी याद हो गया था: "मैं आस्था रखता हूं भगवान, मेरी अनास्था की सहायता करो।" उसने अपने दिल में पैदा होनेवाले सभी सन्देहों को वापस खींच लिया। जिस तरह सन्तुलनहीन डांवांडोल चीज़ को टिकाया जाता है, उसी तरह हिलती-डुलती टांगों वाली तिपाई पर अपनी आस्था को टिकाकर वह सावधानी से पीछे हट गया ताकि वह कहीं ठोकर खाकर गिर न जाए। फिर से उसने अपनी आंखों के सामने पर्दे खींच लिये और वह शान्त हो गया। उसने अपने बचपन की प्रार्थना दोहराई: "भगवान, मुझे अपनी शरण में ले लो, मुझे अपनी शरण में ले लो..." और इससे उसके मन को चैन ही नहीं मिला, बल्कि वह ख़ुशी से अभिभूत भी हो उठा। उसने सलीब का निशान बनाया और गर्मी के दिनों का चोग़ा सिर के नीचे रखकर तंग-सी बेंच वाले अपने बिस्तर पर लेट गया। उसकी आंख लग गयी। कच्ची-सी नींद में उसे लगा मानो वह घंटियों की टनटनाहट सुन रहा है। यह सपना था या वास्तविकता, वह यह नहीं जानता था। मगर इसी समय दरवाज़े पर दस्तक हुई और वह पूरी तरह जाग गया। अपने कानों पर विश्वास न करते हुए वह उठा। फिर से दस्तक हुई। हां, यह तो निकट ही, उसी के दरवाज़े पर दस्तक हुई थी और किसी औरत की आवाज़ भी सुनाई दी थी।

"हे भगवान! महात्माओं की जीवनियों में मैंने जो यह पढ़ा है कि शैतान नारी का रूप धारण करके आता है, तो क्या यह सच हो सकता

है? .. हां, यह आवाज़ तो नारी की ही है। कोमल, सहमी और प्यारी-सी आवाज़! थू!" उसने थूका। "नहीं, नहीं, मुझे यह भ्रम हो रहा है," उसने कहा और उस कोने की तरफ़ चला गया, जहां छोटी-सी मेज़ रखी थी। अपने अभ्यस्त और उस सही अन्दाज़ में, जिससे उसे सन्तोष और सुख मिलता था, वह घुटनों के बल बैठ गया। वह झुक गया, उसके बाल चेहरे पर आ गये और उसने अपना माथा, जिसके ऊपर बाल ग़ायब हो गये थे, ठंडी चटाई पर (फ़र्श पर बाहर से ठंडी हवा आ रही थी) टिका दिया।

...वह उसी भजन का पाठ कर रहा था, जिसके बारे में बूढ़े पादरी पीमन ने कहा था कि वह मोह को दूर करने में सहायता देता है। वह उठा, उसकी मज़बूत, मगर कांपती टांगों ने उसके दुबला गये और हल्के-फुल्के शरीर को आसानी से ऊपर उठा लिया। उसने चाहा कि इस भजन का आगे पाठ करता जाये, मगर ऐसा कर न सका और बरबस ही कान लगाकर उस आवाज़ को सुनने की प्रतीक्षा करने लगा। वह उस आवाज़ को सुनना चाहता था। एकदम ख़ामोशी छाई थी। कोने में रखे टब में छत से पानी की बूंदें ही टपक रही थीं। बाहर अहाते में अंधेरा था, ठंडा कुहासा छाया था। ख़ामोशी थी, गहरी ख़ामोशी थी। अचानक खिड़की पर सरसराहट हुई और बिल्कुल साफ़ तौर पर वही कोमल और सहमी-सी आवाज़, ऐसी आवाज़, जो केवल सुन्दर नारी की ही हो सकती है, सुनाई दी :

"ईसा मसीह के नाम पर मुझे अन्दर आने दीजिये..."

पादरी सेर्गियस को लगा कि उसका सारा रक्त दिल की ओर तेज़ी से दौड़ कर वहीं रुक गया है। उसका दम घुटने लगा: "भगवान प्रकट हों और उनके शत्रु धराशायी हो जायें..."

"मैं शैतान नहीं हूं..." यह अनुभव हो रहा था कि इन शब्दों को कहनेवाले होंठ मुस्करा रहे हैं। "मैं शैतान नहीं, एक मामूली गुनहगार औरत हूं, रास्ता भूल गयी हूं – शाब्दिक अर्थ में ही (वह हंस दी), ठिठुर गयी हूं और पनाह चाहती हूं..."

पादरी सेर्गियस ने शीशे के साथ चेहरा सटा दिया। शीशे में सिर्फ़ देव-प्रतिमा के सामने जल रहे दीप का ही प्रतिबिम्ब नज़र आ रहा था। उसने हथेलियों से आंखों पर ओट करके बाहर देखा। कुहासा, अन्धेरा,

वृक्ष और – यह बायीं ओर ? वह रही। हां, वही है, नारी, लम्बी, झबरीले फ़र का सफ़ेद कोट और टोपी पहने, बहुत ही प्यारे प्यारे, दयालु और सहमे हुए चेहरे वाली, उसके चेहरे के बिल्कुल पास ही, उसकी तरफ़ झुकी हुई। उनकी आंखें मिलीं और वे एक-दूसरे को पहचान गये। बात यह नहीं थी कि वे कभी एक-दूसरे से मिले थे। वे कभी नहीं मिले थे, मगर उनकी नज़रों के मिलने से उन्होंने (ख़ासकर पादरी सेर्गियस) ने यह अनुभव किया कि वे एक-दूसरे को समझते हैं। इस नज़र के बाद ऐसा सन्देह बाक़ी हो नहीं रह सकता था कि यह कोई साधारण, दयालु, सुन्दर और सहमी हुई नारी नहीं, बल्कि कोई शैतान है।

"कौन हैं आप? क्या चाहती हैं?" उसने पूछा।

"ओह, दरवाज़ा खोलिये न," उसने अधिकारपूर्वक मचलते हुए कहा। "मैं ठिठुर गयी हूं। कह तो रही हूं कि रास्ता भूल गयी हूं।"

"मगर मैं तो साधु हूं, एकान्तवासी हूं।"

"खोल भी दीजिये दरवाज़ा। या आप यह चाहते हैं कि जब तक आप प्रार्थना करते रहेंगे, मैं आपकी खिड़की के पास खड़ी ठिठुरती रहूं।"

"मगर आप कैसे..."

"मैं आपको खा तो नहीं जाऊंगी। भगवान के लिए अन्दर आने दीजिये। मैं तो ठण्ड से जम गयी हूं।"

नारी स्वयं भयभीत हो उठी थी। उसने लगभग रुआंसी आवाज़ में यह कहा था।

वह खिड़की से हट गया। उसने कांटों के ताजवाली ईसा मसीह की प्रतिमा की ओर देखा। "हे भगवान मेरी सहायता करो, मेरी सहायता करो हे भगवान!" उसने सलीब बनाते और झुककर शीश नवाते हुए कहा, दरवाज़े की ओर बढ़ा और उसे खोलकर ड्योढ़ी में गया। ड्योढ़ी में उसने टटोलकर बाहर के दरवाज़े के हुक को ढूंढ़ा और उसे हटाने लगा। बाहर से उसे क़दमों की आहट सुनाई दे रही थी। वह खिड़की से हटकर दरवाज़े की तरफ़ आ रही थी। "ऊई!" वह अचानक चिल्लाई। यह समझ गया कि उसका पांव दहलीज़ के पास पानी से भरे गढ़े में जा पड़ा है। उसके हाथ कांप रहे थे और दरवाज़े में कसकर फंसा हुआ हुक बाहर नहीं निकल रहा था।

"आप मुझे भीतर तो आने दीजिये। मैं बिल्कुल भीग गयी हूं। मैं जम

गयी हूं। आप केवल अपनी आत्मा की रक्षा की सोच रहे हैं और यहां मेरी कुलफ़ी बनी जा रही है।"

सेर्गियस ने दरवाजे को अपनी ओर खींचा, हुक को ऊपर उठाया और ठीक अन्दाजा न करते हुए दरवाजे को इतने जोर से बाहर की ओर धकेल दिया कि वह माकोवकिना को जा लगा।

"ओह, क्षमा कीजिये!" उसने अचानक महिलाओं को सम्बोधित करने के अपने पुराने और अभ्यस्त ढंग में कहा।

"क्षमा कीजिये!"—ये शब्द सुनकर वह मुस्करा दी। "नहीं, वह बहुत भयप्रद तो नहीं है," उसने मन ही मन सोचा।

"कोई बात नहीं, कोई बात नहीं। आप मुझे क्षमा कर दें," पादरी सेर्गियस के पास से गुजरते हुए वह बोली।" मैं कभी ऐसा करने की हिम्मत न करती। मगर हालात ने ही मजबूर कर दिया।"

"आइये," उसे आगे बढ़ने का रास्ता देते हुए सेर्गियस ने कहा। उसने बढ़िया इत्र की नाजुक सुगन्ध, जिसे वह कभी का भूल चुका था, अनुभव की। वह ड्योढ़ी लांघकर कमरे में पहुंची। पादरी सेर्गियस ने बाहर का दरवाजा फटाक से बन्द कर दिया, मगर हुक नहीं अटकाया और ड्योढ़ी लांघकर कमरे में पहुंचा।

"भगवान के बेटो, ईसा मसीह, मुझ पापी पर दया करो, दया करो मुझ पापी पर," वह लगातार मन ही मन यह प्रार्थना कर रहा था, मगर अनजाने ही उसके होंठ भी हिलते जा रहे थे।

"विराजिये," वह बोला।

वह कमरे के बीचोंबीच खड़ी थी, उससे पानी की बूंदें फ़र्श पर गिर रही थीं। वह सेर्गियस को ध्यान से देख रही थी, उसकी आंखें मुस्करा रही थीं।

"क्षमा कीजियेगा, मैंने आपकी तपस्या में ख़लल डाल दिया। मगर मेरी हालत तो आप देख ही रहे हैं। ऐसा इसलिए हुआ कि हम शहर से स्लेज में सैर-सपाटे के लिए यहां आये थे और फिर मैं शर्त लगा बैठी कि वोरोब्योव्का से अकेली ही शहर लौटूंगी, मगर रास्ते में भटक गयी। अगर आपकी कोठरी पर न आ पहुंचती, तो..." वह झूठ बोलती गयी। मगर सेर्गियस के चेहरे को देखते हुए उसे झेंप महसूस हुई, इसलिए अपने झूठ को जारी न रख सकी और चुप हो गयी। उसने किसी दूसरे ही रूप

में पादरी सेर्गियस की कल्पना की थी। जैसी उसने कल्पना की थी, वह उतना सुन्दर नहीं था, मगर उसकी नज़रों में वह बहुत ही सुन्दर था। उसके सफ़ेद होते हुए सिर और दाढ़ी के घुंघराले बालों, तीखी, पतली नाक और भरपूर नज़र से देखने पर उसकी कोयलों की तरह काली, चमकती आंखों ने उसे स्तम्भित कर दिया।

वह भांप गया था कि वह झूठ बोल रही है।

"ख़ैर, ठीक है," उसने उसकी ओर देखकर कहा और फिर नज़र झुका ली। "मैं उधर चला जाता हूं और आप यहां आराम करें।

पादरी सेर्गियस ने दीप उठाकर उससे मोमबत्ती जलायी, माकोवकिना को सिर झुकाया और पीछेवाली छोटी-सी कोठरी में चला गया। माकोवकिना को सुनाई दिया कि सेर्गियस वहां किसी चीज़ को धकेल रहा है। "शायद मुझसे बचने के लिए दरवाज़े के सामने कुछ रख रहा है," उसने मुस्कराते हुए सोचा और फ़र का सफ़ेद कोट एक तरफ़ को फेंक कर बालों में उलझ गयी टोपी और उसके नीचे बुनी हुई शाल उतारने लगी। जब वह खिड़की के पास खड़ी थी, तो ज़रा भी नहीं ठिठुरी थी और उसने केवल इसलिए ठंड की दुहाई दी थी कि वह उसे अन्दर आ जाने दे। मगर दरवाज़े के पास उसका पांव पानी के गढ़े में जा पड़ा था और बायां पांव टखने तक भीगा हुआ था तथा उसके जूते और ऊपरी रबड़ के जूते में पानी भरा हुआ था। वह उसके बिस्तर यानी उस तंग-सी बेंच पर बैठ गयी, जिस पर सिर्फ़ घास-फूस का गद्दा बिछा था, और जूते उतारने लगी। उसे यह कोठरी बहुत ही अच्छी प्रतीत हुई। चार अर्शीन* लम्बी और तीन अर्शीन चौड़ी यह कोठरी शीशे की तरह चमक रही थी। इसमें सिर्फ़ बिस्तर था, जिस पर वह बैठी थी और उसके ऊपर किताबों का ताक़ था। कोने में छोटी-सी मेज़ थी। दरवाज़े के पास ठुंकी कीलों पर फ़र का कोट और चोग़ा लटक रहा था। मेज़ के ऊपर कांटों के ताजवाली ईसा मसीह की प्रतिमा थी और उसके सामने दीप जल रहा था। तेल, पसीने और मिट्टी की अजीब-सी गन्ध आ रही थी। उसे यह सब कुछ अच्छा लग रहा था, यह गंध भी।

भीगे हुए पांव, विशेषकर बायां पांव, उसे चिन्तित कर रहे थे। इसलिए वह जल्दी जल्दी जूते उतारने लगी। वह लगातार मुस्कराती जा

*अर्शीन – एक गज़ के बराबर होता है।

रही थी। उसे इस बात की इतनी ख़ुशी नहीं थी कि अपने उद्देश्य में सफल हो गयी थी, जितनी इस बात की कि इस सुन्दर, इस अद्भुत और अजीब ढंग से आकर्षक पुरुष के दिल में उसने हलचल पैदा कर दी थी। "उसने दिलचस्पी ज़ाहिर नहीं की, तो क्या हुआ," उसने अपने आपसे कहा।

"पादरी सेर्गियस! धर्म-पिता सेर्गियस! यही है न आपका नाम?"

"क्या चाहिए आपको?" धीमी आवाज़ में जवाब मिला।

"कृपया, आप मुझे क्षमा कर दीजिये कि मैंने आपकी तपस्या में ख़लल डाल दिया। मगर मैं और कुछ कर भी तो नहीं सकती थी। मैं बीमार हो जाती। हो सकता है कि अब भी बीमार हो जाऊं। मैं तो बिल्कुल भीगी हुई हूं, पैर बर्फ़ की तरह ठंडे हैं।"

"मैं क्षमा चाहता हूं," धीमी आवाज़ में जवाब मिला, "मगर मैं आपकी कुछ भी तो सेवा नहीं कर सकता।"

"मैं तो किसी हालत में भी आपको परेशान न करती। मैं तो बस, पौ फटने तक ही यहां रहूंगी।"

पादरी सेर्गियस ने कोई जवाब नहीं दिया। उसे सुनाई दिया कि वह कुछ बुदबुदा रहा है, शायद प्रार्थना कर रहा है।

"आप यहां तो नहीं आयेंगे न?" उसने मुस्कराते हुए पूछा। "मुझे कपड़े उतारकर उन्हें सुखाना है।"

पादरी सेर्गियस ने कोई जवाब नहीं दिया और दूसरे कमरे में समलय से प्रार्थना करता रहा।

"हां, यह है असली इन्सान," उसने पानी से छपछपाता हुआ जूता पूरा ज़ोर लगाकर उतारने की कोशिश करते हुए सोचा। वह उसे खींच रही थी, मगर वह उतर नहीं रहा था। उसे हंसी आ गयी और वह जानती थी कि पादरी सेर्गियस उसकी हंसी सुन रहा है और इस उद्देश्य से कि उस पर उसकी हंसी का वैसा ही प्रभाव हो, जैसा कि वह चाहती थी, और भी ज़ोर से हंस दी। वास्तव में ही इस ख़ुशी भरी, स्वाभाविक और हार्दिक हंसी का उस पर वैसा भी प्रभाव हुआ, जैसा कि वह चाहती थी।

"हां, ऐसे व्यक्ति से प्यार किया जा सकता है। उसकी वे आंखें! उसका वह सादा-सरल, सौजन्यपूर्ण और – चाहे वह कितनी ही प्रार्थना क्यों न बुदबुदाये – कामुक चेहरा!" उसने सोचा। "हम औरतों को आंखों

में कोई धूल नहीं झोंक सकता। जब उसने शीशे के साथ मुंह सटाया था और मुझे देखा था, तभी वह सब कुछ समझ गया था, जान गया था। उसकी आंखें चमक उठी थीं और उनमें एक छाप अंकित होकर रह गयी थी। उसके दिल में प्यार की लहर आयी थी, मुझे पाने की इच्छा अनुभव हुई थी। हां, मुझे पाने की इच्छा," उसने आखिर जूते उतार कर अपने आपसे कहा। अब वह अपनी जुराबें उतारना चाहती थी। मगर गेटिस से कसी हुई लम्बी जुराबों को उतारने के लिए स्कर्ट को ऊपर उठाना जरूरी था। उसे ऐसा करते हुए शर्म महसूस हुई और वह कह उठी—

"यहां नहीं आइयेगा।"

दीवार के पीछे से कोई जवाब नहीं मिला। एक ही ढंग की बुदबुदाहट और हिलने-डुलने की आवाज सुनाई देती रही। "शायद वह जमीन पर माथा टेक रहा है," उसने सोचा। "मगर कुछ नहीं होगा माथा-वाथा टेकने से," वह अपने आपसे कहती गयी। "वह मेरे बारे में सोच रहा है। ठीक वैसे ही, जैसे मैं उसके बारे में। वैसी ही भावनाओं के साथ वह इन टांगों के बारे में सोच रहा है," गीली जुराबें उतारकर नंगे पैरों को बिस्तर पर रखते और फिर उन्हें अपने नीचे दबाते हुए उसने खुद से कहा। वह घुटनों के गिर्द बांहें डाले और सोच में डूबी अपने सामने की ओर ताकती हुई कुछ देर तक यों ही बैठी रही। "हां, यह वीराना, यह खामोशी। कभी किसी को कुछ पता नहीं चलेगा..."

वह उठी, जुराबें लेकर अंगीठी के पास गयी और वातागम पर उन्हें लटका दिया। कुछ खास ही क़िस्म का था यह वातागम। उसने उसे घुमाया, नंगे पैरों से धीरे धीरे क़दम उठाती हुई बिस्तर की ओर लौटी और उन्हें फिर से बिस्तर पर टिकाकर बैठ गयी। दीवार के पीछे बिल्कुल खामोशी छा गयी। उसने गले में लटकती हुई छोटी-सी घड़ी पर नजर डाली। रात के दो बजे थे। "लगभग तीन बजे हमारे लोग यहां पहुंच जायेंगे।" बस, एक ही घण्टा बाकी रह गया है।

"तो क्या मैं अकेली ही यहां बैठी रहूंगी? यह क्या बकवास है! नहीं चाहती मैं यह! अभी बुलाती हूं उसे।"

"पादरी सेर्गियस! धर्म-पिता सेर्गियस! सेर्गेई द्मीत्रोच, राजकुमार कासात्स्की!"

उधर से कोई जवाब नहीं मिला।

"सुनिये, यह तो बड़ी निर्दयता है। अगर मैं ऐसी जरूरत न महसूस करती, तो आपको कभी न पुकारती। मैं बीमार हूं। मालूम नहीं कि मुझे क्या हो रहा है," उसने दर्दभरी आवाज में कहा। "ओह! ओह!" बिस्तर पर गिरते हुए वह कराह उठी। यह अजीब-सी बात हो सकती है, मगर उसे वास्तव में ही ऐसा लगा कि वह बीमार है, बहुत बीमार है, उसके अंग अंग में दर्द है और मानो वह तेज बुख़ार में कांप रही है।

"सुनिये तो, मेरी मदद कीजिये। मालूम नहीं कि मुझे क्या हो रहा है। ओह! ओह!" उसने फ़्राक के बटन खोलकर छाती नंगी कर ली और कोहनियों तक उघाड़ी बांहें फैला दीं। "ओह! ओह!"

पादरी सेर्गियस इस पूरे वक़्त के दौरान पीछेवाली कोठरी में खड़ा हुआ प्रार्थना करता रहा था। सन्ध्या की सभी प्रार्थनाओं का पाठ करने के बाद अब वह नाक के सिरे पर नजर टिकाये बुत बना खड़ा था और मन ही मन दोहरा रहा था: "भगवान के बेटे, ईसा मसीह, मेरी मदद करो।"

मगर उसने सुना सब कुछ था। जब इस नारी ने अपना फ़्राक उतारा था, तो उसे रेशमी कपड़े की सरसराहट सुनाई दी थी, फ़र्श पर नंगे पैर की आहट और हाथों से टांगों को सहलाने की आवाज भी उसे सुनाई दी थी। उसने अनुभव किया था कि वह दुर्बल है, किसी भी क्षण उसका पतन हो सकता है और इसी लिए वह लगातार प्रार्थना करता जा रहा था। उसे लोक-कथा के उस नायक जैसी अनुभूति हो रही थी, जिसके लिए मुड़कर देखे बिना ही बढ़ते जाना जरूरी था। सेर्गियस भी यह समझ रहा था, यह अनुभव कर रहा था कि उसके इर्द-गिर्द, उसके ऊपर ख़तरा मंडरा रहा है, उसका पतन हो सकता है और बचने की केवल एक ही सूरत है— उसकी ओर बिल्कुल न देखा जाये। मगर अचानक उसे देखने की इच्छा बड़ी तीव्र हो उठी। इसी क्षण उस नारी ने कहा:

"यह तो बड़ी क्रूरता है। मेरी तो जान ही निकल सकती है।"

"हां, मैं जाऊंगा उसके पास, मगर उस पादरी की तरह ही, जिसने अपना एक हाथ व्यभिचारिणी पर रखा था और दूसरा अग्निकुण्ड में डाल दिया था। मगर अग्निकुण्ड तो यहां नहीं है।" उसने इधर-उधर नजर डाली। हां, दीप है। उसने दीप-शिखा पर अपनी उंगली कर दी और नाक-भौंह सिकोड़कर दर्द सहने के लिए तैयार हो गया। काफ़ी देर तक उसे पीड़ा की कोई अनुभूति नहीं हुई, मगर अचानक—वह यह नहीं तय कर

पाया कि उसे दर्द हो रहा है या नहीं और यदि हो रहा है, तो कितना– उसने बुरी तरह मुंह बनाया और झटके के साथ अपना हाथ पीछे हटा लिया। "नहीं, मैं ऐसा नहीं कर सकता।"

"भगवान के लिए! ओह, मेरे पास आइये। मेरी जान निकल रही है, ओह!"

"तो क्या मेरा पतन हो ही जायेगा? नहीं, ऐसा नहीं होगा।"

"मैं अभी आता हूं आपके पास," उसने कहा और अपना दरवाजा खोलकर उसकी तरफ़ देखे बिना ही उसके पास से गुजरा और ड्योढ़ी के दरवाजे की तरफ़ चला गया। वहां, ड्योढ़ी में वह चैलियां काटा करता था। उसने अंधेरे में उस कुन्दे को टटोला, जिस पर रखकर चैलियां काटी जाती थीं और दीवार के सहारे रखी हुई कुल्हाड़ी को भी ढूंढ़ लिया।

"मैं अभी आता हूं!" उसने दोहराया, दायें हाथ में कुल्हाड़ी ली, बायें हाथ की तर्जनी कुन्दे पर रखी और कुल्हाड़ी ऊपर उठाकर उंगली की दूसरी पोर के नीचे दे मारी। उंगली इतनी ही मोटी लकड़ी की तुलना में अधिक आसानी से कट गयी, ऊपर उछली, कुन्दे के सिरे पर तनिक रुकी और फिर फ़र्श पर जा गिरी।

उंगली के फ़र्श पर गिरने की आवाज उसे दर्द महसूस होने से पहले सुनाई दी। वह दर्द न होने के कारण हैरान हो ही रहा था कि उसने बहुत जोर की पीड़ा अनुभव की और साथ ही गर्म लहू की धारा बह चली। उसने झटपट चोगे का छोर घाव पर लपेटा, उसे कूल्हे के साथ सटाया, दरवाजे की तरफ़ लौटा और नजर झुकाये हुए उस नारी के सामने खड़े होकर धीरे-से पूछा:

"क्या चाहिए आपको?"

उसने उसके जर्द पड़े चेहरे और कांपते हुए बायें गाल की ओर देखा और अचानक उसे शर्म महसूस हुई। वह उछलकर खड़ी हुई, उसने अपना फर कोट उठाया, उसे अपने ऊपर डाल लिया, उसे अपने चारों ओर लपेट लिया।

"मुझे दर्द हो रहा था... मुझे ठंड लग गयी है... मैं... पादरी सेर्गियस... मैं..."

हल्की हल्की ख़ुशी से चमकती हुई अपनी आंखें ऊपर उठाकर वह बोला:

"प्यारी बहन, तुम अपनी अमर आत्मा को पतन के गढ़े में क्यों गिराना चाहती थीं? प्रलोभन तो इस दुनिया में आयेंगे ही, मगर बुरा हो उनका, जो ये प्रलोभन पेश करते हैं... प्रार्थना करो कि भगवान हमें क्षमा कर दें।"

वह पादरी सेर्गियस की बात सुन रही थी और उसकी ओर देख रही थी। सहसा उसे फ़र्श पर गिरती बूंदों की आवाज़ सुनाई दी। उसने ध्यान से देखा तो चोग़े पर हाथ से बहता हुआ ख़ून नज़र आया।

"हाथ के साथ क्या कर डाला आपने?" उसे वह आवाज़ याद हो आयी, जो उसने सुनी थी और वह झटपट दीप उठाकर ड्योढ़ी में भाग गयी। वहां उसे ख़ून में लथ-पथ उंगली पड़ी दिखाई दी। उसके चेहरे का रंग तो सेर्गियस के चेहरे से भी अधिक पीला पड़ गया था। उसने सेर्गियस से कुछ कहना चाहा, मगर वह धीरे धीरे अपनी कोठरी में चला गया और उसने दरवाज़ा बन्द कर लिया।

"मुझे क्षमा कर दीजिये," वह बोली। "कैसे अपने पाप का प्रायश्चित कर सकती हूं मैं?"

"चली जाओ।"

"लाइये, मैं आपके घाव पर पट्टी बांध दूं।"

"जाओ यहां से।"

वह चुपचाप और जल्दी जल्दी कपड़े और फ़र का कोट भी पहन कर तैयार हो गयी तथा इन्तज़ार करने लगी। बाहर घंटियों की आवाज़ सुनाई दी।

"पादरी सेर्गियस। मुझे क्षमा कर दीजिये।"

"जाओ। भगवान क्षमा करेंगे।"

"धर्म-पिता सेर्गियस, मैं अपना जीवन बदल लूंगी। मुझे ठुकराइये नहीं।"

"जाओ।"

"क्षमा कीजिये और आशीर्वाद दीजिये।"

"पिता, पुत्र और पवित्रात्मा के नाम पर," दीवार के पीछे से सुनाई दिया, "जाओ।"

वह सिसकियां भरती हुई कोठरी से बाहर आई। वकील उसकी तरफ़ बढ़ा और बोला:

"हार गया याज़ो, कम्बख़्त किस्मत ही ऐसी है। कहां बैठेंगी आप?"
"कहीं भी बैठ जाऊंगी।"
वह बैठ गयी और रास्ते भर उसने एक भी शब्द मुंह से नहीं निकाला।

एक साल बाद वह तपस्वी आर्सेनी के निर्देशन में, जो कभी-कभार उसे पत्र लिखता था, मठ में अत्यधिक संयम का जीवन बिताने लगी।

(६)

पादरी सेर्गियस ने तपस्या में सात साल और बिता दिये। शुरू में तो वह बहुत-सी चीज़ें – चाय, चीनी, सफ़ेद डबल रोटी, दूध, कपड़े और लकड़ी आदि – जो उसके लिए लायी जाती थीं, ले लेता था। मगर जैसे जैसे समय बीता, वह अपने जीवन को अधिकाधिक कठोर बनाता गया, बहुत सी चीज़ों का त्याग करता गया और आख़िर हफ़्ते में एक बार काली रोटी के सिवा अन्य सभी चीज़ों का उसने परित्याग कर दिया। बाकी तमाम चीज़ें वह अपने पास आनेवाले ग़रीब-गुरबा को बांट देता।

पादरी सेर्गियस अपना अधिकतर समय कोठरी में प्रार्थना या आगन्तुकों से बातचीत करते हुए बिताता। आगन्तुकों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही थी। पादरी सेर्गियस साल में कोई तीनेक बार गिरजाघर में जाने के लिए या फिर ज़रूरत होने पर लकड़ी-पानी लाने की ख़ातिर बाहर निकलता।

ऐसे जीवन के पांच साल बाद माकोवकिना वाली घटना घटी, जिसकी जल्दी ही सभी ओर ख़बर फैल गयी। लोगों को मालूम हो गया कि कैसे वह रात के समय आयी थी, इसके बाद उसमें क्या परिवर्तन हुआ और वह मठ में चली गयी। इस घटना के बाद पादरी सेर्गियस की ख्याति बढ़ने लगी। दर्शनाभिलाषियों की संख्या अधिकाधिक होती गयी, उसकी कोठरी के आस-पास साधु रहने लगे, पास ही गिरजाघर और अतिथि-भवन बन गया। जैसा कि हमेशा होता है, उसकी उपलब्धि को बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करती हुई ख्याति अधिकाधिक दूर दूर फैलती गयी, बहुत दूर दूर से लोग उसके पास आने लगे, बीमारों को लाने लगे, क्योंकि यह माना जाने लगा था कि वह उन्हें स्वस्थ करने की शक्ति रखता है।

तपस्या के आठवें वर्ष में उसने पहले रोगी को स्वस्थ किया था। वह चौदह साल का लड़का था, जिसे उसकी मां पादरी सेर्गियस के पास लाई और अनुरोध किया कि वह लड़के के सिर पर अपना हाथ रख दे। पादरी सेर्गियस ने तो कभी सोचा तक भी नहीं था कि वह रोगियों को चंगा कर सकता है। ऐसे विचार को वह घमंड के रूप में महान पाप मानता था। मगर लड़के की मां लगातार विनय-अनुनय करती रही, उसके पैरों पड़ती और यह कहती रही कि वह दूसरों के कष्ट निवारण करता है, तो उसके लड़के को मदद क्यों नहीं करता? उसने ईसा मसीह के नाम पर अनुरोध किया। पादरी सेर्गियस ने उससे कहा कि सिर्फ़ भगवान ही उसके बेटे को स्वस्थ कर सकते हैं। इसके जवाब में उसने कहा कि वह तो सिर्फ़ लड़के के सिर पर हाथ रखकर प्रार्थना करने का अनुरोध करती है। पादरी सेर्गियस ने इनकार कर दिया और अपनी कोठरी में चला गया। मगर अगले दिन (पतझर का मौसम था और रातें ठंडी हो चुकी थीं) जब वह पानी लाने के लिए अपनी कोठरी से बाहर निकला, तो पीले चेहरेवाले चौदह वर्षीय रुग्न बेटे के साथ उसी मां को फिर वहीं खड़े पाया और वह फिर हाथ-पांव जोड़ने लगी। पादरी सेर्गियस को अन्यायी न्यायाधीश की नीति-कथा याद हो आयी और अगर पहले उसे इस बात का तनिक भी सन्देह नहीं था कि उसे इनकार करना चाहिए, तो अब वह सन्देह में पड़ गया। सन्देह पैदा होते ही वह प्रार्थना करने लगा और तब तक प्रार्थना करता रहा, जब तक कि अपनी आत्मा में किसी निश्चय पर नहीं पहुंच गया। उसका निश्चय यह था कि उसे इस नारी का अनुरोध पूरा करना चाहिए, सम्भव है कि उसका विश्वास उसके बेटे की जान बचा दे और उस हालत मे वह भगवान की इच्छा का एक तुच्छ साधन मात्र होगा।

पादरी सेर्गियस बाहर निकला, मां की इच्छानुसार बीमार लड़के के सिर पर हाथ रखकर प्रार्थना करने लगा।

मां अपने बेटे को लेकर चली गयी और एक महीने बाद लड़का स्वस्थ हो गया। गुरु सेर्गियस (जैसा कि अब लोग उसे कहते थे) की चमत्कारी स्वास्थ्यदान की शक्ति की ख्याति दूर-दूर तक फैल गयी। इसके बाद तो एक हफ़्ता भी ऐसा न गुज़रता, जब बीमारों को लेकर लोग उसके पास न आते। अगर वह एक बार ऐसा करने को राज़ी हो गया था, तो

अब दूसरों को भी इनकार नहीं कर सकता था। इसलिए वह उन पर हाथ रखकर प्रार्थना करता, बहुत-से लोग स्वस्थ भी हो जाते और इस तरह पादरी सेर्गियस की प्रसिद्धि और भी आगे ही आगे फैलती चली गई।

इस तरह सात साल मठों में और तेरह एकान्तवास में बीत गये। पादरी सेर्गियस अब बुज़ुर्ग लगता था—उसकी दाढ़ी लम्बी और सफ़ेद थी, मगर बाल, जो विरले रह गये थे, अब भी काले और घुंघराले थे।

(७)

कई सप्ताह तक एक ही विचार पादरी सेर्गियस को परेशान करता रहा—जिस स्थिति में वह था और जो उसकी अपनी इच्छा की तुलना में आर्कीमांड्रीट और बड़े पादरी की इच्छा का कहीं अधिक परिणाम थी, उस स्थिति को स्वीकार कर उसने अच्छा किया या नहीं? उस चौदह वर्षीय लड़के के स्वास्थ्यलाभ से इस स्थिति का आरम्भ हुआ। उस दिन से पादरी सेर्गियस हर महीने, हर सप्ताह और हर दिन यह अनुभव करता था कि उसका आन्तरिक जीवन समाप्त होता जा रहा है और बाहरी जीवन उसका स्थान लेता जा रहा है। उसे तो मानो भीतर से बाहर की ओर उलटाया जा रहा था।

सेर्गियस ने देखा कि वह श्रद्धालुओं और भेंट चढ़ानेवालों को मठ की ओर खींचने का साधन था और इसी लिए मठ के प्रबन्धक उसकी दिनचर्या को ऐसे नियमित करना चाहते थे कि उससे अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकें। उदाहरण के लिए अब उसे किसी भी तरह का शारीरिक श्रम नहीं करने दिया जाता था। उसको ज़रूरत की हर चीज़ उसे मुहैया कर दी जाती थी और उससे सिर्फ एक ही तकाज़ा किया जाता था कि वह आगन्तुकों को अपने आशीर्वाद से वंचित न करे। उसकी सुविधा के लिए दिन निश्चित कर दिये गये, जब वह भक्तों को दर्शन देता था। पुरुषों के लिए एक विशेष भेंट-कक्ष की व्यवस्था कर दी गयी और जंगले से घिरी हुई एक जगह भी बना दी गयी, जहां औरतों के भीड़-भड़क्के से उसे धक्का न लगे और वह भक्तों को आशीर्वाद दे सके। उससे कहा जाता कि लोगों को उसकी ज़रूरत है, कि ईसा मसीह के प्रेम-सम्बन्धी नियम का पालन करते हुए वह लोगों

को दर्शन देने से इनकार नहीं कर सकता, कि लोगों से दूर भागना क्रूरता दिखाना होगा। ऐसी बातों के सामने उसे झुकना ही पड़ता। किन्तु जितना अधिक वह इस तरह के जीवन को स्वीकार करता जाता था, उतना ही अधिक वह यह अनुभव करता था कि उसका आत्मिक संसार बाहरी दुनिया में बदलता जाता है, कि उसकी आत्मा में अमृत का स्रोत सूखता जा रहा है, कि वह जो कुछ भी करता है, उसका अधिकाधिक भाग भगवान के लिए नहीं, मानव के लिए ही होता है।

वह लोगों को उपदेश देता या आशीर्वाद, रोगियों के लिए प्रार्थना करता या जीवन के बारे में उन्हें परामर्श देता, या ऐसे लोगों की कृतज्ञता के शब्द सुनता, जिन्हें, उनके शब्दों में, उसने स्वस्थ होने में या शिक्षा द्वारा सहायता दी होती, उसे इस सभी से ख़ुशी मिलती, वह अपने कार्य-कलापों के परिणामों और लोगों पर अपने प्रभाव के बारे में सोचे बिना न रह पाता। उसे लगता कि वह एक ज्योति है और जितना ही अधिक वह ऐसा अनुभव करता, उतनी ही अधिक उसे यह अनुभूति होती कि उसकी आत्मा में जलनेवाली सचाई की ईश्वरीय ज्योति धीमी और मन्द पड़ती जा रही है। "मैं जो कुछ करता हूं, उसमें से कितना भगवान और कितना इन्सान के लिए होता है?" यह प्रश्न उसे निरन्तर परेशान करता रहता था। वह इसका उत्तर न दे सकता हो, सो बात नहीं थी, मगर वह अपने को इसका उत्तर देने का निश्चय ही नहीं कर पाया। अपनी आत्मा की गहराई में उसे यह अनुभव होता कि शैतान ने भगवान के लिए उसकी सारी गति-विधियों को इन्सान के लिए गति-विधियों में बदल दिया है। वह इसलिए ऐसा अनुभव करता था कि पहले तो एकान्त भंग होने पर उसे परेशानी होती थी और अब एकान्त बोझिल लगता था। आगन्तुक उसके लिए बोझ बन जाते थे, वह उनके कारण थक जाता था, मगर दिल की गहराई में उसे उनके आने, अपने आस-पास अपनी प्रशंसा सुनने से ख़ुशी होती थी।

एक ऐसा भी समय आया था, जब उसने यहां से चले जाने, कहीं ग़ायब हो जाने का फ़ैसला कर लिया था। उसने तो इसकी पूरी योजना भी बना ली थी। उसने अपने लिए देहातियों की सी क़मीज़, पाजामा, कोट और टोपी भी तैयार कर ली थी। उसने प्रबन्धकों से यह बहाना कर दिया था कि भिखमंगों को देने के लिए उसे इनकी ज़रूरत है। उसने इन चीज़ों को अपनी कोठरी में रखा और यह सोचता रहा कि कैसे वह

इन्हें पहनकर और बाल काटकर चलता बनेगा। शुरू में वह तीन सौ वेर्स्ता तक गाड़ी से सफ़र करेगा, फिर उससे उतरकर गांव गांव घूमता फिरेगा। अपने पास आनेवाले एक बूढ़े सैनिक से उसने पूछ-ताछ कर ली थी कि कैसे वह गांव गांव घूमता है, भिक्षा और पनाह पाने के लिए क्या करता है। सैनिक ने सब कुछ बता दिया था कि कहां भिक्षा और पनाह पाने का अधिक सुभीता रहता है और पादरी सेर्गियस ऐसा ही करना चाहता था। एक रात को तो उसने देहाती की पोशाक पहन भी ली और चल देना चाहा, मगर वह यह नहीं जानता था कि उसके लिए यहीं रहना या भाग जाना ज्यादा अच्छा होगा। शुरू में वह असमंजस में रहा, बाद में यह ऊहापोह जाता रहा, यहां के जीवन का अभ्यस्त हो गया, शैतान के सामने उसने हथियार डाल दिये और देहाती की पोशाक अब उसे केवल उसके विचारों और भावनाओं की याद ही दिलाती थी।

पादरी सेर्गियस के पास आनेवाले लोगों की संख्या हर दिन बढ़ती जाती थी और आत्मिक दृष्टि से अपने को सुदृढ़ बनाने और प्रार्थना करने के लिए उसके पास अधिकाधिक कम समय रहता जाता था। कभी कभी अच्छे क्षणों में उसके दिल में यह विचार आता कि वह ऐसी जगह के समान है, जहां कभी कोई चश्मा बहता था। "अमृत की पतली-सी धारा थी, जो मेरे अन्तर और मेरे अन्तर से बाहर बहती थी। वह था वास्तविक जीवन, जब 'उस औरत ने' (वह उस रात को और उसे, जो अब सन्यासिनी आग्निया थी, हमेशा उत्साह से याद करता था) मुझे भरमाने की कोशिश की थी। उसने वह अमृत-पान किया था। मगर उसके बाद से अमृत एकत्रित होने के पहले ही प्यासों की भीड़ लग जाती है, वे एक-दूसरे को धकियाते और रेल-पेल करते हैं। उन्होंने चश्मे को अपने पैरों तले रौंद डाला है और अब सिर्फ कीचड़ ही बाक़ी रह गया है।" अपने अच्छे और विरले क्षणों में वह ऐसा सोचता, मगर उसकी आम स्थिति यह रहती थी – थकान और इस थकान के कारण अपने प्रति प्रशंसा की भावना।

वसन्त के दिन थे, प्रीपोलोवेनीये पर्व की पूर्ववेला थी। पादरी सेर्गियस अपने गुफावाले गिरजे में प्रार्थना करवा रहा था। जितने लोग वहां समा सकते थे, उतने ही उपस्थित थे यानी बीसेक। वे सभी श्रीमन्त और व्यापारी यानी धनी लोग थे। पादरी सेर्गियस तो सभी को आने देता था, मगर

उसकी सेवा मे तैनात साधु और मठ से हर दिन उसकी कोठरी में भेजा जानेवाला सहायक ऐसी छंटनी कर देते थे। लगभग अस्सी यात्री, विशेषकर औरतें, बाहर भीड़ लगाये थे और पादरी सेर्गियस के बाहर आने तथा उसका आशीर्वाद पाने की प्रतीक्षा में थे। पादरी सेर्गियस ने पूजा समाप्त की और जब वह भगवान का स्तुतिगान करता हुआ अपने पूर्ववर्ती सन्यासी की कब्र के पास आया, तो लड़खड़ाया और अगर उसके पीछे खड़े व्यापारी और छोटे पादरी ने उसे सम्भाला न लिया होता, तो वह गिर पड़ता।

"क्या हुआ है आपको? धर्मपिता सेर्गियस! प्यारे, महाराज सेर्गियस! हे भगवान!" नारियां चिल्ला उठीं। "चादर-से सफ़ेद हो गये हैं।"

मगर पादरी सेर्गियस जल्दी ही सम्भल गया और यद्यपि उसका चेहरा बिल्कुल ज़र्द पड़ गया था, तथापि उसने व्यापारी और छोटे पादरी को दूर हटा दिया और स्तुतिगान जारी रखा। छोटे पादरी, पादरी सेरापिओन, परिचारकों और श्रीमती सोफ़िया इवानोव्ना ने, जो हमेशा सेर्गियस की कोठरी के पास ही रहती थी और उसकी सेवा करती थी, पादरी सेर्गियस से स्तुतिगान समाप्त करने का अनुरोध किया।

"कोई बात नहीं, कोई बात नहीं," अपनी मूंछों के नीचे तनिक मुस्कराते हुए पादरी सेर्गियस ने कहा, "प्रार्थना में बाधा नहीं डालिये।"

उसने मन ही मन सोचा, "हां, पुण्यात्मायें ही ऐसा करती हैं।"

"पुण्यात्मा! भगवान का फ़रिश्ता!" उसी क्षण उसे अपने पीछे सोफ़िया इवानोव्ना और उस व्यापारी की आवाज़ सुनाई दी, जिसने उसे सम्भाला था। लोगों के अनुनय पर कान न देते हुए उसने पूजा जारी रखी। लोग रेल-पेल करते और तंग बरामदों को लांघते हुए फिर छोटे गिरजे में लौटे और वहां पादरी सेर्गियस ने प्रार्थना को कुछ संक्षिप्त करते हुए समाप्त किया।

प्रार्थना के फ़ौरन बाद पादरी सेर्गियस ने वहां उपस्थित लोगों को आशीर्वाद दिया और गुफा-द्वार के पास एल्म वृक्ष के नीचे रखी बेंच की ओर बाहर गया। वह आराम करना, ताज़ा हवा में सांस लेना चाहता था, इसकी आवश्यकता अनुभव कर रहा था। मगर उसके बाहर आते ही लोगों की भीड़ उसका आशीर्वाद पाने, सलाह-मशविरा करने और मदद लेने के लिए उसकी तरफ़ लपकी। इस भीड़ में वे तीर्थयात्री-नारियां थीं, जो हमेशा एक तीर्थस्थान से दूसरे तीर्थस्थान पर और एक गुरू से दूसरे गुरू के पास

जाती रहती थीं और जो सदा ही हर साधु और हर गुरू को देखकर द्रवित हो उठती थीं। पादरी सेर्गियस इन सामान्य, श्रद्धाहीन, भावनाहीन और परम्परागत नारियों से भली-भांति परिचित था। पुरुष तीर्थयात्रियों में अधिकतर अवकाशप्राप्त सैनिक थे, जो जीवन के ढर्रे से अलग हो गये थे, ग़रीब और अधिकतर पियक्कड़ बूढ़े थे, जो सिर्फ़ पेट भरने के लिए एक मठ से दूसरे मठ में भटकते रहते थे। इस भीड़ में मूढ़ किसान और किसान-नारियां भी थीं और ये सभी अपनी स्वार्थ-सिद्धि के हेतु —रोगी को स्वस्थ कराने या व्यावहारिक कार्यों—बेटी की शादी करने, दुकान किराये पर लेने और ज़मीन ख़रीदने के बारे में अपने सन्देह मिटाने, हरामी बच्चे या मां की लापरवाही से बच्चे की मृत्यु का पाप अपने सिर से उतरवाने के लिए ही यहां आये थे। पादरी सेर्गियस बहुत अर्से से इन सब बातों से परिचित था और इनमें उसकी कुछ भी दिलचस्पी नहीं थी। वह जानता था कि इन लोगों से उसे कुछ भी नयी जानकारी नहीं मिल सकती, कि ये लोग उसमें किसी भी तरह की धार्मिक भावना नहीं पैदा करते, किन्तु भीड़ के रूप में उन्हें देखना उसे पसन्द था। ऐसी भीड़ के रूप में, जिसे उसकी और उसके आशीर्वाद की ज़रूरत थी, जो उसके शब्दों को महत्त्व देती थी। इसी लिए इस भीड़ से उसे थकान भी होती थी और साथ ही ख़ुशी भी मिलती थी। पादरी सेरापिओन ने यह कहकर लोगों को भगाना चाहा कि सन्यासी सेर्गियस थक गये हैं, मगर सेर्गियस को इंजील के ये शब्द—उनके (बेटों के) मेरे पास आने में बाधा न डालो—याद आ गये और इसके साथ ही उसे आत्म-तुष्टि की अनुभूति हुई और उसने कहा कि उन्हें आने दिया जाये।

पादरी सेर्गियस उठा, उस जंगले के पास गया, जिसके इर्द-गिर्द ये लोग जमा थे, उन्हें आशीर्वाद और उनके सवालों के जवाब देने लगा। उसकी आवाज़ इतनी दुर्बल थी कि वह स्वयं द्रवित हो उठा। किन्तु बहुत चाहने पर भी वह सब के प्रश्नों के उत्तर न दे सका, उसकी आंखों के सामने फिर अन्धेरा छा गया, वह लड़खड़ाया और उसने जंगला थाम लिया। फिर से उसने रक्त को सिर की ओर दौड़ते हुए अनुभव किया और उसका चेहरा पहले तो पीला पड़ा और फिर अचानक लाल हो उठा।

"लगता है कि यह सब कल पर टालना होगा। आज मैं और कुछ नहीं कर सकता," उसने कहा और सब को एकसाथ आशीर्वाद देकर बेंच

की ओर चल दिया। व्यापारी ने फिर से उसे सहारा दिया और हाथ थामे हुए बेंच पर ले जाकर बिठा दिया।

"*धर्म-पिता!" भीड़ में से सुनाई दिया। "धर्म-पिता! महात्मा!* हमें छोड़ नहीं जाना! तुम्हारे बिना हमारा कौन सहारा है!"

पादरी सेर्गियस को एल्म वृक्षों की छाया में बेंच पर बिठाकर व्यापारी पुलिसवाले की तरह बड़ी दृढ़ता से लोगों को खदेड़ने लगा। यह सच है कि *वह धीमे-धीमे बोलता था ताकि पादरी सेर्गियस को उसके शब्द सुनाई न* दें, मगर गुस्से से और डांटते हुए वह उनसे कह रहा था:

"भागो, भागो यहां से। आशीर्वाद मिल गया, और क्या चाहते हो? चलते बनो। वरना गर्दन मरोड़ दूंगा। चलो, चलो यहां से! ऐ *बुढ़िया, काली पट्टियोंवाली, जा यहां से, जा। किधर बढ़ी आ रही है!* कह तो दिया कि आज और कुछ नहीं होगा। कल फिर भगवान की कृपा होगी, आज वे बिल्कुल थक गये हैं।"

"*भैया, बस एक नजर उनका प्यारा चेहरा देख लेने दो," बुढ़िया ने मिन्नत की।*

"अभी दिखाता हूं तुझे उनका चेहरा! किधर बढ़ी जा रही है?"

पादरी सेर्गियस ने देखा कि व्यापारी कुछ अधिक कड़ाई दिखा रहा है और उसने कमजोर-सी आवाज़ में परिचारक से कहा कि वह लोगों को खदेड़ने से उसे मना कर दे। पादरी सेर्गियस जानता था कि व्यापारी उन्हें खदेड़ तो देगा ही और वह ख़ुद भी यही चाहता था कि अकेला रह जाये और आराम कर सके, मगर फिर भी उसने प्रभाव पैदा करने के लिए परिचारक को व्यापारी के पास भेजा।

"अच्छी बात है, अच्छी बात है। मैं इन्हें खदेड़ नहीं रहा हूं, अक़्ल सिखा रहा हूं। ये लोग तो आदमी की जान लेकर ही सब्र करते हैं। दया तो जानते ही नहीं, सिर्फ़ अपनी ही चिन्ता करते हैं। कह तो दिया कि इधर नहीं आओ। जाओ वापिस। कल आना।"

व्यापारी ने सबको खदेड़ दिया।

व्यापारी ने इतना उत्साह इसलिए भी दिखाया कि उसे व्यवस्था पसन्द थी, लोगों को खदेड़ना और उन पर हुक्म चलाना अच्छा लगता था और मुख्यतः तो इसलिए कि उसे पादरी सेर्गियस से मतलब था। वह विधुर था, उसकी इकलौती बेटी बीमार थी और उसकी शादी नहीं हो

सकती थी। यह चौदह सौ वेर्स्ता से अपनी बेटी को लेकर इसलिए यहां आया था कि पादरी सेर्गियस उसे स्वस्थ कर दे। बेटी की दो साल की बीमारी के दौरान उसने भिन्न-भिन्न स्थानों पर उसका इलाज करवाया था। शुरू में गुबेर्नियां के विश्वविद्यालयवाले एक शहर के अस्पताल में—मगर कोई लाभ नहीं हुआ, इसके बाद समारा गुबेर्नियां के एक देहाती के पास वह उसे ले गया—वहां कुछ फ़ायदा हुआ और फिर मास्को के एक डाक्टर से इलाज कराया, जिसने ख़ूब पैसे बटोरे, मगर लाभ कुछ नहीं हुआ। अब किसी ने उससे कहा था कि पादरी सेर्गियस रोगियों को स्वास्थ्य-दान करता है और इसलिए वह अपनी बेटी को यहां लाया था। चुनांचे भीड़ को खदेड़ने के बाद वह पादरी सेर्गियस के पास आया और किसी भी तरह की भूमिका बांधे बिना उसके सामने घुटने टेककर ऊंची आवाज में कहने लगा—

"पुण्यात्मा! मेरी बीमार बेटी को अच्छा कर दो, उसकी पीड़ा हर लो। मैं तुम्हारे पावन पैरों को छूता हूं।" और उसने हाथ जोड़ दिये। यह सब कुछ उसने ऐसे ढंग से किया और कहा मानो यह क़ानून और रीति-रिवाज के अनुसार स्पष्ट रूप से निर्धारित कोई मन्त्र हो, मानो केवल इसी ढंग से, न कि किसी भी दूसरे ढंग से, उसे अपनी बेटी को चंगा करने की प्रार्थना करनी चाहिए। उसने ऐसे आत्म-विश्वास के साथ यह किया कि पादरी सेर्गियस तक को ऐसा लगा कि यह इसी ढंग से कहा और किया जाना चाहिए। मगर फिर भी उसने उसे उठने और पूरी बात बताने को कहा। व्यापारी ने बताया कि उसकी बेटी बाईस साल की कुमारी है, दो साल पहले मां की अचानक मौत हो जाने पर वह बीमार हो गयी—पिता के शब्दों में उसने चीख़ मारी और तभी से बीमार चल रही है। चौदह सौ वेर्स्ता की दूरी से वह उसे यहां लाया है और इस समय वह होटल में बैठी इस बात की प्रतीक्षा कर रही है कि पादरी सेर्गियस कब उसे यहां लाने का आदेश देते हैं। दिन के वक़्त वह कहीं नहीं जाती, उजाले से डरती है और सिर्फ़ सूरज डूबने के बाद ही बाहर निकल सकती है।

"तो क्या वह बहुत कमजोर है?" पादरी सेर्गियस ने पूछा।

"कमजोर तो वह ख़ास नहीं है, तगड़ी है, मगर जैसा कि डाक्टर ने कहा था, स्नायु की दुर्बलता है उसे। अगर आप उसे लाने की अनुमति दें, तो मैं चुटकी बजाते में उसे यहां ले आऊं। पुण्यात्मा! एक बाप के

दिल को नवजीवन दें, उसका वंश आगे बढ़ायें, अपनी प्रार्थना से मेरी बीमार बेटी की जान बचा दें।"

व्यापारी एकबारगी फिर से घुटनों के बल हो गया और एक पहलू को जुड़े हुए हाथों पर सिर टिकाकर बुत-सा बना रह गया। पादरी सेर्गियस ने उसे फिर से उठने को कहा और यह सोचकर कि उसके कार्य-कलाप कितने कठिन हैं, मगर इसके बावजूद वह किसी तरह की आपत्ति किये बिना उन्हें पूरा करता है, उसने गहरी सांस ली। कुछ क्षण बाद उसने कहा :

"अच्छी बात है, शाम को उसे ले आइयेगा। मैं उसके लिए प्रार्थना करूंगा, मगर इस समय तो मैं बहुत थका हुआ हूं," और उसने आंखें मूंद लीं। "तब मैं बुलवा भेजूंगा।"

व्यापारी पंजों के बल वहां से चल दिया, जिससे रेत पर उसके जूतों ने और भी ज्यादा चर्र-मर्र की। पादरी सेर्गियस अकेला रह गया।

पादरी सेर्गियस का सारा वक़्त प्रार्थनाओं और आगन्तुकों से मिलने-जुलने में ही गुजरता था, मगर आज का दिन तो विशेष रूप से कठिन रहा था। सुबह ही कोई ऊंचा पदाधिकारी आ गया और देर तक बातचीत करता रहा। उसके बाद एक महिला अपने बेटे को लेकर आ गयी। उसका बेटा जवान प्रोफ़ेसर और नास्तिक था। मगर मां पक्की आस्तिक और पादरी सेर्गियस की बड़ी भक्त थी। वह इसलिए बेटे को यहां लाई थी कि पादरी सेर्गियस उससे बातचीत करे। बातचीत बड़ी कठिन रही। जवान प्रोफ़ेसर सम्भवतः साधु से बहस नहीं करना चाहता था और इसलिए उसकी हर बात से ऐसे सहमत होता जाता था, जैसे कोई अपने से कमजोर की बात मान लेता है। किन्तु पादरी सेर्गियस तो अनुभव कर रहा था कि यह नौजवान भगवान को नहीं मानता, पर इसके बावजूद वह ख़ुश है, सुख और चैन महसूस करता है। अब उस बातचीत की याद आने पर उसका मन खिन्न हो उठा।

"महाराज, भोजन कर लीजिये," परिचारक बोला।

"हां, कुछ ले आइये।"

परिचारक गुफा द्वार से कोई दसेक कदम की दूरी पर बनी कोठरी में गया और पादरी सेर्गियस अकेला रह गया।

वह वक़्त कभी का गुजर चुका था, जब पादरी सेर्गियस अकेला

रहता था, ख़ुद ही अपनी देख-भाल करता था और केवल डबल रोटी ही खाता था। बहुत अर्सा पहले ही उसके सम्मुख प्रमाण सहित यह स्पष्ट कर दिया गया था कि उसे अपने स्वास्थ्य की अवहेलना करने का कोई अधिकार नहीं है और वे उसे निरामिष, किन्तु पौष्टिक भोजन खिलाते थे। वह कम, मगर पहले से कहीं ज्यादा और अक्सर बड़े मजे से खाता, जबकि पहले घृणा से और पाप मानते हुए ऐसा करता था। तो इस समय भी ऐसा ही हुआ। उसने दलिया खाया, चाय का प्याला पिया और आधी सफेद डबल रोटी खा ली।

परिचारक चला गया और पादरी सेर्गियस एल्म के नीचे अकेला बैठा रह गया।

मई महीने की बहुत ही सुहानी शाम थी, भोज, एस्पन, एल्म, बर्ड-चेरी और बलूत वृक्षों पर कोंपलें निकली ही थीं। एल्म के पीछे बर्ड-चेरी की झाड़ियां ख़ूब फूली हुई थीं। बुलबुलें – एक तो बिल्कुल पास ही में और दो या तीन नीचे, नदी के पास झाड़ियों में अपना तराना छेड़े हुए थीं। दूर, नदी की ओर से गाने की आवाज आ रही थी, शायद काम से लौटते हुए मजदूर गा रहे थे। सूरज जंगल की ओट में जा चुका था और उसकी टेढ़ी-तिरछी किरण हरियाली पर बिखरी हुई थीं। यह दिशा पूरी तरह रोशन थी और दूसरी, एल्मवाली, अन्धेरी थी। गुबरैले उड़ते थे, पंख फड़फड़ाते थे और नीचे गिर जाते थे।

शाम के भोजन के बाद पादरी सेर्गियस मन ही मन प्रार्थना करने लगा: "भगवान के बेटे, ईसा मसीह, हम पर दया करो।" इसके बाद वह भजन गाने लगा और इसी समय अचानक एक गौरैया झाड़ियों में से उड़कर जमीन पर आ बैठी, चहकती और फुदकती हुई उसके पास आई, किसी कारण डरी और उड़ गयी। पादरी सेर्गियस अपने संसार-परित्याग के बारे में प्रार्थना कर रहा था और इसे जल्दी से ख़त्म कर देना चाहता था ताकि बीमार बेटीवाले व्यापारी को बुलवा भेजे। उसे इस लड़की में दिलचस्पी महसूस हो रही थी। उसे इसलिए दिलचस्पी महसूस हो रही थी कि वह ध्यान आकर्षित करनेवाली नवागन्तुक थी, कि वह और उसका पिता उसे एक ऐसा पहुंचा हुआ महात्मा मानते थे, जिसकी प्रार्थना भगवान के दरबार में मान ली जाती है। वह ख़ुद इससे इनकार करता था, मगर दिल की गहराई में अपने को ऐसा ही सिद्ध मानता था।

उसे प्रवसर इस बात की हैरानी होती कि यह हो कैसे गया, कि यह स्तेपान कासात्स्की ऐसा असाधारण महात्मा और चमत्कारी व्यक्ति बन गया। मगर यह ऐसा था, इसमें कोई सन्देह नहीं था। उन चमत्कारों पर तो वह अविश्वास नहीं कर सकता था, जो उसने स्वयं देखे थे। ऐसा पहला करिश्मा था उस चौदह वर्षीय लड़के का स्वस्थ होना और नवीनतम था उसकी प्रार्थना के प्रभाव से एक बुढ़िया की आंखों की रोशनी लौट आना।

बहुत अजीब होते हुए भी बात ऐसी ही थी। तो व्यापारी की बेटी में उसकी इसलिए दिलचस्पी थी कि वह एक नवागन्तुक थी, कि उसमें आस्था रखती थी और इसलिए भी कि उसके द्वारा वह स्वास्थ्य-प्रदान करने की अपनी शक्ति और अपनी ख्याति की फिर से पुष्टि कर सकता था। "हजारों वेर्स्ता की दूरी से लोग आते हैं, अखबारों में चर्चा होती है, सम्राट को मालूम है, यूरोप, नास्तिक यूरोप में धूम मची हुई है," उसने मन ही मन सोचा। अचानक उसे अपने इस घमंड पर शर्म आई और वह फिर से प्रार्थना करने लगा: "हे भगवान, स्वर्ग-स्वामी, सान्त्वनादायी, सत्यात्मा, आकर हमारे हृदयों में वास करें, हमें पाप-मुक्त करें, हमारी आत्माओं की रक्षा करें और उन्हें अपनी ज्योति दें। झूठे सांसारिक घमण्ड के पाप से मेरी आत्मा को मुक्ति दिलायें," वह दोहराता गया और उसे याद हो आया कि कितनी बार उसने इसके लिए प्रार्थना की थी और कितनी निष्फल रही थीं उसकी प्रार्थनायें। उसकी प्रार्थनायें दूसरों के लिए करिश्मे करती थीं, मगर अपने लिए वह भगवान से इस तुच्छ भावना की मुक्ति भी नहीं प्राप्त कर सकता था।

उसे अपने एकान्तवास के पहले वर्षों की प्रार्थनायें याद हो आयीं, जब वह भगवान से पवित्रता, विनम्रता और प्यार का वरदान मांगता था। तब उसे लगता था कि भगवान उसकी प्रार्थनाओं पर कान भी देता था। उसका मन पावन था और उसने अपनी उंगली काट डाली थी। उसने अपनी उंगली की बची हुई पोर ऊपर उठाकर उसे चूमा। उसे लगा कि उन दिनों, जब वह अपने पापों के लिए निरन्तर खुद को कोसा करता था, वह विनम्र भी था। उसे लगा कि तब उसमें प्यार भी था और उसे याद हो आया कि उस बूढ़े से, जो उसके पास आया था, उस पियक्कड़ सैनिक से, जिसने उससे पैसे मांगे थे, और उस नारी से उसने कैसा

स्नेहपूर्ण व्यवहार किया था। मगर अब? उसने अपने आप से पूछा कि क्या वह किसी को प्यार करता है, सोफिया इवानोव्ना को, पादरी सेरापिओन को? क्या उसने उन लोगों के प्रति प्रेम-भावना अनुभव की थी, जो आज उसके पास आये थे? उस जवान प्रोफ़ेसर के प्रति, जिसके साथ उसने उपदेश देते हुए बातचीत की थी और वास्तव में जिसके सामने उसने अपनी अक़्ल और इस बात का प्रदर्शन करना चाहा था कि वह भी कुछ कम पढ़ा-लिखा नहीं है? लोगों का प्यार पाकर उसे ख़ुशी होती है, उसे इसकी ज़रूरत महसूस होती है, मगर उनके प्रति उसे प्रेम की अनुभूति नहीं होती। अब न तो उसमें प्रेम था, न विनम्रता और न पवित्रता ही।

यह जानकर उसे प्रसन्नता हुई थी कि व्यापारी की बेटी बाईस साल की है और वह यह जानने को भी उत्सुक था कि लड़की सुन्दर है या नहीं। उसने जब यह पूछा था कि क्या वह बहुत कमज़ोर है, तो वास्तव में यही जानना चाहा था कि उसमें नारी-सुलभ आकर्षण है या नहीं।

"क्या मेरा इतना पतन हो गया है?" उसने सोचा। "हे भगवान, मेरी मदद करो, मुझे ऊपर उठाओ, हे मेरे भगवान।" और वह हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगा। बुलबुलें अपना तराना जारी रख रही थीं। एक गुबरैला उड़कर उस पर आ बैठा और उसकी गुद्दी पर रेंगने लगा। उसने उसे दूर झटक दिया। "मगर क्या भगवान है भी? क्या मैं बाहर से ताला लगे हुए घर पर दस्तक दे रहा हूं... दरवाज़े पर लगा हुआ ताला ताकि उसे देख सकूं? यही तो वह ताला है–बुलबुलें, गुबरैले, प्रकृति। मुमकिन है कि वह नौजवान ही सही हो।" और वह ऊंची आवाज़ मे प्रार्थना करने लगा और देर तक, उस समय तक प्रार्थना करता रहा, जब तक कि ऐसे विचार लुप्त नहीं हो गये और उसे फिर से मानसिक शान्ति और विश्वास की अनुभूति नहीं होने लगी। उसने घंटी बजायी और परिचारक के आने पर व्यापारी और उसकी बेटी को भेजने के लिए कहा।

व्यापारी बेटी का हाथ थामे हुए आया और उसे कोठरी तक पहुंचाकर फ़ौरन वहां से चला गया।

व्यापारी की बेटी स्वर्ण-केशिनी और अत्यधिक गौरवर्णी थी, चेहरा उसका पीला था, शरीर गदराया हुआ, अत्यधिक विनीत, बालक का सा सहमा चेहरा, मगर शारीरिक उभार-निखार था नारी जैसा। पादरी सेर्गियस द्वार के पास बेंच पर ही बैठा रहा। लड़की जब कोठरी की ओर

जाती हुई उसके निकट रुकी और उसने उसे आशीर्वाद दिया, तो जिस ढंग से उसने उसके शरीर की थाह ली, उससे वह ख़ुद भी कांप उठा। वह आगे बढ़ गयी और पादरी को लगा मानो किसी ने उसे डंक मार दिया हो। उसके चेहरे से उसने भांप लिया कि वह कामुक और मन्दबुद्धि है। पादरी सेर्गियस उठा और कोठरी में गया। वह स्टूल पर बैठी हुई उसकी प्रतीक्षा कर रही थी।

उसके अन्दर आने पर वह उठकर खड़ी हो गयी।

"मैं अपने पापा के पास जाना चाहती हूं," वह बोली।

"डरने की कोई बात नहीं है," सेर्गियस ने कहा। "कहां दर्द होता है तुम्हें?"

"हर जगह ही दर्द होता है मुझे," वह बोली और अचानक उसके चेहरे पर मुस्कान खिल उठी।

"तुम स्वस्थ हो जाओगी," पादरी ने कहा। "प्रार्थना करो।"

"प्रार्थना करने से क्या होगा, मैं बहुत प्रार्थना कर चुकी, कुछ लाभ नहीं हुआ।" वह मुस्कराती जा रही थी। "हां आप प्रार्थना करें और अपना हाथ मेरे ऊपर रखें। मैं सपने में आपको देख चुकी हूं।"

"क्या देखा था तुमने सपने में?"

"मैंने देखा था कि आपने इस तरह से अपना हाथ मेरी छाती पर रखा था," उसने पादरी का हाथ पकड़ कर अपनी छाती पर रख लिया, "इस जगह।"

पादरी ने उसे अपना दायां हाथ दे दिया था।

"क्या नाम है तुम्हारा?" उसने सिर से पांव तक सिहरते हुए पूछा। वह यह अनुभव कर रहा था कि बाज़ी हार गया, कि वासना उसके वश से बाहर हो चुकी है।

"मार्या! क्यों, क्या बात है?"

उसने पादरी का हाथ लेकर चूमा और फिर उसकी कमर में बांह डालते हुए अपनी तरफ़ खींचा।

"यह तुम क्या कर रही हो?" पादरी सेर्गियस ने कहा। "मार्या, तुम शैतान हो।"

"कोई बात नहीं।"

और वह उसे बाहों में कसे हुए उसके साथ बिस्तर पर बैठ गयी।

पौ फटने पर वह ओसारे में आया।

"क्या सचमुच यह सब हुआ था? इसका बाप आयेगा और यह उसे सब कुछ कह सुनायेगी। यह शैतान है। तो अब मैं क्या करूं? यह रही वह कुल्हाड़ी, जिससे मैंने उंगली काटी थी।" उसने कुल्हाड़ी उठाई और कोठरी की तरफ़ चल दिया।

परिचारक झटपट उसकी तरफ़ आया।

"चैलियां चाहिए क्या? लाइये, कुल्हाड़ी दीजिये।"

उसने कुल्हाड़ी दे दी। वह कोठरी में गया। लड़की सो रही थी। वह उसे देखकर कांप उठा। कोठरी के सिरे पर जाकर उसने देहाती के कपड़े पहने, कैंची लेकर बाल काटे और पहाड़ के दामन में से जाती हुई पगडंडी पर नदी की तरफ़ चल दिया, जहां वह चार बरस से नहीं गया था।

नदी के किनारे-किनारे एक सड़क थी। वह उसी पर चल दिया और दोपहर तक चलता गया। दोपहर को वह रई के खेत में घुसकर लेट गया। शाम होने पर वह नदी के किनारे बसे एक गांव के क़रीब पहुंच गया। वह गांव में न जाकर नदी की ओर, खड़ी चट्टान की ओर बढ़ गया।

भोर की बेला थी, सूर्योदय होने में आध घण्टे की देर थी। सब कुछ धुंधला-धुंधला, उदास-उदास था और पश्चिम से पौ फटने के पहले की ठण्डी हवा आ रही थी। "हां, अब किस्सा ख़त्म करना चाहिए। भगवान नहीं है। मगर कैसे अन्त करूं अपना? नदी में कूदकर? मगर मैं तो तैरना जानता हूं, डूब नहीं सकूंगा। सूली लगाकर? हां, यह रहा कमरबन्द।" उसे यह इतना सम्भव और मौत इतनी निकट लगी कि वह दहल उठा। पहले की भांति हताशा के क्षणों में उसने प्रार्थना करनी चाही। मगर प्रार्थना करे, तो किसकी? भगवान तो रहा नहीं था। वह कोहनी टिकाये लेटा था। अचानक उसे इतने ज़ोर की नींद महसूस हुई कि वह सिर को हाथ पर थामे न रख सका, उसने बांह फैलाकर सिर को उस पर टिका दिया और उसी दम सो गया। मगर क्षण भर को ही उसे झपकी आयी, तुरन्त ही उसकी आंख खुल गयी और वह या तो सपने में या स्मृति-पटल पर एक दृश्य देखने लगा।

उसने लगभग बालक के रूप में अपने को मां के देहातवाले घर में देखा। एक बग्घी उनके दरवाज़े पर आकर रुकी और उसमें से बड़ी-सी,

काली, बेलचा दाढ़ी वाले चाचा निकोलाई सेर्गेयेविच निकले। उनके साथ एक दुबली-पतली लड़की थी, बड़ी-बड़ी विनम्र आंखों, दयनीय और सहमे से चेहरेवाली। उसका नाम था पाशेन्का। इस पाशेन्का को लड़कों के बीच खेलने के लिए छोड़ दिया गया। उसके साथ खेले-कूदे बिना तो छुटकारा नहीं था, मगर इसमें मजा नहीं रहा था। बुद्धू थी। आख़िर हुआ यह कि उसका मज़ाक उड़ाया जाने लगा और उसे यह दिखाने के लिए मजबूर किया गया कि वह किस तरह से तैरती है। वह फ़र्श पर लेटकर इसका प्रदर्शन करने लगी। सभी खिलखिलाकर हंसने और उसका उल्लू बनाने लगे। वह यह समझ गयी, उसके चेहरे पर लाल लाल धब्बे उभर आये और उसकी सूरत इतनी दयनीय, इतनी अधिक दयनीय हो गयी कि वह ख़ुद भी पानी-पानी हो गया था और उसकी टेढ़ी, दयालु और विनम्र मुस्कान कभी भी नहीं भूल सकेगा। सेर्गियस याद करने लगा कि फिर उससे कब भेंट हुई थी। कई वर्ष बाद, साधु बनने के पहले उससे फिर उसकी मुलाक़ात हुई थी। उसने किसी जमींदार से शादी की थी, जिसने उसकी सारी दौलत उड़ा दी थी और उसकी ख़ूब पिटाई करता था। उसके दो बच्चे थे—बेटा और बेटी। बेटा छोटी ही उम्र में मर गया था।

सेर्गियस को याद आया कि जब वह उससे मिला था तो कितनी दुःखी थी वह। इसके बाद मठ में उससे भेंट हुई थी। तब वह विधवा हो चुकी थी। उस समय भी वह वैसी ही थी, बुद्धू कहना तो ठीक नहीं होगा, मगर नीरस, नगण्य और दयनीय। अपनी बेटी और उसके मंगेतर के साथ आयी थी वह। गरीब हो चुके थे वे। बाद में उसने सुना था कि वह किसी छोटे से नगर में रहती है और बहुत गरीब है। "मगर मैं उसके बारे में सोच क्यों रहा हूं?" उसने ख़ुद से सवाल किया। फिर भी वह उसके बारे में सोचे बिना नहीं रह सका। "कहां है वह? क्या हाल है उसका? क्या वह वैसी ही दुःखी है, जैसी उस समय थी, जब उसने फ़र्श पर यह दिखाया था कि वह कैसे तैरती है? मगर मैं क्यों उसके बारे में सोच रहा हूं? क्या कर रहा हूं यह मैं? बस, खेल ख़त्म करना चाहिए।"

फिर से वह भयभीत हो उठा और इस विचार को भूलने के लिए फिर से पाशेन्का के बारे में सोचने लगा।

इस तरह वह कभी अपने अनिवार्य अन्त और कभी पाशेन्का के बारे में सोचता हुआ देर तक लेटा रहा। उसे लगा कि पाशेन्का ही उसकी रक्षा

कर सकती है। आख़िर उसकी आंख लग गयी। सपने में उसे एक फ़रिश्ता दिखाई दिया, जिसने उसके पास आकर कहा: "पाशेन्का के पास जाओ और उससे यह मालूम करो कि तुम्हें क्या करना चाहिए, तुम्हारा पाप क्या है और पाप-मुक्ति का साधन क्या है।"

जब वह जागा, तो इस निर्णय पर पहुंचा कि सपने में उसे जो कुछ कहा गया है, वह भगवान का आदेश है। वह ख़ुश हुआ और उसने ऐसा ही करने का फ़ैसला किया। जहां वह रहती थी उसे वह नगर मालूम था– तीन सौ से अधिक वेर्स्ता दूर था वह। सेर्गियस उधर ही चल दिया।

(८)

पाशेन्का तो कभी की पाशेन्का नहीं रही थी, बूढ़ी, हड्डियों का ढांचा और झुर्रियोंवाली प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना बन चुकी थी, एक बदक़िस्मत और पियक्कड़ सरकारी कर्मचारी माव्रीकियेव की सास थी। वह उसी छोटे-से नगर में रहती थी, जहां उसके दामाद की नौकरी छूट गयी थी। सारे परिवार–बेटी, रोगी और विक्षुब्ध दामाद और पांच नाती-नातिनों–का बोझ उसने अपने कंधों पर ले रखा था। वह पचास कोपेक फ़ी घंटा के हिसाब से व्यापारियों के बच्चों को संगीत सिखाती और इस तरह सब का पेट पालती थी। दिन में कभी चार और कभी पांच घण्टे संगीत की शिक्षा देती और इस तरह महीने में कोई साठेक रूबल कमा लेती। दामाद को फिर से नौकरी लगने तक इसी आमदनी पर गुज़ारा होता था। दामाद के लिए कोई नौकरी ढूंढ़ने का अनुरोध करते हुए प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना ने सभी रिश्तेदारों और जान-पहचान के लोगों को ख़त लिखे थे। ऐसा ही एक पत्र उसने सेर्गियस को भी भेजा था, मगर वह पत्र मिलने के पहले ही मठ से रवाना हो चुका था।

शनिवार का दिन था और प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना किशमिशवाली मीठी रोटी के लिए ख़ुद आटा गूंध रही थी। उसके पिता के घर में भूदास रसोइया ऐसी रोटी बहुत बढ़िया बनाता था। वह इतवार के दिन नाती-नातिनों की इसी मीठी रोटी से दावत करना चाहती थी।

उसकी बेटी माशा सबसे छोटे बच्चे को लोरी दे रही थी और दो बड़े बच्चे, बेटा और बेटी, स्कूल गये हुए थे। दामाद रात भर नहीं सोया

था और अब उसकी आंख लग गयी थी। प्रास्कोव्या मिखाइलोव्ना भी पिछली रात बहुत देर तक सो नहीं पायी थी, दामाद के विरुद्ध बेटी का गुस्सा ठंडा करने की कोशिश करती रही थी।

वह यह समझ चुकी थी कि दामाद दुर्बल प्रकृति का व्यक्ति है, उसके लिए बातचीत और ज़िंदगी का अपना ढंग बदलना मुमकिन नहीं, कि बेटी के ताने-बोलियों से कोई लाभ नहीं होगा। इसलिए वह उन्हें शान्त करने के लिए पूरा जोर लगाती थी ताकि भला-बुरा कहने और गुस्सा-गिला करने की नौबत न आये। लोगों के बीच कटु सम्बन्धों को तो वह बर्दाश्त ही नहीं कर पाती थी। उसे यह बिल्कुल स्पष्ट था कि बक-झक से स्थिति सुधरने के बजाय और बिगड़ेगी ही। उसने इस मामले पर सोच-विचार भी नहीं किया था, वह तो गुस्से से वैसे ही घबराती थी, जैसे दुर्गन्ध से, शोर-शराबे और मार-पीट से।

अपनी दक्षता पर स्वयं मुग्ध होती हुई वह लुकेरिया को यह सिखा रही थी कि आटा कैसे तैयार करना चाहिए। इसी समय उसका छः वर्षीय नाती, मीशा, जो पेशबन्द बांधे था और अपनी टेढ़ी-मेढ़ी टांगों पर जहां-तहां मरम्मत की गयी जुराबें चढ़ाये थे, डरी-सहमी सूरत बनाये रसोईघर में भागा आया।

"नानी, एक डरावना-सा बूढ़ा तुम्हें बुला रहा है।"

लुकेरिया ने बाहर झांका—

"मालकिन, कोई तीर्थ-यात्री है।"

प्रास्कोव्या मिखाइलोव्ना ने अपनी हड्डीली कोहनियों को आपस में रगड़ कर आटा उतारा, पेशबन्द से हाथ पोंछे और यात्री के लिए बटुए में से पांच कोपेक लाने को भीतर जाने लगी। मगर तभी उसे याद आ गया कि बटुए में दस कोपेक से कम का सिक्का नहीं है। चुनांचे वह सिर्फ़ रोटी देने का फ़ैसला करके अलमारी की तरफ़ बढ़ी। मगर इसी क्षण यह ख्याल आने पर कि वह कंजूसी कर रही है, उसे शर्म आई और लुकेरिया को रोटी का बड़ा-सा टुकड़ा काटने का आदेश देकर ख़ुद दस कोपेक का सिक्का लेने अन्दर चली गई। "तो अब अपनी कंजूसी की सज़ा भुगतो," उसने अपने आप से कहा, "दुगुना दो।"

उसने क्षमा मांगते हुए रोटी और पैसे भी तीर्थ-यात्री को दे दिये। मगर अपनी ऐसी उदारता पर गर्व करने के बजाय उसे इस बात की शर्म

महसूस हुई कि यह इतना कम दे रही है। इतना प्रभावशाली व्यक्तित्व था तीर्थ-यात्री का।

यह सही है कि सेर्गियस ने ईसा मसीह के नाम पर भीख मांगते हुए तीन सौ वेर्स्ता का फ़ासला तय किया था, वह दुबला और मुरझा गया था, ख़स्ताहाल हो गया था, बेशक उसके बाल कटे हुए थे, वह देहातियों की सी टोपी और वैसे ही जूते पहने था, बेशक उसने विनम्रता से झुककर प्रणाम किया था, फिर भी उसमें कुछ ऐसी भव्यता थी, जो ज़बर्दस्ती लोगों को अपनी तरफ़ खींचती थी। मगर प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना उसे पहचान नहीं पाई। वह पहचान ही कैसे सकती थी, लगभग तीस साल हो गये थे उसे सेर्गियस को देखे हुए।

"क्षमा चाहती हूं, महाराज! शायद आप भोजन करना चाहते हैं?"

सेर्गियस ने रोटी और पैसे ले लिये। मगर वहां से गया नहीं, खड़ा खड़ा प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना की ओर देखता रहा, जिससे उसे बड़ी हैरानी हुई।

"पाशेन्का, मैं तो तुम्हारे पास आया हूं। मुझे ठुकराओ नहीं।"

सेर्गियस की काली काली सुन्दर आंखें मानो क्षमा-याचना करती हुई एकटक उसकी ओर देखने लगीं और उनमें आंसू चमक उठे। उसकी सफ़ेद होती मूंछों के नीचे दयातुर होंठ कांपने लगे।

प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना ने अपनी सूखी हुई छाती थाम ली, उसका मुंह खुल गया और तीर्थ-यात्री के चेहरे पर नज़रें गड़ाये हुए जहां की तहां बुत बनी खड़ी रह गयी।

"नहीं, ऐसा नहीं हो सकता! स्तेपान! सेर्गियस! पादरी सेर्गियस!"

"हां, वही हूं मैं," सेर्गियस ने धीरे से उत्तर दिया, "मगर न तो सेर्गियस, न पादरी सेर्गियस, महापापी स्तेपान कासात्स्की, पतित और महापापी हूं मैं। मुझे सहारा दो, मेरी मदद करो।"

"यह क्या कह रहे हैं आप? कैसे आप इतने दीन हो गये? आइये, अन्दर चलिये।"

प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना ने अपना हाथ बढ़ाया, मगर सेर्गियस ने उसे थामा नहीं और उसके पीछे पीछे हो लिया।

पर वह उसे टिकाये तो कहां? फ़्लैट तो बहुत ही छोटा था। शुरू में एक छोटी-सी कोठरी उसे दे दी गयी थी, मगर बाद में उसने वह

भी अपनी बेटी को दे दी थी, जो अब वहां बैठी बच्चे को लोरी दे रही थी।

"यहां बैठिये, मैं अभी आती हूं," उसने रसोईघर की बेंच की ओर संकेत करते हुए कहा।

सेर्गियस बेंच पर बैठ गया और बैठते ही उसने पहले एक और फिर दूसरे कंधे से थैला उतारा। अब यह मानो उसकी आदत ही बन गयी थी।

"हे भगवान, हे भगवान, कैसे दीन बन गये। इतना ऊंचा नाम और अचानक यह..."

सेर्गियस ने कोई जवाब नहीं दिया और थैले को अपने पास रखते हुए ज़रा मुस्करा भर दिया।

"माशा, जानती हो यह कौन है?"

प्रास्कोव्या मिखाइलोव्ना ने फुसफुसाकर बेटी को बताया कि सेर्गियस कौन था। उन दोनों ने मिलकर पलंग और बच्चे का पालना बाहर निकाला और कोठरी को सेर्गियस के लिए ख़ाली किया।

प्रास्कोव्या मिखाइलोव्ना सेर्गियस को कोठरी में ले गई।

"यहां आराम कीजिये। मैं क्षमा चाहती हूं, मगर मुझे अभी जाना होगा।"

"कहां?"

"पाठ देने। कहते हुए शर्म आती है—मैं संगीत सिखाती हूं।"

"संगीत सिखाना तो अच्छी बात है। मगर एक बात ध्यान में रखिये, मैं तो आपके पास किसी काम से आया हूं। कब आप से बातचीत कर सकता हूं?"

"यह मेरा बड़ा सौभाग्य होगा। शाम को ठीक रहेगा?"

"हां, मगर एक और प्रार्थना है। किसी को यह नहीं बताइयेगा कि मैं कौन हूं। सिर्फ़ आप ही के सामने मैंने अपना भेद खोला है। कोई भी यह नहीं जानता कि मैं कहां चला गया हूं। ऐसा करना ज़रूरी है।"

"आह, पर मैंने तो बेटी को बता दिया।"

"तो उससे कह दीजिये कि वह किसी से इसकी चर्चा नहीं करे।"

सेर्गियस ने जूते उतारे, लेटा और उसी क्षण गहरी नींद सो गया। उसने जागते हुए रात बिताई थी और चालीस वेर्स्ता की मंज़िल जो तय की थी।

प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना जब घर लौटी, तो सेर्गियस अपनी कोठरी में बैठा उसकी राह देख रहा था। दोपहर के खाने के वक़्त भी वह बाहर नहीं आया था और कोठरी में ही शोरबा और दलिया खा लिया था, जो लुकेरिया उसे दे गयी थी।

"तुमने जिस वक़्त आने को कहा था, उससे पहले ही क्यों आ गयीं?" सेर्गियस ने कहा। "अब हम बातचीत कर सकते हैं?"

"जाने कैसे मुझे यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है, मेरे घर ऐसा अतिथि आया है! मैंने एक पाठ छोड़ दिया। किसी दूसरे दिन पूरा कर लूंगी... मैं तो आपके यहां जाने का सपना ही देखती रही, आपको पत्र भी लिखा और अचानक ऐसे भाग जगे।"

"पाशेन्का! जो शब्द मैं अब तुमसे कहूंगा, कृपया उन्हें आत्म-स्वीकृति, उन्हे ऐसे शब्द मानना, जो मैंने मरते वक़्त भगवान को साक्षी मानकर कहे हैं। पाशेन्का! मैं पवित्रात्मा नहीं हूं, मैं तो साधारण, बिल्कुल साधारण व्यक्ति भी नहीं हूं। मैं पापी हूं, नरक का कीड़ा, बहुत ही नीच, पथ-भ्रष्ट, घमंडी पापी हूं, मालूम नहीं कि सबसे ही गया-बीता हूं या नहीं, मगर बेहद बुरों से भी बुरा हूं।"

पाशेन्का शुरू में तो आंखें फाड़-फाड़कर उसे देखती रही—वह कुछ कुछ विश्वास कर रही थी। मगर बाद में, जब उसे पूरी तरह यकीन हो गया, तो उसने अपने हाथ से उसका हाथ छुआ और दयापूर्वक मुस्कराते हुए कहा—

"स्तेपान, शायद तुम बढ़ा-चढ़ाकर कह रहे हो?"

"नहीं पाशेन्का। मैं व्यभिचारी हूं, हत्यारा, पाखंडी और धोखेबाज़ हूं।"

"हे भगवान! यह मैं क्या सुन रही हूं?" प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना कह उठी।

"मगर जीना तो होगा ही। और मैं, जो यह समझता था कि सब कुछ जानता हूं, जो दूसरों को जीने का ढंग सिखाता था, वही मैं, कुछ भी तो नहीं जानता और तुमसे प्रार्थना करता हूं कि तुम मुझे इसकी शिक्षा दो।"

"यह तुम क्या कह रहे हो, स्तेपान। मज़ाक कर रहे हो। किसलिए आप हमेशा मेरा मज़ाक उड़ाया करते हैं?"

कुछ पढ़ो। बेटा मीत्या जब चौथे दर्जे में पढ़ता था, बीमार हो गया और भगवान ने उसे अपने पास बुला लिया। बेटी माशा को वान्या – दामाद – से प्यार हो गया। वह भला आदमी है, मगर बदक़िस्मत है, बीमार रहता है।"

"अम्मां," बेटी ने उसे टोकते हुए कहा, "मीशा को ले लो, मैं अपने टुकड़े-टुकड़े तो नहीं कर सकती!"

प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना चौंकी, उठी, घिसी हुई एड़ियोंवाले जूतों में जल्दी जल्दी क़दम बढ़ाती हुई बाहर गयी और दो साल के लड़के को लिये हुए उल्टे पैरों वापिस आ गई। लड़का पीछे की ओर झुक गया और अपने छोटे छोटे हाथों से उसने उसके सिर पर बंधे रूमाल का सिरा पकड़ लिया।

"तो मैं क्या कह रही थी? हां, यहां उसकी नौकरी अच्छी थी, अफ़सर भी बहुत भला था, मगर वान्या से गाड़ी नहीं चली और उसने इस्तीफ़ा दे दिया।"

"क्या बीमारी है उसे?"

"स्नायु रोग है, बड़ी भयानक बीमारी है यह। हमने इसके बारे में सलाह ली, इलाज के लिए कहीं जाने की ज़रूरत थी, मगर हमारा हाथ तंग था। मुझे उम्मीद है कि वह ऐसे ही अच्छा हो जायेगा। दर्द तो उसे ख़ास नहीं होता, मगर..."

"लुकेरिया!" दामाद की कमज़ोर और झल्लायी हुई आवाज़ सुनाई दी। "जब उसकी ज़रूरत होती है, तो हमेशा कहीं न कहीं उसे भेज दिया जाता है। अम्मां!"

"अभी आती हूं," प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना ने अपनी बात फिर बीच में ही छोड़ दी। "उसने अभी खाना नहीं खाया। हमारे साथ नहीं खा सकता।"

वह बाहर गयी, वहां उसने कुछ काम किया और अपने संवलाये, हड़ीले हाथों को पोंछती हुई वापिस आयी।

"तो ऐसी है मेरी ज़िन्दगी। लगातार शिकवा-शिकायत करते रहते हैं, असन्तुष्ट रहते हैं, मगर फिर भी भगवान की कृपा है। बच्चे सभी अच्छे हैं, स्वस्थ हैं और जैसे-तैसे जिया जा सकता है। ख़ैर, मेरी चर्चा ही क्या हो सकती है!"

"चलो, ऐसा ही सही कि मैं मज़ाक़ कर रहा हूं। फिर भी तुम मुझे यह बताओ कि कैसी गुज़र रही है और कैसी गुज़री है तुम्हारी ज़िन्दगी?"

"मेरी ज़िन्दगी? बहुत भयानक, बहुत ही बुरी रही है मेरी ज़िन्दगी और अब भगवान ठीक ही मुझे इसकी सज़ा दे रहे हैं। इतनी बुरी, इतनी अधिक बुरी है मेरी ज़िन्दगी..."

"तुम्हारी शादी कैसे हुई? पति के साथ तुम्हारा जीवन कैसा बीता?"

"सभी बहुत बुरा रहा। बहुत ही बुरे ढंग से प्यार किया और शादी कर ली। पिता मेरी शादी के ख़िलाफ़ थे। मगर मैंने किसी भी चीज़ की परवाह नहीं की, शादी रचा ली। शादी के बाद पति की मदद करने के बजाय मैं अपनी ईर्ष्या की भावना से, जिस पर क़ाबू नहीं पा सकी थी, उसे बुरी तरह परेशान करती रही।"

"मैंने सुना था कि उसे पीने की लत थी।"

"हां, मगर मैं तो उसे शान्त नहीं कर पाती थी। उसे भला-बुरा कहती थी। पीने की लत तो बीमारी ही है। वह अपने को वश में नहीं कर पाता था और मुझे आज भी याद है कि कैसे मैं उसे पीने को नहीं देती थी। बड़े भयानक नाटक हुआ करते थे हमारे यहां।"

और उसने अपनी सुन्दर तथा अतीत की स्मृतियों के कारण दुःखी आंखों से कासात्स्की की ओर देखा।

कासात्स्की को याद हो आया कि कैसे उसने लोगों से सुना था पाशेन्का का पति उसे पीटता था। और अब उसकी दुबली-पतली, कान के पीछे उभरी नसोंवाली दुबली-पतली गर्दन तथा सुनहरी और सफ़ेद विरले बालों की छोटी-सी चुटिया को देखते हुए मानो वह यह सारा दृश्य अपनी आंखों के सामने देख रहा था।

"इसके बाद मैं दो बच्चों के साथ अकेली रह गयी, हाथ-पल्ले भी कुछ नहीं था।"

"मगर जागीर तो थी?"

"वह मेरे पति वास्या के रहते ही हमने बेच डाली थी और... सारी रकम उड़ गयी थी। किसी तरह जीना तो ज़रूरी था, मगर सभी अमीरज़ादियों की तरह मैं भी कुछ नहीं करना जानती थी। मेरी हालत तो कुछ ज़्यादा ही ख़राब थी, बहुत ही असहाय थी मैं। तो इस तरह जो कुछ बचा-बचाया था, उस पर गुज़र किया—बच्चों को पढ़ाया, ख़ुद भी

कुछ पढ़ो। बेटा मीत्या जब चौथे दर्जे में पढ़ता था, बीमार हो गया और भगवान ने उसे अपने पास बुला लिया। बेटी माशा को वान्या – दामाद – से प्यार हो गया। वह भला आदमी है, मगर बदक़िस्मत है, बीमार रहता है।"

"अम्मां," बेटी ने उसे टोकते हुए कहा, "मीशा को ले लो, मैं अपने टुकड़े-टुकड़े तो नहीं कर सकती!"

प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना चौंकी, उठी, घिसी हुई एड़ियोंवाले जूतों में जल्दी जल्दी क़दम बढ़ाती हुई बाहर गयी और दो साल के लड़के को लिये हुए उल्टे पैरों वापिस आ गई। लड़का पीछे की ओर झुक गया और अपने छोटे छोटे हाथों से उसने उसके सिर पर बंधे रूमाल का सिरा पकड़ लिया।

"तो मैं क्या कह रही थी? हां, यहां उसकी नौकरी अच्छी थी, अफ़सर भी बहुत भला था, मगर वान्या से गाड़ी नहीं चली और उसने इस्तीफ़ा दे दिया।"

"क्या बीमारी है उसे?"

"स्नायु रोग है, बड़ी भयानक बीमारी है यह। हमने इसके बारे में सलाह ली, इलाज के लिए कहीं जाने की जरूरत थी, मगर हमारा हाथ तंग था। मुझे उम्मीद है कि वह ऐसे ही अच्छा हो जायेगा। दर्द तो उसे ख़ास नहीं होता, मगर..."

"लुकेरिया!" दामाद की कमज़ोर और झल्लायी हुई आवाज़ सुनाई दी। "जब उसकी जरूरत होती है, तो हमेशा कहीं न कही उसे भेज दिया जाता है। अम्मां!"

"अभी आती हूं," प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना ने अपनी बात फिर बीच में ही छोड़ दी। "उसने अभी खाना नहीं खाया। हमारे साथ नहीं खा सकता।"

वह बाहर गयी, वहां उसने कुछ काम किया और अपने संवलाये, हड़ीले हाथों को पोंछती हुई वापिस आयी।

"तो ऐसी है मेरी जिन्दगी। लगातार शिकवा-शिकायत करते रहते हैं, असन्तुष्ट रहते हैं, मगर फिर भी भगवान की कृपा है। बच्चे सभी अच्छे हैं, स्वस्थ हैं और जैसे-तैसे जिया जा सकता है। ख़ैर, मेरी चर्चा ही क्या हो सकती है!"

"मगर घर-गिरस्ती का ख़र्च कैसे चलता है?"

"मैं कुछ कमा लेती हूं। संगीत में मेरा मन नहीं लगता था, मगर अब वह मेरे कितना काम आया है।"

वह जिस दराजदार अलमारी पर बैठी थी, उसी पर अपना छोटा-सा हाथ टिकाये हुए उसने पतली पतली उंगलियों से मानो कोई धुन बजायी।

"क्या देते हैं आपको वे एक पाठ का?"

"एक रूबल भी, पचास कोपेक भी और तीस कोपेक भी। बहुत ही मेहरबान हैं वे मुझ पर।"

"वे कुछ सीख भी जाते हैं?" आंखों ही आंखों में कुछ मुस्कराते हुए कासात्स्की ने पूछा।

प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना को शुरू में यह विश्वास नहीं हुआ कि वह गम्भीरता से यह पूछ रहा है और उसने प्रश्नसूचक दृष्टि से उसकी ओर देखा।

"हां, सीख भी जाते हैं। एक बहुत ही अच्छी लड़की है, कसाई की। बहुत ही अच्छी, बहुत ही भली। अगर मैं ढंग की औरत होती, तो अपने पिता के सम्बन्धों की बदौलत दामाद को कोई अच्छी नौकरी दिला देती। मगर मैं तो किसी लायक़ ही नहीं थी और इसी लिए सबको इस हालत तक पहुंचा दिया है।"

"हां, हां," कासात्स्की ने सिर झुकाते हुए कहा। "पाशेन्का, यह बताईये आप गिरजे के जीवन में तो हिस्सा लेती हैं न?"

"ओह, इसकी कुछ न पूछिये। बहुत बुरा हाल है, बिल्कुल ही भुला दिया है उसे तो मैंने। बच्चों के साथ कभी व्रत रखती हूं और गिरजे चली जाती हूं, वरना महीनों उधर का रुख़ नहीं करती। बच्चों को भेज देती हूं।"

"ख़ुद क्यों नहीं जातीं?"

"सच बात तो यह है..." उसका चेहरा शर्म से लाल हो गया। "फटे-पुराने चिथड़ों में बेटी और नाती-नातिनों के सामने गिरजे में मुझे शर्म आती है और नये कपड़े हैं नहीं। योंही आलस भी रहता है।"

"घर पर प्रार्थना करती हैं?"

"करती हूं, मगर ऐसे ही यन्त्रवत्। जानती हूं कि ऐसे नहीं होना

चाहिए, मगर सच्ची भावना नहीं है। बस, अपनी मूर्खताओं की चेतना ही बनी रहती है..."

"हां, हां, सो तो है, सो तो है," कासात्स्की ने मानो उसकी बात का समर्थन करते हुए कहा।

"आती हूं, अभी आती हूं," उसने दामाद की आवाज सुनकर जवाब दिया और सिर पर अपना रूमाल ठीक करके कमरे से बाहर चली गयी।

इस बार वह देर तक नहीं लौटी। जब वह आयी तो कासात्स्की उसी स्थिति में, घुटनों पर कुहनियां टिकाये और सिर झुकाये बैठा था, मगर थैला पीठ पर था।

जब वह शेड के बिना टीन का लैम्प लिये अन्दर आई, तो कासात्स्की ने अपनी सुन्दर और थकी थकी आंखें ऊंची करके उसकी ओर देखा और बहुत ही गहरी सांस ली।

"मैंने उन्हें यह नहीं बताया कि आप कौन हैं," उसने झेंपते-झेंपते कहना शुरू किया। "सिर्फ़ इतना ही बताया है कि कुलीन तीर्थ-यात्री हैं और मैं आपको जानती हूं। चलिये, चलकर चाय पी लीजिये।"

"नहीं..."

"तो मैं यहां ले आती हूं।"

"नहीं, मुझे कुछ नहीं चाहिए। भगवान तुम्हारा भला करें, पाशेन्का। मैं चलता हूं। अगर तुम्हें मुझ पर दया आती है, तो किसी को भी यह नहीं बताना कि तुमसे मेरी भेंट हुई थी। तुम्हें भगवान की क़सम दिलाता हूं, किसी से भी इसका जिक्र नहीं करना। बहुत बहुत धन्यवाद देता हूं तुम्हें। मैं तो तुम्हारे पांव छू लेता, मगर जानता हूं कि इससे तुम्हें झेंप महसूस होगी। धन्यवाद, ईसा मसीह के नाम पर माफ कर देना।"

"आशीर्वाद दीजिये।"

"भगवान आशीर्वाद देंगे। ईसा मसीह के नाम पर माफ कर देना।"

कासात्स्की ने जाना चाहा, मगर प्रास्कोव्या मिख़ाइलोव्ना ने उसे रोका, रोटी, रस्क और मक्खन लाकर दिया। उसने यह सब कुछ ले लिया और चल दिया।

अन्धेरा हो चुका था, दो मकान लांघने पर ही कासात्स्की उसकी आंखों से ओझल हो गया और केवल बिशप के कुत्ते के भौंकने से ही उसे यह मालूम हुआ कि वह चला जा रहा है।

"तो यह था मेरे सपने का मतलब। पाशेन्का यह है, जो मुझे होना चाहिए था और जो मैं नहीं हो सका। मैं यह मानते हुए कि भगवान के लिए जी रहा हूं, लोगों के लिए जिया और वह यह कल्पना करते हुए कि लोगों के लिए जीती है, भगवान के लिए जी रही है।

हां, नेकी का एक भी काम, पुरस्कार पाने की भावना के बिना किसी को दिया गया पानी का एक गिलास भी मेरे द्वारा लोगों के लिए किये गये सभी नेक कामों से अधिक महत्त्वपूर्ण है। मगर भगवान की सेवा करने की कुछ सच्ची इच्छा तो थी ही?" उसने अपने आप से पूछा। और उसे यह उत्तर मिला– "हां, मगर इसे तो लोगों में ख्याति पाने की भावना ने मलिन कर दिया था, इस पर अपनी काली छाया डाल दी थी। हां, उनके लिए भगवान नहीं है, जो मेरी तरह लोगों में ख्याति पाने के लिए जीते हैं। खोजूंगा, मैं भगवान को खोजूंगा।"

और वह उसी तरह, जिस तरह पाशेन्का के पास पहुंचा था, गांव गांव भटकने लगा, कभी तो नर-नारी तीर्थ-यात्रियों के साथ हो लेता, तो कभी उनसे अलग हो जाता, ईसा मसीह के नाम पर रोटी मांगता और कहीं रात बिताता। कभी कभी कोई गुस्सैल गृहिणी उसे डांट देती, नशे में धुत्त कोई किसान भला-बुरा कह देता, मगर अक्सर लोग उसे खिलाते-पिलाते और रास्ते के लिए भी कुछ दे देते। कुलीनों जैसी उसकी शक्ल-सूरत के कारण कुछ लोगों को उससे सहानुभूति होती और कुछ यह देखकर खुश होते कि कोई रईस भी भिखमंगों की बुरी हालत तक पहुंच गया है। मगर उसकी नम्रता सभी के दिल जीत लेती।

जिस किसी घर में उसे इंजील मिल जाती, वह अक्सर उसे पढ़कर सुनाता, हमेशा तथा हर जगह ही लोग मुग्ध होकर सुनते और हैरान होते कि चिर-परिचित इंजील उन्हें कितनी नयी-सी प्रतीत होती है।

अगर सलाह-मशविरा देकर, कुछ लिख-पढ़कर या समझा-बुझाकर लोगों का झगड़ा मिटाने या ऐसी ही कोई सेवा करने का उसे अवसर मिलता, तो वह उनके कृतज्ञता प्रकट करने के पहले ही ग़ायब हो जाता। इस तरह धीरे धीरे उसकी आत्मा में भगवान प्रकट होने लगे।

एक दिन वह दो बूढ़ी औरतों और एक सैनिक तीर्थ-यात्री के साथ जा रहा था। एक बग्घी और दो घुड़सवार उनके पास से गुज़रे। बग्घी में दुलकी-चालवाला बढ़िया घोड़ा जुता था और एक महिला तथा एक श्रीमन्त

उसमें बैठे थे। एक घोड़े पर बग्घी में बैठी महिला का पति सवार या और दूसरे पर उसकी बेटी। बग्घी में बैठा श्रीमन्त कोई फ़्रांसीसी मेहमान था।

फ़्रांसीसी मेहमान को les pélérins * दिखाने के लिए उन्होंने इन्हें रोका, जो रूसी लोगों के अन्धविश्वास के अनुसार काम करने के बजाय जगह जगह भटकते रहते हैं।

ये रईस लोग यह मानते हुए फ़्रांसीसी में बातचीत कर रहे थे कि तीर्थ-यात्रियों में से कोई भी उनकी बात समझ नहीं रहा है।

"Demandez leur," फ़्रांसीसी ने कहा, "s'ils sont bien sûrs de ce que leur pélérinage est agréable á dieu." **

चुनांचे इन लोगों से पूछा गया। बूढ़ी औरतों ने जवाब दिया:

"जैसा भगवान चाहें। पैर तो तीर्थों पर हो आये, दिल की भगवान जानें।"

सैनिक ने इस सवाल का यह जवाब दिया कि वह अकेला है, कोई ठौर-ठिकाना नहीं।

कासात्स्की से पूछा गया कि वह कौन है।

"प्रभु का दास।"

"Qu'est ce qu'il dit? Il ne répond pas." ***

"Il dit qu'il est un serviteur de dieu." ****

"Cela doit être un fils de prêtre. Il a de la race. Avez vous de la petite monnaie?" *****

फ़्रांसीसी ने रेज़गारी निकाली और हर किसी को बीस कोपेक दे दिये।

"Mais dites leur gue ce n'est pas pour des cierges que je leur donne, mais pour qu'ils se régalent de

---

* तीर्थ-यात्री (फ़्रेंच)।

** "इनसे पूछिये कि क्या इन्हें इस बात का पक्का यकीन है कि भगवान उनकी इस तीर्थ-यात्रा से ख़ुश होते हैं?"

*** क्या कहा है उसने? जवाब नहीं दिया।"

**** "उसने कहा है कि वह प्रभु का दास है।"

***** "यह ज़रूर किसी पादरी का बेटा है। ऊंचे कुल का है। आपके पास कुछ रेज़गारी है?"

thé,* चाय, चाय, pour vous, mon vieux,"** उसने मुस्कराते हुए कहा और दस्ताना पहने हाथ से कासात्स्की का कंधा थपथपाया।

"ईसा मसीह तुम्हारी रक्षा करें," कासात्स्की ने टोपी हाथ में थामे हुए अपना गंजा सिर झुकाकर कहा।

कासात्स्की को इस भेंट से इसलिए विशेष प्रसन्नता हुई कि वह अपने बारे में लोगों की राय की अवहेलना करके बहुत ही साधारण, बहुत ही मामूली काम करने मे समर्थ हुआ था – उसने नम्रता से बीस कोपेक लेकर अपने साथी, अंधे फ़क़ीर को दे दिये थे। जन-मत को वह जितना ही कम महत्त्व देता था, उतनी ही ज्यादा उसे भगवान की अनुभूति होती थी।

कासात्स्की ने इसी तरह आठ महीने बिता दिये। नौवें महीने मे गुबेर्निया के एक नगर में अन्य तीर्थ-यात्रियों के साथ उस पनाहगाह में पुलिसवालों ने उसे भी रोक लिया, जहां उसने रात बिताई थी। चूंकि उसके पास परिचय-पत्र नहीं था, उसे थाने में ले जाया गया। वहां उससे यह पूछा गया कि उसका परिचय-पत्र कहां है और वह कौन है। उसने जवाब दिया कि उसके पास परिचय-पत्र नहीं है और वह प्रभु का दास है। आवारों में शामिल करके उस पर मुक़दमा चलाया गया और साइबेरिया मे निर्वासित कर दिया गया।

साइबेरिया में वह एक धनी किसान के यहां रहने लगा और अब भी वहीं रहता है। वह मालिक के खेत में काम करता है, बच्चो को पढ़ाता है और बीमारों की सेवा-सुश्रूषा करता है।

१८९०–१८९८

---

*"इनसे कह दीजिये कि मोमबत्तियों के लिए नहीं, बल्कि इसलिए पैसे दिये हैं कि ये लोग चाय पियें।"

**"आपके लिए, दादा।"

नाच के बाद

"आपका कहना है कि मनुष्य अपने आप तो भले-बुरे को नहीं समझ सकता, सब कुछ वातावरण पर निर्भर करता है, कि मनुष्य वातावरण की उपज होता है। मैं यह नहीं मानता। मैं समझता हूं कि सब संयोग का खेल है। कम से कम अपने बारे में तो मुझे ऐसा ही लगता है..."

हमारे बीच बहस चल रही थी। कहा गया कि मनुष्य के चरित्र को सुधारने से पहले जीवन की परिस्थितियों को सुधारना जरूरी है। बहस के खात्मे पर ये शब्द हमारे दोस्त इवान वसील्येविच ने कहे, जिनका हम सब बड़ा मान करते थे। सच तो यह है कि बहस के सिलसिले में किसी ने भी यह नहीं कहा था कि हम स्वयं ही भले और बुरे का अन्तर नहीं समझ सकते। पर इवान वसील्येविच की कुछ ऐसी आदत थी कि बहस की गरमागरमी में जो सवाल उनके अपने मन में उठते, वह उन्हीं के जवाब देने लगते और उन्हीं विचारों से सम्बन्धित अपने जीवन के अनुभव सुनाने लगते। किसी घटना की चर्चा करते समय अक्सर वह इस तरह खो जाते कि उन्हें चर्चा के उद्देश्य का भी ध्यान नहीं रहता था। बातें वह सदा बड़े उत्साह और निश्छलता से सुनाते थे।

इस बार भी ऐसा ही हुआ।

"कम से कम अपने बारे में तो मैं यही कहूंगा। मेरे जीवन को ढालने में परिस्थितियों का नहीं, बल्कि किसी दूसरी ही चीज का हाथ रहा।"

"किस चीज का?" हमने पूछा।

"यह एक लम्बी दास्तान है। अगर आप यह समझना चाहते हैं तो मुझे कहानी शुरू से आखिर तक सुनानी पड़ेगी।"

"तो सुनाइये न।"

इवान वसील्येविच ने क्षण भर सोचकर सिर हिलाया।

"तो ठीक है," वह बोले, "मेरे सारे जीवन का रुख़ एक रात भर में, या यों कहें एक सुबह भर में ही बदल गया।"

"वह कैसे?"

"हुआ यह कि मैं एक लड़की से प्रेम करने लगा था। इससे पहले भी मैं कई बार प्यार कर चुका था, पर रंग इतना गाढ़ा कभी न हुआ था। यह बात बहुत पहले की है, अब तो उसकी बेटियों तक की भी शादियां हो चुकी हैं। उसका नाम था ब०, वारेन्का ब०..." इवान वसील्येविच ने उसका पूरा नाम बताया। "आज पचास बरस की उम्र में भी वह देखते ही बनती है, पर उस समय तो वह केवल अठारह वर्ष की थी और ग़ज़ब ढाती थी—ऊंचा-लम्बा, सांचे में ढला सा, छरहरा बदन, गर्वीला—हां, गर्वीला! वह सदा इस तरह तनी रहती मानो झुकना उसके लिए असंभव हो। उसका सिर ज़रा सा पीछे की ओर अकड़ा रहता। सामने खड़ी होती तो शानदार क़द और सलोने चेहरे के कारण रानी सी लगती। वैसे ऐसी दुबली-पतली थी कि उसकी हड्डी-हड्डी नज़र आती थी। उसकी रोबीली चाल-ढाल से डर लगता, पर उसके होंठों पर हर वक़्त लुभावनी, मधुर मुस्कान खेलती रहती। उसकी आंखें बेहद ख़ूबसूरत थीं, हर वक़्त दमकती रहतीं। जवानी जैसे उमड़ी पड़ती थी। अदम्य आकर्षण था उस लड़की में।"

"इवान वसील्येविच तो सचमुच कविता करने लगे हैं, कविता।"

"चाहे जितनी भी कविता करूं पर उसका सौन्दर्य मैं उसमें बांध नहीं सकता। ख़ैर, यह एक दूसरी बात है। इसका मेरी कहानी से कोई सम्बन्ध नहीं। जिन घटनाओं का मैं ज़िक्र करने जा रहा हूं, वे १८४० के आसपास घटीं। उस समय मैं एक प्रान्तीय विश्वविद्यालय में पढ़ता था। मैं नहीं जानता कि बात अच्छी थी या बुरी, पर जो बहस-मुबाहिसे और गोष्ठियां आजकल होती हैं, वे उन दिनों हमारे विश्वविद्यालय में नहीं होती थीं। हम जवान थे और जवानों की तरह रहते थे—पढ़ते-पढ़ाते और जीवन का रस लूटते। मैं उन दिनों बड़ा हंसोड़ और हट्टा-कट्टा युवक था। इस पर तुर्रा यह कि अमीर भी था। मेरे पास एक बढ़िया घोड़ा था। मैं लड़कियों के साथ बर्फ़-गाड़ी में बैठकर पहाड़ों की ढलानों पर फिसलने जाया करता था (तब स्केटिंग का चलन नहीं था।) पीने-पिलाने की पार्टियों

में भी मैं अपने विद्यार्थी दोस्तों के साथ जाया करता (उन दिनों हम शैम्पेन के अतिरिक्त और कुछ नहीं पीते थे। अगर जेब ख़ाली होती, तो हम कुछ भी न पीते। आजकल की तरह वोद्का तो हम छूते भी नहीं थे।) पर सबसे अधिक तो मुझे नाच और पार्टियां भाती थीं। मैं बहुत अच्छा नाचता था और देखने में भी बुरा न था।"

"इतनी नम्रता किसलिए दिखा रहे हैं?" एक महिला ने चुटकी ली। "हम सब ने आपकी उन दिनों की तसवीर देखी है। आप तो बड़े बांके जवान थे।"

"शायद रहा हूंगा, पर मेरे कहने का यह मतलब नहीं था। मेरा प्रेम नशे की हद तक जा पहुंचा। एक दिन मैं एक नाच-पार्टी में गया। पार्टी का आयोजन श्रवटाइड के आख़िरी दिन मार्शल ने किया था। मार्शल बड़े अच्छे स्वभाव का बूढ़ा आदमी था। अमीर था, कामिरहैर की उपाधि प्राप्त था और इस तरह की पार्टियां करने का ख़ासा शौकीन था। उसकी पत्नी भी ऐसे ही अच्छे स्वभाव की थी। जब मैं उनके घर पहुंचा तो वह मेहमानों का स्वागत करने के लिए पति के साथ दरवाज़े पर खड़ी थी। मख़मली गाउन पहने थी और सिर पर हीरों की छोटी सी जड़ाऊ टोपी लगा रखी थी। उसकी छाती और कन्धे गोरे और गुदगुदे थे और उन पर बढ़ती उम्र के चिन्ह नजर आने लगे थे। कन्धे उघड़े हुए थे, उसी तरह जैसे तस्वीरों में महारानी येलिज़वेता पेत्रोव्ना के। नाच-पार्टी बहुत शानदार रही। हॉल गैलरी वाला था। मशहूर साज़िन्दे मौजूद थे। वे संगीत-रसिक ज़मींदार के भू-दास थे। खाने को बहुत कुछ था और शैम्पेन की तो जैसे नदियां बह रही थीं। शैम्पेन का बहुत शौक़ीन होते हुए भी मैंने वह नहीं पी—मुझे प्रेम का नशा जो था! मैं इतना नाचा, इतना नाचा कि थककर चूर हो गया। मैंने हर तरह के नाच में भाग लिया—क्वाड्रिल, वाल्ज़ और पोलोनाइज़ में। और यह कहने की ज़रूरत नहीं कि मैं सबसे अधिक वारेन्का के साथ नाचा। वह सफ़ेद गाउन और गुलाबी रंग का कमरबन्द पहने थी। हाथों पर बढ़िया चमड़े के दस्ताने थे, जो उसकी नुकीली कोहनियों तक पहुंचते थे। पांवों में साटिन के जूते पहने थी। मज़ूर्का नाच के वक़्त अनीसिमोव नाम का कम्बख़्त एक इंजीनियर मेरे साथ दांव खेल गया और वारेन्का के साथ नाचने लगा। इसके लिए मैंने उसे कभी माफ़ नहीं किया। ज्यों ही वह हॉल में आई, वह उसके पास जा पहुंचा और नाचने का प्रस्ताव

किया। मुझे पहुंचने में थोड़ी देर हो गई थी। मैं पहले हेयर-ड्रेसर के पास, फिर दस्ताने खरीदने चला गया था। इसलिए वारेन्का के बजाय एक जर्मन लड़की के साथ मुझे मजूर्का नाच नाचना पड़ा। उससे किसी जमाने में मेरा प्रेम रहा था। मैं सोचता हूं कि उस शाम मैं उस लड़की के साथ बहुत बेरुख़ी से पेश आया। मैंने न तो उससे कोई बात की और न उसकी तरफ़ देखा ही। मेरी आंखें तो दूसरी ही लड़की पर गड़ी थीं — वही लड़की, जिसका क़द ऊंचा, बदन छरहरा और नाक-नक़्शा सांचे में ढला सा था और जिसके बदन पर सफ़ेद गाउन और गुलाबी कमरबन्द था। उसके गालों में छोटे छोटे गढ़े पड़ते थे, चेहरे पर उत्साह और ख़ुशी की लाली थी और आंखों में मृदुता छलकती थी। केवल मेरी ही नहीं, सभी की आंखें उस पर जमी थीं। यहां तक कि स्त्रियां भी उसी को निहार रही थीं। बाकी सभी स्त्रियां उससे हेच लगती थीं। उसके सौन्दर्य से प्रभावित हुए बिना कोई रह ही नहीं सकता था।

"क़ायदे से देखा जाये तो मजूर्का नाच के मामले में मैं उसका जोड़ीदार नहीं था, फिर भी ज्यादा वक़्त मैंने उसी के साथ नाचने में बिताया। बिना किसी झेंप-संकोच के वह सारा कमरा लांघती सीधी मेरी ओर चली आती। मैं भी बिना निमंत्रण का इन्तज़ार किये उछलकर उसके पास जा पहुंचता। वह मुस्कराती। मैं उसके दिल की बात भांप जाता, इसके लिए वह मुस्कराकर मुझे धन्यवाद देती। पर जब मैं और एक दूसरा पुरुष नाच में उसके पास पहुंचते और वह मेरा गुप्त नाम न बूझ पाती यानी जब वह मुझे नाच के साथी के रूप में न चुन पाती, तो अपने दुबले-पतले कंधे झटक देती और अपना हाथ दूसरे पुरुष की ओर बढ़ा देती। फिर मेरी ओर देखकर हल्के से मुस्कराती, मानो अफ़सोस कर रही हो और मुझे ढाढ़स बन्धा रही हो। मजूर्का में जब वाल्ज़ आया, तो मैं बड़ी देर तक उसके साथ नाचता रहा। नाचते नाचते उसकी सांस फूलने लगती, वह मुस्कराती और धीमे से कहती, 'encore'*। मैं उसके साथ नाचता जाता। मुझे लगता जैसे कि मैं हवा में तैर रहा हूं। मुझे अपने शरीर का ध्यान तक न रहता।"

"वाह, ध्यान तक न रहता। आपको ख़ासा ध्यान रहा होगा दोस्त, जब आपने उसकी कमर में हाथ डाला होगा। आपको अपने ही नहीं, बल्कि उसके भी शरीर का ध्यान रहा होगा," एक आदमी ने चुटकी ली।

---

*एक बार और (फ़्रेंच)।

इवान वसील्येविच का चेहरा सहसा तमतमा उठा और उसने ऊंची आवाज़ में कहा :

"तुम अपने बारे में, आजकल के युवकों के बारे में सोच रहे होगे। तुम लोग शरीर के सिवा और किसी बात के बारे में सोच ही नहीं सकते। हमारा ज़माना ऐसा नहीं था। ज्यों ज्यों हमारा प्रेम किसी लड़की के लिए गहरा होता जाता था, हमारी नज़रों में उसका रूप एक देवी के समान होता जाता था। आज तुम्हें केवल टांगें और टखने और शरीर के अंग-प्रत्यंग ही नज़र आते हैं। तुम्हारी दिलचस्पी केवल अपनी प्रेमिका के नंगे शरीर में ही रह गई है। पर मैं, जैसे अलफ़ांस कार्र ने लिखा है—सच मानो, वह बहुत अच्छा लेखक था—अपनी प्रेयसी को सदा कांसे के वस्त्रों में देखा करता था। उसकी नग्नता उघाड़ने के बजाय हम सदा, नूह के नेक बेटे के समान, उसे छिपाने की चेष्टा किया करते थे, पर यह बात तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी..."

"इसकी बातों की परवाह न कीजिये, आप अपनी कहते जाइये," एक दूसरे श्रोता ने कहा।

"हां, तो मैं उसके साथ नाचता रहा, मुझे वक़्त का कोई अन्दाज़ न रहा। साज़िन्दे बुरी तरह थक गये थे—आप तो जानते हैं कि नाच के ख़ात्मे पर क्या हालत होती है—वे मज़ूर्का की ही धुन बजाते रहे थे। इसी बीच वे बुज़ुर्ग, जो बैठक में ताश खेल रहे थे तथा स्त्रियां और दूसरे लोग उठ उठकर खाने की मेज़ों की ओर जाने लगे थे। नौकर-चाकर इधर-उधर भाग-दौड़ कर रहे थे। तीन बजने को हुए। हम इने-गिने बाक़ी मिनटों का रस निचोड़ लेना चाहते थे। मैंने फिर उससे नाचने का आग्रह किया और हम शायद सौवीं बार कमरे के एक सिरे से दूसरे सिरे तक नाचते चले गये।

"'भोजन के बाद मेरे साथ क्वाड्रिल नाचोगी न?' उसे उसकी जगह पर पहुंचाते हुए मैंने पूछा।

"'ज़रूर, अगर मां-बाप ने घर चलने का इरादा नहीं बना लिया तो,' उसने मुस्कराते हुए कहा।

"'मैं उन्हें ऐसा इरादा नहीं बनाने दूंगा,' मैंने कहा।

"'मेरा पंखा तो ज़रा देना,' वह बोली।

"'दिल चाहता है कि यह पंखा अपने पास ही रख लूं,' उसका सस्ता सा सफ़ेद पंखा उसके हाथ में देते हुए मैंने कहा।

"'घबराम्रो नहीं, यह लो,' उसने कहा और पंखे में से एक पंख तोड़कर मुझे दे दिया।

"मैंने पंख ले लिया। मेरा दिल बल्लियों उछलने लगा और रोम-रोम उसके प्रति कृतज्ञ हो उठा। मेरे मुंह से एक शब्द भी न निकला। आंखों ही आंखों में मैंने अपने दिल का भाव जताया। उस समय मुझे असीम सुख और आनन्द का अनुभव हो रहा था। मेरा दिल जाने कितना बड़ा हो उठा था। मुझे लगा जैसे मैं पहले वाला युवक हो नहीं रहा। मुझे अनुभव हुआ कि मैं किसी दूसरे लोक का प्राणी हूं, जो कोई पाप नहीं कर सकता, केवल नेकी ही कर सकता है।

"मैंने वह पंख अपने दस्ताने में खोंस लिया और वहीं उसके पास खड़ा रह गया। मेरे पांव जैसे कील उठे।

"'वह देखो, वे लोग मेरे पिताजी से नाचने का आग्रह कर रहे हैं,' उसने एक ऊंचे-लम्बे, रोबीले आदमी की तरफ़ इशारा करते हुए कहा। उसने कर्नल की वर्दी पहन रखी थी और दरवाज़े में खड़ा था। कन्धों पर चांदी के झब्बे थे। घर की मालकिन तथा अन्य स्त्रियों ने उसे घेर रखा था।

"'वारेन्का, इधर आओ,' घर की मालकिन ने कहा—उस महिला ने, जिसके सिर पर जड़ाऊ टोपी थी और कन्धे महारानी येलिज़वेता के से थे।

"वारेन्का दरवाज़े की ओर जाने लगी तो मैं भी उसके पीछे पीछे हो लिया।

"'अपने पिता से कहो, ma chère*, कि तुम्हारे साथ नाचें,' फिर कर्नल की ओर घूमकर मालकिन बोली, *'ज़रूर नाचो, प्योत्र व्लादिस्लाविच।'*

"वारेन्का का पिता ऊंचा-लम्बा, ख़ूबसूरत, रोबीला व्यक्ति था। उम्र काफ़ी बड़ी थी। जान पड़ता था कि उसकी तन्दुरुस्ती का पूरा पूरा ख़्याल रखा जाता है। दमकता चेहरा, à la Nicolas I** ऐंठी हुई सफ़ेद मूंछें, सफ़ेद ही क़लमें, जो मूंछों से जा मिली थीं। आगे की ओर काढ़े हुए बालों ने कनपटियां ढक रखी थीं। चेहरे पर लुभावनी, मधुर मुस्कराहट—बेटी के समान ही। वह मुस्कराता तो उसकी आंखें चमक उठतीं

---

*मेरी प्यारी (फ्रेंच)।

**ज़ार निकोलाई प्रथम की तरह (फ्रेंच)।

और होंठ खिल उठते। शरीर उसका बड़ा खूबसूरत था, फ़ौजी अफ़सरों की तरह चौड़ी, आगे को उभरी हुई छाती और उस पर कुछेक तमगे, कन्धे मजबूत और टांगें लम्बी और गठी हुई। वह पुराने ढंग का फ़ौजी अफ़सर था। उसकी चाल-ढाल निकोलाई प्रथम के ज़माने के अफ़सरों की सी थी।

"हम दरवाजे के पास पहुंचे तो कर्नल बार बार कह रहा था—मुझे अब नाचने-वाचने का अभ्यास नहीं रहा। इस पर भी उसने मुस्कराते हुए पेटी से तलवार उतारी, पास खड़े एक फुरतीले लड़के को थमा दी और अपने दायें हाथ पर चमड़े का दस्ताना चढ़ाया: 'सब बात नियम के अनुसार होनी चाहिये,' उसने मुस्कराते हुए कहा और फिर अपनी बेटी का हाथ अपने हाथ में लेकर, थोड़ा सा घूमकर नाचने के अन्दाज में खड़ा हो गया और नाच की संगत के लिए संगीत का इन्तज़ार करने लगा।

"मज़ूर्का की धुन बजने लगी। कर्नल ने एक पांव से फ़र्श पर ज़ोर से ठोंका दिया और दूसरा पांव तेजी से घुमाकार नाचने लगा। उसकी ऊंची-लम्बी काया कमरे में वृत्त से बनाती हुई थिरकने लगी। कभी धीरे धीरे, बड़े बांकपन से और कभी तेज़ तेज़, ज़ोर से वह एड़ियां ठकोरता। वारेन्का लता की तरह लचीली, उसके साथ साथ तैरती, सफ़ेद रेशमी जूतोंवाले पैर उठाती और ताल पर अपने पिता के कदमों के साथ साथ कभी लम्बे डग भरती तो कभी छोटे। सभी मेहमानों की निगाहें उनके एक एक अंगविक्षेप पर गड़ी रहीं। मेरे हृदय में उस समय सराहना से अधिक, गहरे आनंद की भावना रही। कर्नल के बूट देखकर तो मेरा मन जैसे द्रवित हो उठा। यों तो वे बढ़िया बछड़े के चमड़े के बने थे, परन्तु पंजे फ़ैशन के अनुसार नोकदार होने के बजाय, चौकोर थे। ज़ाहिर था कि उन्हें फ़ौज के मोची ने बनाया था। 'कर्नल फ़ैशनेबुल बूट नहीं पहनता है, साधारण बूट पहनता है, ताकि अपनी बेटी को अच्छे से अच्छे कपड़े पहना सके और उसे सोसाइटी में ले जा सके,' मैंने मन ही मन कहा। इसी कारण कर्नल के बूटों को देखकर मेरा मन द्रवित हुआ था। कर्नल किसी ज़माने में ज़रूर ही अच्छा नाचता रहा होगा। अब उसका शरीर बोझिल हो गया था, टांगों में भी वह लोच न रह गई थी, वह तेज़ और नाज़ुक मोड़ न ले सकता था, पर कोशिश ज़रूर कर रहा था। फिर भी उसने फुर्ती के साथ हॉल का दो बार चक्कर लगाया। इसके बाद उसने अपने दोनों पांव तेज़ी से

खोले, फिर सहसा उन्हें एक साथ जोड़कर कुछ कठिनाई के साथ एक घुटने के बल बैठ गया और वारेन्का मुस्कराते हुए कर्नल के घुटने के नीचे आ गये अपने स्कर्ट को छुड़ाकर बड़े बांकपन से नाचती हुई कर्नल के इर्द-गिर्द घूम गई। सभी ने ज़ोर से तालियां बजायीं। कर्नल को थोड़ी सी कठिनाई का अनुभव हुआ, मगर वह उठ खड़ा हुआ और बड़े प्यार से दोनों हाथों में अपनी बेटी का मुंह लेकर उसका माथा चूमा। फिर वह उसे मेरी ओर ले आया। उसने मुझे अपनी बेटी का नाच का साथी समझा, पर मैंने इस स्थिति से इन्कार किया। इस पर वह दुलार से मुस्कराया और अपनी तलवार पेटी में बांधते हुए बोला:

"'कोई बात नहीं, अब तुम इसके साथ नाचो।'

"जिस तरह शराब की बोतल से पहले कुछ बूंदें रिसती हैं और फिर धार फूट निकलती है, ठीक वैसे ही मेरे अन्तर से वारेन्का के प्रति प्यार उमड़ पड़ा। इस प्यार ने सारे विश्व को आलिंगन में भर लिया। हीरों की टोपी और उभरी हुई छाती वाली घर की मालकिन, घर के मालिक, मेहमानों, नौकर-चाकरों और अपने से नाराज़ अनीसिमोव—सभी के प्रति मैंने असीम अनुराग अनुभव किया। वारेन्का के पिता के प्रति, जिसने चौकोर पंजों वाले बूट पहन रखे थे और जिसकी मधुर मुस्कान अपनी बेटी की मुस्कान से बहुत मिलती-जुलती थी, मेरे हृदय में अगाध श्रद्धा का भाव उठने लगा।

"मज़ूर्का समाप्त हुआ। मेज़बानों ने हमें भोजन के लिए आमन्त्रित किया। परन्तु कर्नल ब० खाने की मेज पर नहीं आया। बोला, मैं अब और न रुक सकूंगा, क्योंकि मुझे कल सुबह जल्दी उठना है। मुझे आशंका हुई कि वह अपने साथ वारेन्का को भी ले जायेगा, पर वारेन्का अपनी मां के साथ बनी रही।

"भोजन के बाद मैं वारेन्का के साथ क्वाड्रिल नाचा। इसका उसने मुझे वचन दिया था। मैं समझ रहा था कि मेरी ख़ुशी चरम सीमा तक जा पहुंची है। पर नहीं, अब वह और भी अधिक बढ़ने लगी और क्षण प्रति क्षण बढ़ती गई। हमने प्रेम की कोई बात नहीं की। वह मुझसे प्रेम करती है या नहीं, यह एक सवाल ही बना रहा। पर, इस विषय में न तो मैंने उससे और न अपने मन से ही कुछ पूछा। मैं प्रेम करता हूं, यह मैंने अनुभव किया और मुझे इतना ही काफी लगा। डर था तो केवल इस बात का कि मेरे सौभाग्य पर कहीं कोई छाया न पड़ जाये।

"मैं घर पहुंचा, कपड़े बदले और सोने की तैयारी करने लगा, मगर नींद कहां? हाथ में अभी तक वह पंख और वरेन्का का दस्ताना था। दस्ताना उसने मुझे अपनी मां के साथ बग्घी में चढ़ते समय दिया था। इन चीज़ों पर निगाह पड़ते ही मुझे उसका चेहरा याद हो आता था। या तो उस समय जब नाच के लिए दो पुरुषों में से चुनते हुए उसने मेरा गुप्त नाम बूझ लिया था और मधुर स्वर में कहा था: 'गर्व है न तुम्हारा नाम?' और हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया था। या भोजन करते समय शैम्पेन के हल्के हल्के घूंट भरते हुए उसने गिलास के ऊपर से मेरी ओर देखा था। उसकी आंखों में मृदुता छलक रही थी। पर उसका सबसे सुन्दर रूप मुझे वह लगा था, जब वह अपने पिता के साथ नाच रही थी। कैसी सुगमता से उसके साथ साथ तैरती और अपने प्रशंसकों की ओर गर्व और उल्लास से देखती जा रही थी। यह गर्व और उल्लास का भाव जितना अपने प्रति था उतना ही अपने पिता के प्रति भी। दोनों प्राणी, अपने आप ही, बिना किसी चेष्टा के मेरे दिल में समा गये थे और मुझे उनसे स्नेह हो गया था।

"मेरे भाई का देहान्त हो चुका है, पर उस समय हम दोनों एक साथ रहते थे। मेरे भाई की सोसाइटी में कोई रुचि न थी और वह इन नाच-पार्टियों में कभी भी नहीं जाते थे। उन दिनों स्नातक-परीक्षा की तैयारी कर रहे थे और बड़ा आदर्श-जीवन बिताते थे। उस समय वह तकिये पर सिर रखे गहरी नींद सो रहे थे। आधा चेहरा कम्बल से ढंका था। उन्हें देखकर मेरा दिल दया से भर उठा। वह मेरे सुख से अनभिज्ञ थे और मैं उन्हें उसका भागीदार बना भी नहीं सकता था। मेरा नौकर, पेत्रूशा, मोमबत्ती जला कर ले आया और कपड़े बदलवाने लगा। लेकिन मैंने उसे रुख़सत कर दिया। उसकी आंखें नींद से घुटी जा रही थीं और बाल बिखरे हुए थे। वह मुझे बहुत भला लगा। किसी तरह की आहट न हो, इस ख्याल से मैं दबे पांवों अपने कमरे में चला गया और बिस्तर पर जा बैठा। मैं बेहद ख़ुश था, यहां तक कि मेरे लिए सोना असम्भव हो रहा था। मुझे लगा जैसे कमरे में बड़ी गरमी है। बिना वर्दी उतारे मैं चुपचाप बाहर ड्योढ़ी में आ गया, ओवरकोट पहना और दरवाज़ा खोलकर बाहर निकल आया।

"लगभग पांच बजे मैं नाच से लौटा था और मुझे लौटे भी लगभग

दो घण्टे हो चले थे। इसलिए जब मैं बाहर निकला तो दिन चढ़ चुका था। मौसम भी बिल्कुल थवटाईड के दिनों का सा था—चारों तरफ धुन्ध छाई थी, सड़कों पर बरफ़ पिघल रही थी और छतों से टप-टप पानी की बूंदें गिर रही थीं। उन दिनों ब० परिवार के लोग शहर के बाहरवाले हिस्से में रहा करते थे। उनका मकान एक खुले मैदान के सिरे पर था। दूसरे सिरे पर लड़कियों का एक स्कूल था। एक ओर लोगों के टहलने की जगह थी। मैं अपने घर के सामने वाली छोटी सी गली लांघकर बड़ी सड़क पर आ गया। सड़क पर लोग आ जा रहे थे। बर्फ़-गाड़ियों पर गाड़ीवान लकड़ी के तख्ते लादे लिये जा रहे थे। गाड़ियों से गहरी लकीरें पड़ रही थीं। घोड़ों पर पालिश किये साज कसे थे। उनके गीले सिर एक लय में हिल रहे थे, गाड़ीवान कन्धों पर छाल की चटाइयां ओढ़े और बड़े बड़े बूट चढ़ाये गाड़ियों के साथ साथ कीचड़ में धीरे धीरे चले जा रहे थे। मुझे हर चीज प्यारी और महत्त्वपूर्ण लग रही थी, यहां तक कि सड़क के दोनों तरफ खड़े घर भी, जो धुन्ध में बड़े ऊंचे नजर आ रहे थे।

"मैं उस मैदान के पास आ पहुंचा, जहां उनका मकान था। मुझे वहां एक सिरे पर, जहां लोग टहलने जाया करते थे, कोई बड़ी और काली सी चीज नजर आई। साथ ही ढोल और बांसुरी बजने की आवाज भी कानों में पड़ी। वैसे तो हर घड़ी मेरा मन ख़ुशी से नाचता रहा था और मजूर्का की धुन जब-तब मेरे कानों में गूंजती रही थी, पर यह संगीत कुछ अलग ही लगा—कर्कश और भद्दा सा।

"'यह भला क्या हो सकता है?' मैं सोचने लगा। मैं उसी आवाज की दिशा में फिसलनी सड़क पर बढ़ा। मैं कोई सौ कदम गया हूंगा कि मुझे धुन्ध में लोगों की भीड़ नजर आई। बात साफ़ हुई। वे फ़ौजी सिपाही थे। मैंने सोचा कि सुबह की क़वायद कर रहे होंगे। मेरे साथ साथ सड़क पर एक लोहार चला जा रहा था। वह एप्रन और जाकेट पहने था। कपड़ों पर जगह जगह तेल के धब्बे थे। उसके हाथ में बड़ी सी गठरी थी। मैं उसके साथ हो लिया। पास जाकर मैंने देखा कि सैनिकों की दो क़तारें आमने-सामने खड़ी हैं। उन्होंने काले कोट पहन रखे हैं, उनके हाथों में बन्दूकें हैं और वे चुपचाप खड़े हैं। उनके पीछे एक बांसुरी बजाने वाला और कई ढोल पीटने वाले हैं और वही कर्कश और भद्दी धुन बजा रहे हैं।

"हम रुक गये।

"'ये क्या कर रहे हैं?' मैंने लोहार से पूछा।

"'एक तातार को सज़ा दी जा रही है। उसने फ़ौज से भागने की कोशिश की थी,' लोहार ने गुस्से के साथ जवाब दिया और दोहरी क़तार के दूसरे सिरे की ओर आंखें फाड़ फाड़कर देखने लगा।

"मैं भी उसी ओर देखने लगा। दो क़तारों के बीच कोई भयानक चीज़ हमारी ओर बढ़ती आ रही थी। वह एक आदमी था, कमर तक नंगा, हाथ उसे ले जाने वाले दो सैनिकों की बन्दूक़ों के साथ बंधे हुए थे। उनके साथ साथ ऊंचे-लम्बे क़द का एक अफ़सर चला आ रहा था। वह ओवरकोट पहने था और सिर पर फ़ौजी टोपी थी। यह अफ़सर मुझे परिचित सा लगा। अपराधी की पीठ पर दोनों तरफ़ से हन्टर पड़ रहे थे। उसका शरीर कांप कांप जाता और उसके पांव पिघलती बरफ़ में बार बार धंस जाते। इस तरह वह धीरे धीरे आगे को सरकता रहा। बीच बीच में वह पीछे की ओर दुबक सा जाता तो दोनों फ़ौजी, जो बन्दूकों के साथ बांधे हुए उसे ले जा रहे थे, उसे आगे को धकेल देते और जब वह आगे की ओर भहराने लगता तो पीछे की ओर खींच लेते ताकि वह गिरे नहीं। साथ साथ, स्थिर क़दम रखता वह ऊंचे-लम्बे क़द का अफ़सर बढ़ता आ रहा था। वह भूलकर भी पीछे न रहता। मेरी नज़र उसके दमकते चेहरे, उजली मूंछों और क़लमों पर पड़ी। मैंने फ़ौरन पहचान लिया कि यह वरेन्का का बाप है।

"हंटर के हर वार पर अपराधी का चेहरा दर्द से ऐंठ उठता, वह बेचैन होकर उस ओर देखता, जहां से हंटर पड़ा था। उसका मुंह खुला रहता। उसके सफ़ेद दांत चमक रहे थे। बार बार वह कुछ कहता। जब तक कि वह मेरे नज़दीक नहीं आ गया, मुझे उसके शब्द ठीक ठीक सुनाई नहीं दिये। वह बोल नहीं, सिसक रहा था। जब वह मेरे नज़दीक पहुंचा तो मैंने सुना, 'रहम करो भाइयो, भाइयो कुछ रहम करो।' पर भाइयों को कोई रहम नहीं आ रहा था। वह ऐन मेरे सामने आ पहुंचा। एक सैनिक ने बड़ी दृढ़ता से आगे बढ़कर तातार की पीठ पर इतने ज़ोर से हंटर मारा, कि उसकी आवाज़ हवा में गूंज गई। तातार आगे को गिरने वाला था, पर फ़ौजियों ने झटके से उसे थाम लिया। फिर दूसरी तरफ़ से एक हंटर और पड़ा, इसके बाद फिर इस तरफ़ से, और फिर उस तरफ़ से... कर्नल उसके साथ साथ चलता रहा। कभी वह अपने पांवों की ओर देखता और

कभी अपराधी की ओर। हवा में गहरी सांस लेता, गाल फुलाता और फिर धीरे धीरे, होंठ सिकोड़कर मुंह से हवा निकालता। जब यह जुलूस मेरे पास से निकल गया तो मुझे क्षण भर के लिए सैनिकों की क़तार के बीच से अपराधी की पीठ की झलक मिली। यह ऐसी रंग-बिरंगी, गीली, लाल और अस्वाभाविक थी कि मुझे विश्वास हो न हुआ कि यह एक इन्सान का शरीर है।

"'हे भगवान!' मेरे पास खड़ा लोहार बुदबुदाया।

"जुलूस बढ़ता गया। उस गिरते-पड़ते, बार बार दया की भीख मांगते इन्सान पर दोनों तरफ़ से कोड़े पड़ते गये। ढोल बजते गये, बांसुरी में से वही तीखी धुन निकलती रही, और रोबीला कर्नल उसी तरह रोब-दाब से अपराधी के साथ चलता गया। सहसा कर्नल रुक गया और तेजी से एक सैनिक की ओर बढ़ा।

"'मैं तुम्हें चखाऊंगा ढोल दिखाने का मज़ा!' उसकी क्रोध भरी आवाज़ मेरे कानों में पड़ी।

"उसने अपने मज़बूत, चमड़े के दस्ताने से लैस हाथ से नाटे-छोटे, दुबले-पतले सैनिक के मुंह पर तमाचे पर तमाचे जड़ने शुरू कर दिये, क्योंकि सैनिक का हंटर तातार की लहूलुहान पीठ पर पूरे ज़ोर से नहीं पड़ा था।

"नये हंटर लाओ!' कर्नल ने चिल्लाकर कहा, मुड़ा और उसकी नज़र मुझ पर पड़ी। मुझे देखा-अनदेखा करते हुए उसने बड़े ग़ुस्से से त्यौरी चढ़ाकर झट से मेरी ओर पीठ कर ली। मुझे बड़ी शर्म महसूस हुई। मेरी समझ में न आया कि मुड़ूं तो किस ओर को? मुझे लगा कि जैसे मैं कोई घिनौना काम करते पकड़ा गया हूं। मैं सिर झुकाये तेज़ चाल से घर लौट आया। रास्ते भर मेरे कानों में ढोल और बांसुरी की कर्कश आवाज़ गूंजती रही। 'रहम करो, भाइयो!' की दर्दभरी चीख़ और 'मैं तुम्हें चखाऊंगा ढोल दिखाने का मज़ा!' कर्नल की ग़ुस्से और दम्भ से भरी चिल्लाहट कानों के पर्दे फाड़ती रही। मेरा दिल इस तरह दर्द से भर उठा कि मुझे मतली होने लगी, यहां तक कि मुझे बार-बार राह में ठिठकना पड़ा। रह रहकर जी चाहता कि मैं क़ै कर किसी तरह इस दृश्य से उपजी घृणा को अपने अन्दर से बाहर निकाल दूं। मुझे याद नहीं कि मैं कैसे घर पहुंचा और कैसे जाकर बिस्तर पर पड़ गया। पर, ज्यों ही आंख लगने को हुई,

वह दृश्य फिर मेरी आंखों के सामने घूमने लगा, सारी आवाजें फिर मुझे सुनाई देने लगीं और मैं उठकर पलंग पर बैठ गया।

"'हो न हो, कोई न कोई बात ऐसी जरूर है, जिसे वह आदमी जानता है, पर मैं नहीं जानता,' कर्नल के बारे में सोचते हुए मैंने मन ही मन कहा, 'अगर उसकी तरह सब कुछ मेरी समझ में भी आ जाये तो शायद इस तरह मेरा दिल न दुखे।' पर, हजार चेष्टा करने पर भी वह बात मेरी समझ में नहीं आई, जो कर्नल समझता था। नतीजा यह कि कहीं शाम को जाकर मेरी आंख लगी और सो भी] तब, जब मैं एक मित्र के घर गया और मैंने अन्धाधुन्ध शराब पी ली।

"आप क्या समझते हैं कि मैंने इस दृश्य से कोई बुरा नतीजा निकाला? हरगिज़ नहीं। मैं तो इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यदि वह सारा कृत्य ऐसे विश्वास के साथ और हर आदमी द्वारा आवश्यक मानकर किया गया है, तो कोई न कोई बात ऐसी जरूर है, जिसका पता बाक़ी सब को तो है, पर केवल मुझे नहीं। आख़िरकार मैं भी इस रहस्य का भेद पाने की कोशिश करने लगा। पर, वह रहस्य मेरे लिए सदा रहस्य ही बना रहा। और चूंकि मैं उसे समझ नहीं पाया, इसलिए मैं फ़ौज में भरती भी नहीं हुआ, हालांकि मैं फ़ौज की नौकरी करना चाहता था। वैसे फ़ौज की नौकरी ही क्या, मैं तो कोई और नौकरी भी नहीं कर पाया। बस, मैं कुछ भी नहीं बन पाया!"

"हम ख़ूब जानते हैं कि आप क्या कुछ बन पाये हैं," एक मेहमान बोला, "यह कहना ज्यादा मुनासिब होगा कि अगर आप न होते तो जाने कितने ही लोग कुछ न बन पाते।"

"यह बड़ी फ़ज़ूल सी बात आपने कही है," इवान वसील्येविच ने सचमुच चिढ़कर कहा।

"ख़ैर, तो आपके प्रेम का क्या हुआ?" हमने पूछा।

"मेरा प्रेम? मेरे प्रेम को तो उसी दिन पाला मार गया। जब वह लड़की मुस्कराती हुई सोच में डूब जाती, जैसा कि अक्सर उसके साथ होता था, तो मैदान में खड़ा कर्नल मेरी आंखों के सामने आ जाता। मैं सकपका उठता और मेरा दिल बेचैन होने लगता। होते होते मैंने उससे मिलना छोड़ दिया और धीरे धीरे मेरा प्रेम मर गया। ऐसी ही बातें कभी कभी समूचे जीवन का रुख़ बदल देती हैं और आप हैं कि कहे जा रहे हैं कि जो कुछ करती हैं बस, परिस्थितियां ही करती हैं," उसने अन्त में कहा।

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिजाइन के बारे में आपके विचार जानकर आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। कृपया हमें इस पते पर लिखिये:

प्रगति प्रकाशन
२१, जूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।